आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के साहित्य में सांस्कृतिक विमर्श

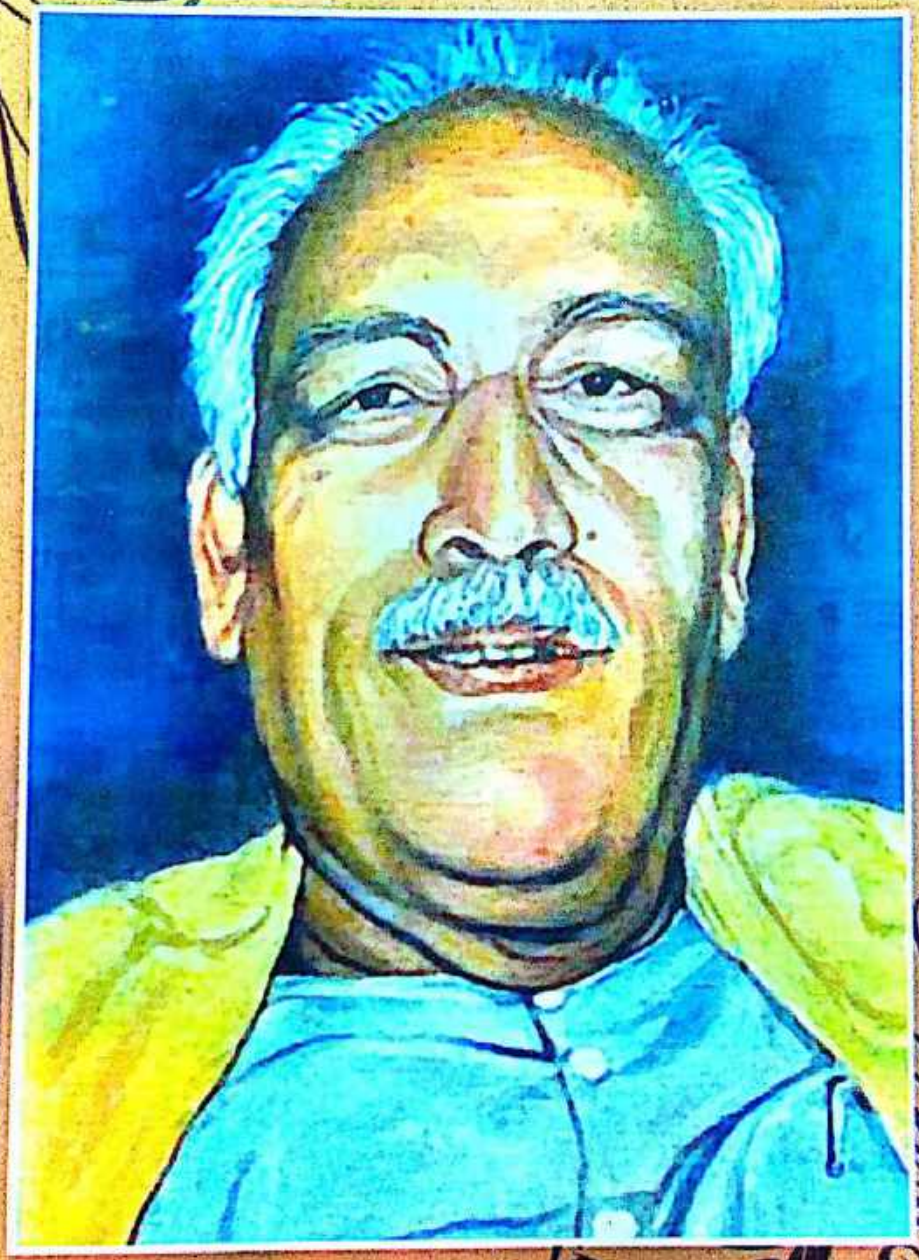

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा 11 वीं पंचवर्षीय योजना की
मेजर स्कीम के तहत प्रदत्त अनुदान से प्रकाशित

Scanned with CamScanner

जयती विश्वास

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के साहित्य में सांस्कृतिक विमर्श

संरक्षक
प्रो. माण्डवी सिंह
संपादक
प्रो. मृदुला शुक्ल, विभागाध्यक्ष–हिन्दी
सह–सम्पादक
डॉ. राजन यादव, प्रवाचक–हिन्दी विभाग
डॉ. देवमाईत मिंज, व्याख्याता–हिन्दी विभाग

प्रकाशक
इन्दिरा कला संगीत विश्वविद्यालय
खैरागढ़ –राजनॉदगॉव (छत्तीसगढ़)

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा 11 वीं पंचवर्षीय योजना की मर्ज्ड स्कीम के तहत प्रदत अनुदान से प्रकाशित

Scanned with CamScanner

सर्वाधिकार : प्रकाशनाधीन

प्रथम संस्करण : सन् 2012

ISBN :978-81-910545-3-8

मूल्य : रू.450/-

-: मुद्रक :-

छत्तीसगढ़ संवाद, रायपुर

Scanned with CamScanner

12.	द्विवेदीजी के उपन्यास की दृष्टि से रंगकर्म – डॉ. योगेन्द्र चौबे	84–86
13.	द्विवेदीजी का गद्य : सांस्कृतिक चिंतन की कसौटी पर – प्रो. रमाकान्त श्रीवास्तव	87–98
14.	हिन्दी की आलोचना–परम्परा और आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी का आलोचना–कर्म – प्रो. वीरेन्द्र मोहन	99–110
15.	आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी का आलोचनात्मक तथा अन्य लेखन : सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में – डॉ. बी. एन. जागृत	111–115
16.	आचार्य द्विवेदी कृत 'हिन्दी साहित्य की भूमिका' : सांस्कृतिक विमर्श का विशेष परिप्रेक्ष्य – डॉ. शैल शर्मा	116–125
17.	द्विवेदीजी के आलोचनात्मक लेखन में धर्म, दर्शन व योग – डॉ. कप्तान सिंह	126–130
18.	आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के साहित्य में ललित कला–विमर्श – प्रो. मृदुला शुक्ल	131–144
19.	द्विवेदीजी के आलोचनात्मक चिन्तन का सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य – प्रो. गोरेलाल चन्देल	145–153
20.	द्विवेदीजी का रचनागत सांस्कृतिक वैशिष्ट्य – प्रो. कामताप्रसाद त्रिपाठी	154–166
21.	द्विवेदीजी की काव्य–दृष्टि – शोधार्थी कु. प्राची महोबिया	167–172
22.	द्विवेदीजी की कहानियों में सामाजिक दायित्व–बोध – डॉ. काशीनाथ तिवारी	173–180
23.	आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के निबन्धों का भाषागत सौष्ठव – शोधार्थी जयती श्रीवास्तव	181–189
24.	संगोष्ठियों की प्रासंगिकता – प्रो. गीता पेन्टल	190–191
25.	द्विवेदीजी और उनका सृजन – श्री. ए. एन. राय	192–195

Scanned with CamScanner

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के निबन्धों का भाषागत सौष्ठव

शोधार्थी जयति श्रीवास्तव

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जी शुक्लोत्तर युग के सशक्त निबन्धकार हैं। इनकी ख्याति साहित्य जगत में मात्र निबन्धकार के रूप में ही नहीं है, बल्कि ये उपन्यासकार तथा समीक्षक के रूप में भी जाने जाते हैं। इनकी रचनाएँ साहित्यिक होने के साथ–साथ सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक आयामों को भी स्पर्श करती हैं। द्विवेदी साहित्य में एक ओर शास्त्रीय दृष्टि से कलात्मकता दिखाई पड़ती है तो दूसरी ओर मानवीय जीवन की व्यवहारिक सरलता की भी अनुभूति होती है। द्विवेदी जी ने अपने साहित्य को कभी भी जीवन से अलग करके नहीं देखा। अतः इनके साहित्य में सांस्कृतिक प्रगतिशीलता और परिवर्तनशीलता की झलक भी प्रतिबिम्बित होती है। एक स्थान पर वे स्वयं लिखते हैं – "मनुष्य की जीवन–शक्ति बड़ी निर्भय है वह सभ्यता और संस्कृति के व्यथा मोहों को रौंदती चली आ रही है – देश और जाति की विशुद्ध संस्कृति केवल बात ही बात है, शुद्ध है केवल मनुष्य की जिजीविषा। वह गंगा की अबाधित धारा के समान सब कुछ हजम करने के बाद भी पवित्र है।"[1]

आचार्य द्विवेदी के भाषा सौष्ठव विषय पर विचार करने से पूर्व उसके पीछे ध्वनित लालित्य शब्द का अभिप्राय जानना अपेक्षित है। सामान्यतः लालित्य का तात्पर्य सौन्दर्य से लगाया जाता है तथा सौन्दर्य का तात्पर्य मन को आनंदित करने की क्षमता से लगाया जाता है, परन्तु वास्तव में सौन्दर्य और लालित्य में अंतर है। सौन्दर्य

Scanned with CamScanner

प्राकृतिक और नैसर्गिक माना जाता है परन्तु लालित्य मनुष्य निर्मित सौन्दर्य को कह सकते हैं। अतः प्राकृतिक और मानव निर्मित सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के लिये ही दो अलग-अलग शब्दों का चयन किया गया है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने स्पष्टतः मनुष्य निर्मित सौन्दर्य को लालित्य की संज्ञा प्रदान की है। उन्होंने दोनों का अंतर प्रस्तुत करते हुए कहा है कि एक प्राकृतिक सौन्दर्य दूसरी मानवीय इच्छाशक्ति का विलास है दूसरा सौन्दर्य प्रथम द्वारा चालित होता है पर है मनुष्य के अन्तरतम की अपरा इच्छा को रूप देने का प्रयास। एक केवल अनुभूति देकर विरत हो जाता है, दूसरा अनुभूति द्वारा अभिव्यक्त होकर अनभूति परम्परा का निर्माण करता है। "भाषा में, धर्माचरण में, काव्य में, मूर्ति में, चित्र में अभिव्यक्त मानवीय शक्ति का अनुपम विलास ही वह सौन्दर्य है, जिसकी हम मीमांसा करने का संकल्प लेकर चले हैं। अन्य किसी उचित शब्द के अभाव में हम उसे लालित्य कहेंगे। लालित्य अर्थात् प्राकृतिक सौन्दर्य से भिन्न किन्तु समानान्तर चलने वाला मानव रचित सौन्दर्य है।"[2]

भाषा विचार-विनिमय का सशक्त माध्यम होती है, जो ध्वनि संकेतों के माध्यम से वक्ता द्वारा श्रोता तक पहुँचते हैं। वक्ता अपनी अनुभूतियों की अभिव्यक्ति के लिये भाषा को अधिक से अधिक सम्प्रेषणीय बनाने की कोशिश करते हैं। जिसकी अभिव्यक्ति सहज और सशक्त होगी, वह वक्ता अच्छा वक्ता कहलाता है। साहित्य की रचना मे भाषा का विशिष्ट स्थान है। साहित्यिक रचना के लिये भाव को आत्मा तथा भाषा को शरीर की संज्ञा से सुशोभित किया गया है। अतः साहित्यकार को अपने भावों और विचारों की अभिव्यक्ति के लिये उचित भाषा का चयन करने की अत्यंत आवश्यकता होती

है। साहित्यकारों की भाषा जितनी सशक्त, सही और सचेतन होगी, उनकी कृति उतनी ही शाश्वत मूल्यों को धारण करने में सक्षम होगी तथा सामाजिक दृष्टि से महत्वपूर्ण होगी।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी भाषा के लालित्य के विषय में विचार प्रस्तुत करते हैं कि भाषा व्यक्तियों द्वारा प्रयुक्त ध्वनि संकेतों का एक समूह है तथा ये संकेत परम्परा और वातावरण के संयोग से धीरे-धीरे सामाजिक परिवेश में विकसित होते हैं। किन्तु भाषा केवल संकेत और प्रतीकों का समुदाय ही नहीं, बल्कि आत्माभिव्यक्ति का पर्याय भी है। द्विवेदी जी भाषा के कुशल शिल्पी हैं तथा अनेक भाषाओं के प्रयोग में कुशल हैं। उनके भाषा सम्बन्धी लालित्य के विषय में विद्वान कहते हैं -"द्विवेदी जी अपनी रचनाओं की सामग्री के लिये सृष्टि का हर कोना झांक आये हैं। जहाँ वे आवश्यकतानुसार वस्तु सापेक्ष भाषा का चयन करते हैं, वहीं उनकी अपनी चेतना भी मूर्तिमान है। उनका सरल-अल्हड़ व्यक्तित्व, उनकी भाषा में उसी रूप में प्रकाशित हो उठा है। द्विवेदी जी पात्रों, भावों या विचारों के अनुकूल इतने आकस्मिक ढंग से भाषा परिवर्तित कर देते हैं कि पाठक चकित रह जाता है। यह परिवर्तन भाव की सम्प्रेषणीयता में बाधक न बनकर साधक ही बनता है। तत्सम शब्दावली से बोझिल भाषा से एकाएक वे इस सहज भाषा का प्रयोग कर पाठक का ध्यान तुरंत रचना में केन्द्रित कर देते हैं। इस परिवर्तन से जहाँ सरलता बढ़ती है, वहीं गूढ़ भावों को समझने में मदद मिलती है और आगे आने वाले विलष्ट भावों को समझने का रस पाठक यहीं संयोजित कर लेता है। इस प्रकार द्विवेदी जी एक ऐसे रचनाकार हैं ,जिनमें भाषा सर्जना के सभी गुण विद्यमान है।"[3]

Scanned with CamScanner

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी एक प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकार रहे हैं। उनकी अन्य कृतियों की तरह निबन्धों में भी भाषा का लालित्य सहज रूप में दिखायी पड़ता है। इनके निबन्धों में भाषा का लालित्य अनेक सोपानों में प्रस्तुत है। भारतीय संस्कृति में स्वतंत्रता शब्द की व्याख्या करते हुए इन्होंने भाव साम्य के अंतर्गत अनेक शब्दों का लालित्यपूर्ण चयन किया है साथ ही अंग्रेजी शब्द 'इंडिपेण्डेंस' को भी सहजता के साथ स्पष्ट किया है– "मैं कभी–कभी सोचता हूँ कि इतने दिनो तक अंग्रेजी अनुवर्तिता करने के बाद भी भारतवर्ष इंडिपेण्डेंस को अनाधीनता क्यों नहीं कह सका? उसने अपनी आजादी के जितने भी नामकरण किये– स्वतंत्रता, स्वराज्य, स्वाधीनता उन सब में स्व का बन्धन अवश्य रखा। यह क्या संयोग की बात है या हमारे समूची परम्परा ही अनजान में, हमारी भाषा के द्वारा प्रकट होती रही है? मुझे प्राणी विज्ञानी की बात फिर याद आती है –सहजातवृत्ति अनजानी स्मृतियों का ही नाम है।"[4]

'नाखून क्यों बढ़ते हैं' नामक निबन्ध द्विवेदी जी का एक ललित निबन्ध होने के साथ–साथ विचारात्मक निबन्ध भी है, जिसमें उन्होंने नाखूनों को असभ्यता का प्रतीक मानकर मानव मन में उसकी छाप की उपस्थिति को प्रस्तुत किया है। "नखधर मनुष्य अब ऐटम बम पर भरोसा करके आगे की ओर चल पड़ा है। पर उसके नाखून अब भी बढ़ रहे हैं। अब भी प्रकृति मनुष्य को उसके भीतर वाले अस्त्र से वंचित कर रही है, अब भी वह याद दिला देती है कि तुम्हारे नाखूनों को भुलाया नहीं जा सकता। तुम वही लाख वर्ष पहले के नख–दंतावलम्बी जीव हो, पशु के समान एक ही सतह पर विचरने वाले और चरने वाले।"[5]

'मनुष्य ही साहित्य का लक्ष्य है' निबन्ध में उनके भाषा–सौष्ठव की सहज गतिशीलता दृष्टव्य है – "स्वार्थ तो सब में होता है। पशु में भी मनुष्य में भी। जहाँ तक स्वार्थ का सम्बन्ध है मनुष्य पशु ही तो है। अगर पशु कहना कुछ कड़ा मालूम होता है तो उसे 'बड़ा पशु' कहिये। पशु का स्वार्थ छोटा होता है और मनुष्य का स्वार्थ बड़ा। नहीं तो क्या उन आदमीनुमा लोगों को मनुष्य ही कहेंगे, जो पेट पालने के लिये, स्वार्थगर्जी के लिये झूठ बोलते हैं, दगा करते हैं, दूसरों का अहित करते हैं और जाने क्या–क्या करते हैं? जो और भी बड़े स्वार्थ होते हैं। ये पैसे के बल पर भी कभी अन्ध जनता को पैसे की शराब पिलाकर उन्हें मतवाला करते हैं और निरीहों के रक्त शोषण का औजार बना लेते हैं। कुछ बुद्धि के बल पर उन्हें धार्मिक ढोंग का नशा पिलाकर लोगों को जलील करते है, देश का देश तबाह करा देते हैं। कुछ अधिकार का मद पिलाकर गरीबों की पसलियाँ दुह लेते हैं। क्या इन आदमियों को भी आप आदमी कहते हैं? नशा सेवन करना पाप है, उसके सेवन का साधन बनना और भी बड़ा पाप है, पर उस पाप की तो कोई तुलना ही नहीं, जिसमें नशे को नशा न कहकर उसके असली तत्व को छिपाकर और अच्छा नाम देकर सेवन कराया जाता है।"[6]

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की भाषा में काव्यात्मकता के भी दर्शन होते हैं। आचार्य द्विवेदी वास्तव में हृदय से कवि थे। काव्य कवि की वह कृति होती है जिसमें पाठक और श्रोता को अलौकिक आनंद की प्राप्ति होती है। किसी कृति को काव्य की संज्ञा प्रदान करने के लिये उसमें रस, अलंकार, गुण, रीति, वक्रोक्ति आदि का समावेश आवश्यक माना जाता है। आचार्य द्विवेदी के निबन्धों में काव्य के ये तत्व भी विद्यमान हैं। उनके वैयक्तिक निबन्ध 'रे कवि

Scanned with CamScanner

एक बार संभल' शीर्षक में वे पूर्णतः काव्यात्मक हैं। "मन में रमे हैं पूर्व युग के स्वर्ण मणिमय शोध, मरकतखचित क्रीड़ा शैल, लाक्षा ललित कुट्टिम भूमि, कंकण मुग्ध नवल मयूर, सित गजदंतनीयशायि विपंचिका, कुवलय मनोहर नयन, बाल मराल मंथर गमन, कंकण –किंकणि का क्वणन, मृदुता, चारूता, शालीनता का अति अपूर्व विधान, – आंखें देखती हैं, ठठरियों के ठाठ, चिथड़ों के घृणास्पद ढूह, गंदे रेंगते शव से ठिठुरते प्राण, रूग्ण–विशीर्ण भद्दी कांति, मैं हूँ स्वयं निज प्रतिवाद, करती है हृदय में भाव धाराएँ सुखाती हैं परस्पर को, कि मैं बन गया धोबी के जुगप्सित जन्तु–सा घर घाट से विच्छिन्न, मैं हूँ उभयतो विभ्रष्ट, अधर कलंक, रंक बिशंकु ।"'

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के निबन्धों में ओजगुण, माधुर्य गुण और प्रसाद गुण के समुचित प्रयोग के विषय में लेखिका कविता रानी लिखती हैं–"सामान्यतः प्रसाद गुण उनकी विशेषता है।"

उनके साहित्यिक, सांस्कृतिक तथा महान विभूतियों से संबंधित निबन्ध प्रसाद गुण प्रधान हैं। एक उदाहरण दृष्टव्य है – "इन दिनों साहित्य की सबसे नई प्रवृत्ति प्रगतिवाद की है। प्रगतिवाद वैसे तो सामान्य शब्द है और जिस किसी आगे बढ़ने वाली प्रवृत्ति को इस नाम से पुकारा जा सकता है। किन्तु फिर भी इसका प्रयोग एक निश्चित अर्थ में होने लगा है। प्रगतिवादी साहित्य मार्क्स से प्रचारित तत्व दर्शन पर आधारित है।"

आचार्य द्विवेदी मानव जिजीविषा के गायक हैं, इसलिये उनके निबन्धों में माधुर्य गुण का प्रयोग कम ही किया गया है। कहीं–कहीं उन्होंने माधुर्य गुण के द्वारा अपनी भावनाओं को चित्रित किया है। 'अशोक के फूल में कामदेव के धनुष के टूटकर गिरने में माधुर्य गुण ही व्यंजित हुआ है – "जहाँ मूठ थी, वह स्थान रूक्म–मणि से बना

था वह टूटकर धरती पर गिरा और चम्पे का फूल बन गया। हीरे का बना हुआ जो नाह–स्थान था वह टूटकर गिरा और मौलसरी के मनोहर पुष्पों में बदल गया! अच्छा ही हुआ इन्द्र नीलमणियों का बना हुआ कोटि देश भी टूट गया और सुन्दर पाटल–पुष्पों में परिवर्तित हो गया। यह बुरा नहीं हुआ। लेकिन सबसे सुन्दर बात यह हुई कि चन्द्रकान्त–मणियों का बना हुआ मध्य देश टूटकर चमेली बन गया और विद्रुम की बनी निम्नतर कोटि बेला बन गयी, स्वर्ग को जीतने वाला कठोर धनुष जो धरती पर गिरा तो कोमल फूलों मे बदल गया। स्वर्गीय वस्तुएँ धरती से मिले बिना मनोहर नहीं होती।"

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी मानव कल्याण, जिजीविषा के गायक हैं, इसलिये वे ओजगुण प्रधान भाषा का प्रयोग करते हैं। उनके अनेक निबन्धों में मानव की दुर्गम जिजीविषा का वर्णन है। 'बोलो, काव्य के मर्मज्ञ' निबन्ध एक काव्यात्मक निबन्ध है। वे क्रान्ति और छिन्नमस्ता का आह्वान करते हुए इसमें कहते हैं – "क्रान्ति आवे और कर दे चूर इन उन्मत्त रणबांके जवानों की नशीली खोपड़ी को, जाग उठ्ठे छिन्नमस्ता शक्ति ले दैवत्व का हथियार, कुछ सौन्दर्य का मदधार, कुछ माधुर्य पारावार, कुछ मातृत्व का वरदान हो, अवतार इस अद्भुत छबीली ज्योति का, जिसके वदन के तेज से झुलसे अहमिका और महिष समान निर्धन, क्रूर, वन्य, नरत्व, मदमाते पिशाचों का, जगत हो शांत, हो निर्भ्रान्त, नारी का अमर वरदान जागे।"[8]

भाषा की उचित संरचना साहित्य सृजन का महत्वपूर्ण कारक होती है। इसके अंतर्गत शब्द, वाक्य, सूक्ति, लोकोक्ति, मुहावरे आदि भाषिक इकाईयाँ आती है। आचार्य द्विवेदी अपने भावों की

Scanned with CamScanner

अभिव्यक्ति के लिये इन सब का यथोचित प्रयोग करने में भी सिद्धहस्त हैं। भाषा के इस प्रकार के लाक्षणिक प्रयोग अर्थ गांभीर्य की दृष्टि से अत्यंत लालित्य पूर्ण हैं। 'मनुष्य ही साहित्य का लक्ष्य है' निबन्ध का प्रस्तुत अंश दृष्टव्य है – "इधर कुछ ऐसी हवा बही है कि हर सस्ती चीज को साहित्य का वाहन माना जाने लगा है। इस प्रवृत्ति को वास्तविकता के गलत नाम से पुकारा जाने लगा है। तरह–तरह की दलील देकर यह बताने का प्रयत्न किया जा रहा है कि मनुष्य की लालसोन्मुख वृत्तियाँ ही साहित्य के उपयुक्त वाहन हैं। मुझे किसी मनोरोग के विपक्ष में या पक्ष में कुछ नहीं कहना है। मुझे सिर्फ इतना कहना है कि साहित्य के उत्कर्ष या अपकर्ष के निर्णय की एकमात्र कसौटी यही हो सकती है कि वह मनुष्य का हित साधन करता है या नहीं। जिस बात के कहने से मनुष्य पशु सामान्य धरातल के ऊपर नहीं उठता वह त्याज्य है मैं उसी को सस्ती चीज कहता हूँ। सस्ती इसलिये कि उसके लिये किसी प्रकार के संयम या तप की जरूरत नहीं होती। धूल में लोटना बहुत आसान है परन्तु धूल में लोटने से संसार का बड़ा उपकार नहीं होता और न किसी प्रकार के मानसिक संयम का अभ्यास ही आवश्यक है।"[9]

इस प्रकार द्विवेदी जी के निबन्धों में भाषा लालित्य के अनेक स्वरूप दृष्टिगोचर होते हैं। अपने तथ्य की अभिव्यक्ति को द्विवेदी जी अपने निबन्धों में जीवन्तता के साथ प्रस्तुत करके कृति को मूल्यवान बनाने में अप्रतिम हैं और इसके लिये वे भाषा का यथोचित प्रयोग करने में भी सिद्धहस्त हैं।

सन्दर्भ संकेत –

1. शुक्लोत्तर निबंध संकलन संपादक डॉ.मेघनाथ कन्नौजे, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल, 1987 उपक्रम पृ. 24

2. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के साहित्य में लालित्य योजना – डॉ. कविता रानी, भावना प्रकाशन दिल्ली, 1990, पृ.30
3. शुक्लोत्तर निबंध संकलन संपादक डॉ. मेघनाथ कन्नौजे, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल, 1987 उपक्रम पृ. 27
4. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रन्थावली भाग –10, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली 1981 पृ. 22
5. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रन्थावली भाग –09, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली 1981 पृ. 234
6. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के साहित्य में लालित्य योजना – डॉ. कविता रानी, भावना प्रकाशन दिल्ली, 1990, पृ.79
7. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रन्थावली भाग –10, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली 1981 पृ. 31

हिन्दी विभाग,
इं.क.सं.वि.वि.,खैरागढ
जिला–राजनांदगांव (छ.ग.)

" महामाया जिन्हें म्लेच्छ कह रही हैं, वे भी मनुष्य है। भेद इतना ही है कि उनमें सामाजिक ऊँच–नीच का भेद नहीं है। जहाँ भारतवर्ष के समाज में एक सहस्र स्तर हैं, वहाँ उनके समाजों में कठिनाई से दो–तीन होंगे। बहुत कुछ इन आभीरों के समान समझो। भारतवर्ष में जो ऊँचे है, वे बहुत ऊँचे हैं, जो नीचे हैं, उनकी नीचाई का कोई आर–पार नहीं। परंतु उनमें सब समान हैं। उनकी स्त्रियों में रानी से लेकर परिचायिका तक के और गणिका से लेकर वारविलासिनी तक सैकड़ों भेद नहीं है।"

('बानभट्ट की आत्मकथा' से)

Scanned with CamScanner

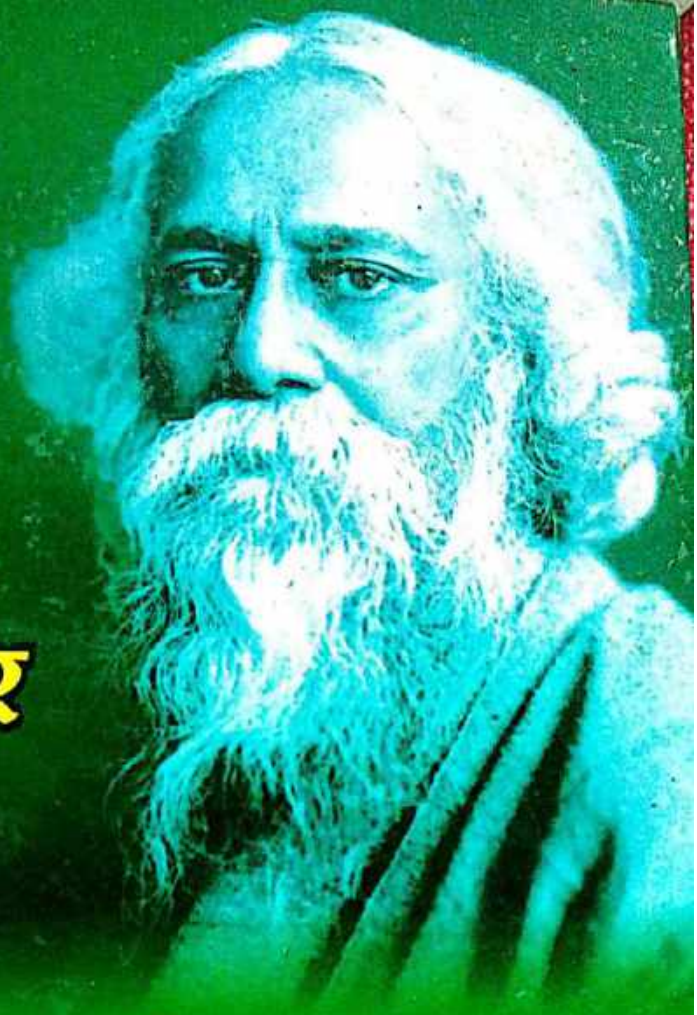

हिन्दी छायावाद और रवीन्द्रनाथ टैगोर

हिंदी विभाग
इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़

Scanned with CamScanner

हिन्दी छायावाद और रवीन्द्रनाथ टैगोर

संरक्षक

प्रो. माण्डवी सिंह

संपादकद्वय

प्रो. राजन यादव, प्राध्यापक
डॉ. देवमाईत मिंज, सहायक प्राध्यापक
हिन्दी विभाग

सदस्य, संपादक–मंडल

डॉ. निकेता सिंह, डॉ. आलम शेख, श्री बी. रघु
शोधार्थी–हिन्दी विभाग

प्रकाशक

इन्दिरा कला संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़ (छ.ग.)
(नेक द्वारा प्रत्यायित 'A' ग्रेड विश्वविद्यालय)

Scanned with CamScanner

सर्वाधिकार : प्रकाशनाधीन

प्रथम संस्करण : 2017

ISBN : 978-81-910545-7-6

मूल्य : रु. 1000/–

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की 12वीं पंचवर्षीय योजना के अनुदान से प्रकाशित

–: मुद्रक :–

छत्तीसगढ़ संवाद, रायपुर

Scanned with CamScanner

26-Rabindranath Taigore : The genius of creativity 187–191
– डॉ. कुलीन कुमार जोशी
27-Interpretation of woman in novel of Rabindranath taigore – डॉ. संध्या यादव 192–195
28-Contribution of Rabindranath Taigore in Indian art 196–200
– डॉ. अदिन भट्टाचार्य
29. सामाजिक पुनर्जागरण और रवीन्द्रनाथ टैगोर : 'विसर्जन' नाटक के विशेष संदर्भ में – मकसूद अहमद 201–206
30. रवीन्द्रनाथ की कविता के विशिष्ट आयाम – श्रीमती सीमारानी प्रधान 207–211

खण्ड – चार

छायावादी काव्य और रवीन्द्रनाथ टैगोर की सृजनात्मकता

31. रवीन्द्रनाथ टैगोर की सृजनात्मकता के परिप्रेक्ष्य में छायावादी कविता– प्रो. दामोदर मिश्र 213–223
32. रवीन्द्रनाथ टैगोर की सृजनात्मकता और छायावादी काव्य – डॉ. बी. एन. जागृत 224–238
33. छायावाद और कवीन्द्र रवीन्द्र (भाव जगत का साम्य) – डॉ. तारणीश गौतम 239–244
34. हिन्दी के प्रमुख छायावादी कवियों के काव्य पर रवीन्द्रनाथ टैगोर का प्रभाव – आशीष कुमार गुप्ता 245–249
35. महाकवि सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला पर विश्व कविगुरु टैगोर का प्रभाव– डॉ. राजकुमार उपाध्याय 250–261
36. कवीन्द्र रवीन्द्र एवं छायावादी कवि–चतुष्टयी का भाषा सौष्ठव – प्रो. मृदुला शुक्ल 262–277
37. टैगोर के स्वच्छन्दतावादी दर्शन का निराला के दर्शन पर प्रभाव – डॉ. पूर्णिमा केलकर 278–282
38. रवीन्द्रनाथ टैगोर की कहानियाँ और छायावादी रचनाभूमि – डॉ. इला द्विवेदी 283–287
39. रवीन्द्रनाथ टैगोर की औपन्यासिक कला के परिप्रेक्ष्य में निराला जी की उपन्यास कला – डॉ. जयति बिस्वास 288–293

Scanned with CamScanner

रवीन्द्रनाथ टैगोर की औपन्यासिक कला के परिप्रेक्ष्य में निरालाजी की उपन्यास कला

(टैगोर कृत 'उपवन', 'बड़े चाचाजी' तथा निराला की कृति 'अप्सरा' और 'अलका' के संदर्भ में)

डॉ. जयति विश्वास

छायावादी काव्य हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि है। यह काव्यधारा जहाँ अपनी मानवतावादी दृष्टिकोण, प्रकृति प्रेम, प्रकृति का मानवीकरण, आध्यात्मिकता, रहस्यात्मकता आदि अनेकानेक भावात्मक विशेषताओं के कारण सदैव सहृदयों को आनंद प्रदान करती रही है। वही इसकी कलात्मक क्षमता भी पाठकों के हृदय में रागात्मक अनुभूति का संचार करते हैं।

विश्व कवि टैगोर और निराला जी दोनों की जन्मभूमि पश्चिम बंगाल थी, अतः निराला जी को टैगोर जी के बांग्ला साहित्य की मूलकृतियों का रसास्वादन करने का सौभाग्य सहज ही प्राप्त हुआ, जिससे टैगोर जी की कृतित्व का प्रभाव निराला जी के कृतित्व पर पड़ना स्वाभाविक था। टैगोर जी की औपन्यासिक कला का प्रभाव निराला जी की औपन्यासिक कला पर जैसा पड़ा उसे स्पष्ट करने के लिए उपर्युक्त उपन्यासों का सारांश अपेक्षित है।

गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर कृत 'उपवन' प्रेम त्रिकोण पर आधारित एक लघु मार्मिक उपन्यास है। इस उपन्यास में लेखक ने पति–पत्नी आदित्य और नीरजा के दाम्पत्य जीवन के साथ आदित्य के विवाह पूर्व प्रेम संबंध को भी स्थान दिया है। आदित्य और नीरजा 'उपवन' के माध्यम से फूलों की कृषि कर जीवकोपार्जन करते हैं, नीरजा की अस्वस्थता में नीरजा की सहमति पर ही आदित्य सरला को नीरजा और 'उपवन' की देखभाल के लिए घर बुला लेता है, किन्तु सब प्रकार से समर्पित सरला के किसी भी कार्य से नीरजा संतुष्ट नही हो पाती, वह न ही 'उपवन' में और न ही जीवन में सरला को शामिल कर पाती है। समय के प्रवाह में नीरजा संतान सुख प्राप्त नही कर पाती, प्रथम प्रसव में मृत शिशु का जन्म लेना उसे निराशा के समुद में डुबो देता है, वह इस पीड़ा से नहीं उबर पाती। नीरजा अपनी मृत्यु को करीब देखकर सरला आदित्य को सौंपना चाहती है, किन्तु वह ऐसा नहीं कर पाती। वह अपने जीवन रूपी उपवन में चाहकर भी किसी अन्य की साझेदारी नहीं कर पाती। यहाँ लेखक ने एक भारतीय नारी के पतिव्रत

र्म का उद्घाटन किया है। साथ ही सरला के माध्यम से आदर्श प्रेम को भी प्रतिष्ठित या है। सरला अपने व्यक्तिगत प्रेम को न पाकर राष्ट्रसेवा को स्वीकार कर अपने जीवन ो सार्थक करती है।

'बड़े चाचाजी' टैगोर कृत एक सामाजिक चेतना संपन्न कृति है। इस कृति में ड़े चाचाजी जगमोहन अपने भतीजे शचीश को जात–पात, छुआछूत के साथ–साथ म्प्रदायिक भेदभाव से उबारकर मानवता की शिक्षा देते हैं, वे अपने घर में चमारों और ुसलमानों को भोजन कराते हैं, प्लेग की महामारी में इनके लिए अस्पताल खुलवाते हैं, सी प्लेग के संक्रमण से वे इस दुनिया से विदा भी हो जाते हैं। चाचा–भतीजा दोनों ही माज में नास्तिक के नाम से चर्चित हैं। चाचाजी के न रहने पर शचीश स्वयं ही ामाजिक उत्तरदायित्वों से हटकर लीलानंद स्वामी का शिष्य बन जाता है। शचीश का मित्र श्रीविलास इस परिवर्तन का कारण जानना चाहते हैं। शचीश उत्तर देते हुए कहता ै–"यह तो तट के ऊपर की मुक्ति थी, उसी समय कार्यक्षेत्र में बड़े चाचा ने मेरे हाथ ार सबल कर दिये थे। और यह तो रस का समुद है, यहाँ तो नाव का बंध नहीं मुक्ति ा मार्ग है।"[1] अतः प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने सामाजिक कर्त्तव्य निर्वाह के साथ–साथ यक्तिगत स्वतंत्रता को भी महत्व दिया है।

'अप्सरा' निराला जी की नारी प्रधान औपन्यासिक कृति है। इस उपन्यास में एक ेश्या कन्या कनक मंच पर कालीदास कृत– 'अभिज्ञान–शाकुन्तलम्' में शाकुन्तला का भिनय करती हुई दुष्यंत का पात्र निभा रहे एक देश प्रेमी युवक राजकुमार से गंधर्व िवाह का अभिनय करती है, इसी गंधर्वविवाह को वह वास्तविक विवाह मानकर राजकुमार को पति रूप में स्वीकार कर एकनिष्ठ प्रेम करती है। अंततः राजकुमार द्वारा वेश्या कन्या को स्वीकार कर लिया जाता है। राजकुमार के द्वारा वेश्या कन्या को स्वीकारे जाने का यह दृश्य लेखक के क्रांतिकारी दृष्टिकोण का उद्घाटन है, साथ ही उनकी समाज में नारी जीवन की सुरक्षा की कामना भी दिखाई पड़ती है।

निराला कृत 'अलका' भी नारी जीवन की विसंगतियों को अभिव्यक्त करने वाली मार्मिक कृति है। इस कृति में शोभा नामक बालिका दुर्भाग्यवश अनेक परेशानियों से जूझती हुई स्वयं की अस्मिता को बचाए रखने का प्रयास करती है। गरीबी में भी देश सेवा के प्रण के साथ अपनी विजय अपना नाम प्रभाकर रखकर बाल परिणिता शोभा को ढूँढने का प्रयास करता है। सुरक्षा की दृष्टि से शोभा का भी नाम बदलकर अलका रख दिया जाता हैं। विजय को शोभा भले ही नही मिलती किन्तु प्रभाकर को अल्का मिल जाती है। अतः इस कृति की समाप्ति सुखद और आश्चर्य मिश्रित है।

Scanned with CamScanner

इन कृतियों में 'बड़े चाचाजी', 'अप्सरा' और 'अलका' के माध्यम से दोनों ही साहित्यकारों, ने नायकों के द्वारा राष्ट्रभक्ति के स्वर को मुखरित किया है। ये नायक अपने व्यक्तिगत सुख-दुख, आवश्यकताओं और भावनाओं को साथ-साथ राष्ट्र कल्याण की भावना से अनुप्राणित हैं। बड़े चाचाजी अंग्रेजी भाषा के विद्वान हैं, उन्हें कुछ लोग बंगाल का मैकाले तथा कुछ लोग बंगाल का जानसन मानते हैं। राष्ट्र में व्याप्त छुआछूत और साम्प्रदायिक भावना को वे हृदय से महसूस करते हैं और उसे दूर करने का प्रयास करते हैं। वे अपने घर चमारों और मुसलमानों के लिए भोज आयोजित करते हैं। जब उनके छोटे भाई इस विषय में आपत्ति करते हैं, तो वे कहते हैं- "ये चमार, मुसलमान मेरे देवता हैं। इनकी एक आश्चर्य जनक शक्ति तुम देख सको तो देख लोगे कि इनके सामने भोग की सामग्री रखने पर ये अनायास ही उसे हाथों से उठाकर खा जाएँगे। तुम्हारे देवताओं में से एक भी ऐसा नहीं कर सकता । मैं इस आश्चर्यजनक रहस्य को देखना पसन्द करता हूँ। इसलिए अपने देवता को अपने घर बुलाया है-देवता के पहचानने में तुम्हारी आँखें यदि अन्धी न होती तो तुम खुश होते।"[2]

निराला कृत 'अप्सरा' में राजकुमार की राष्ट्रभक्ति इन शब्दों में अभिव्यक्त होती है-"साहित्य तथा देश की सेवा के लिए वह आत्म-समर्पण कर चुका था।"[3] इसी देश सेवा के परिणामस्वरूप उसे एक साल की सख्त कैद की सजा सुनाई जाती है। 'अलका' में अलका के पति विजय राष्ट्रभक्ति के लिए यह निश्चय करते हैं-"नौकरी नहीं करनी, किताब पढ़कर समझने लायक लियाकत हो ही गयी है ईश्वर ने रास्ता भी साफ कर दिया। अब तो तमाम भारतवर्ष अपना मकान है। उसी के लिए जो कुछ होगा करूँगा। जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।"[4]

वेदना और करुणा की अभिव्यक्ति छायावादी काव्य की प्रमुख विशेषताएँ हैं। इन उपन्यासकारों ने अपनी इन कृतियों में नारी जीवन की वेदना की अत्यंत मार्मिक अभिव्यक्ति दी है-उपवन की नायिका सरला अपने प्रारंभिक जीवन में चाचा के घर संरक्षण प्राप्त करती है, तत्पश्चात नायक आदित्य के घर में परिचारिका की तरह जीवन व्यतीत करती है। नीरजा सरला से कभी संतुष्ट नहीं रह पाती वह उसे झिड़कते हुए एक स्थान पर कहती है-"तुम मेरी सारी मेहनत को चौपट कर डालोगी। तुम्हें आता-जाता तो कुछ है नहीं मगर हर काम को करने के लिए तैयार हो जाती हो।"

बड़े चाचाजी की एक नर्सी पात्र ननी को एक दुष्ट पात्र के द्वारा शील हनन करके छोड़ दिया जाता है, इस दुर्घटना से आहत होकर ननी आत्महत्या कर लेती है। दामिनी अपने पति के मरणोपरांत पति के गुरु के पास संरक्षण प्राप्त करती है। 'अलका'

में नायिका माता-पिता के मरणोपरांत अनेकानेक समस्याओं का सामना करती हुई पति के विजय की राह देखती है।

इन कृतियों में शृंगार रस के संयोग व वियोग दोनों ही पक्षों का समावेश स्वाभाविक रूप से किया गया है, जो नायक-नायिकाओं के उदात्त गुणों को उद्घाटित करते हैं। 'उपवन' में सरला और आदित्य एक-दूसरे को हृदय की गहराईयों से पसंद करते हैं, किन्तु आदित्य का विवाह नीरजा से हो जाने पर सरला अपने आपको देश सेवा के लिए तैयार कर लेती है, किन्तु नीरजा का स्वास्थ्य बिगड़ने पर आदित्य के घर जाकर घर गृहस्थी और उपवन को बड़ी उदारता से स्वीकार कर लेती है। एक बार पुनः सरला और आदित्य एक होना चाहते हैं, किन्तु नीरजा इस रिश्ते को घाइकर भी स्वीकार नहीं कर पाती। वह अपने अंत समय में सरला से कहती है-"तेरे लिए यहाँ जगह नहीं है, यहाँ तो मैं ही रहूँगी केवल मैं, भाग यहाँ से।"[5] इस तरह सरला कभी भी आदित्य की जीवन संगिनी नहीं बन पाती।

'बड़े चाचाजी' उपन्यास में शचीश अपने भाई के दुष्कृत्य का परिणाम झेल रही ननी को पत्नी के रूप में स्वीकार कर अपनी उदारता का परिचय देता है, किन्तु ननी इस रिश्ते को स्वीकार नहीं कर पाती और आत्महत्या कर लेती है। श्री विलास अपने गुरु भाई की विधवा दामिनी के साथ परिणय-सूत्र में बँधकर उसे सुरक्षित जीवन प्रदान करते हैं। अप्सरा में एक वेश्या अपनी पुत्री को किसी से प्रेम न करने की शिक्षा देती है। किन्तु वेश्या पुत्री कनक शकुन्तला के रूप में दुष्यंत का वरण कर अभिनय कर रहे राजकुमार नामक व्यक्ति को पति मानकर एक निष्ठ पतिव्रत धर्म का पालन करती है। राजकुमार भी वेश्या पुत्री को हृदय की साम्राज्ञी बनाकर ससम्मान पत्नी रूप में स्वीकार करता है। अतः यही यह बात स्पष्टतः दिखाई पड़ती है, कि टैगोर जी का नारीवर्ग के प्रति जिस प्रकार उदार दृष्टिकोण था, वही दृष्टिकोण निराला जी का भी था। ये साहित्यकार नारियों की कोमल भावनाओं की अनुभूति के साथ-साथ उनके सुरक्षित भविष्य के प्रति भी प्रयत्नशील थे। इसलिए इनके नारी पात्र समाज के जिस भी दलदल में फँसे हों उन्हें उबारना ये अपना परम कर्तव्य समझते थे।

'अलका' में अलका अपने अनदेखे पति की तलाश में प्रयत्नशील होने के बावजूद सामाजिक कार्यों के माध्यम से राष्ट्र की भक्ति करती दिखाई देती है। पति विजय भी पत्नी की तलाश के साथ-साथ स्वतंत्रता के लिए शहरी व ग्रामीण जनता को जागृत करने का कार्य करते हैं। अंततः पति-पत्नी मिलन का अलौकिक आनंद प्राप्त कर

Scanned with CamScanner

खुशहाल जीवन यापन करते है। अतः यह कहा जा सकता है कि इन साहित्यकारों के हृदय में प्रेम की उत्कृष्ट भावना थी।

शिक्षा के बिना समाज व राष्ट्र कल्याण की बातें करना बालू में इमारत बनाने जैसा असंभव कार्य है। इन कवियों ने अपनी औपन्यासिक कृतियों में पिछड़े वर्ग तथा नारी शिक्षा के लिए अनेक कार्य पात्रों के माध्यम से करवाऐं। कहीं तो पाठशालाएँ खोली गई, तो कहीं पर नायक–नायिका स्वयं विद्यार्थियों तक पहुँचकर ज्ञान का अलख जगाने की कोशिश करते हैं। इस भावना को हम छायावाद का सौन्दर्य कह सकते हैं।

'बड़े चाचाजी' में "जगमोहन ने शचीश की पढ़ाई का भार अपने ही ऊपर ले लिया था। अंग्रेजी भाषा के असाधारण विद्वान के रूप में जगमोहन की प्रसिद्धि थी।"[7] 'अलका' उपन्यास में अलका अपने धर्म पिता से शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात प्रभाकर का प्रस्ताव स्वीकार करके "रोज दो घंटे के लिए कुलियों की खोलियों में उनकी स्त्रियों को पढ़ाने के लिए अलका जाया करती।"[8]

शिक्षा न केवल मनुष्य के अंतः–बाह्य को अलौकिक किरणों से प्रकाशित करती है, बल्कि उसमें मानवीय गुणों और विश्वबंधुत्व की भावना का संचार भी करती है। छायावाद अपनी इसी विशिष्टता के माध्यम से साहित्य जगत में विशिष्ट स्थान रखता है।

प्रकृति समस्त प्राणियों के जीवन का आधार है, प्रकृति की नैसर्गिक सुषमा से प्रायः प्रत्येक मनुष्य अपने हृदय को प्रफुल्लित कर जीवन के प्रति आशावान और ऊर्जावान बन पाता है। छायावादी कवियों ने प्रकृति की सुन्दरता का वर्णन तथा प्रकृति का मानवीकरण करके अपने हृदय की कोमल भावनाओं को काव्यमय अभिव्यक्ति प्रदान की है। टैगोर एवं निराला जी मूलतः कवि हैं। अतः उनके उपन्यासों में भी कवित्वमय भाषा के साथ प्रकृति–वर्णन और प्रकृति के मानवीकरण की अनेक मनोहारी झाँकियाँ मिलती हैं। उपवन में नीरजा अपनी मृत्यु को अवश्यंभावी जानकर पति से कहती है–"ठीक है। यह बगीचा हर समय तुम्हें मेरी याद दिलाया करेगा। झूमते हुए वृक्ष, चहचहाते हुए पक्षियों के स्वरों को तुम मेरा ही स्वर समझना। तुम हमेशा मेरी आत्मा को इस उपवन की हर कली में पाओगे। हवा बनकर मैं तुम्हारे बालों को इधर उड़ाऊँगी, तुम्हारे हर अंग का स्पर्श करूँगी। कोयल बनकर मैं तुम्हे अपनी वाणी सुनाऊँगी।"[9]

नीरजा के इस संवाद में प्रकृति वर्णन, प्रकृति के मानवीकरण और रहस्यात्मकता का त्रिवेणी संगम लेखक ने किया है। इसी तरह की काव्यमय अभिव्यक्ति निराला जी ने 'अप्सरा' व 'अलका' दोनों ही कृतियों में किया है। अप्सरा में राजकुमार भी कनक के

लिए ऐसी ही अनुभूति करता है–"जहाँ पर वह और कनक आकाश और पृथ्वी की तरह मिल रहे थे, जैसे दूर आकाश पृथ्वी को हृदय से लगा, हृदय बल से उठाता हुआ, हमेशा उसे अपनी ही तरह सीमा–शून्य, अशून्य कर देने के लिए प्रयत्न–तत्पर हो, और यही जैसे दृष्टि की सर्वोत्तम कविता हो रही हो।"[10]

अतः इन कृतियों में छायावादी विशेषताओं के मूल तत्व और भारतीय संस्कृति में निहित सहिष्णुता के सहज दर्शन होते हैं।

संदर्भ सूची :

1. गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर; श्री कामता प्रसाद राय शर्मा; बड़े चाचाजी; चौधरी एण्ड संस, बनारस 01, सन् 1955 पृ. 42
2. वही पृ. 17
3. सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला; निराला रचनावली खण्ड 3; नंदकिशोर नवल अप्सरा; राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली; सन् 1998; पृ. 49
4. सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला; निराला रचनावली खण्ड 3; नंदकिशोर नवल, अलका; राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली; सन् 1998; पृ. 56
5. गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर; विपिन बिहारी, उपवन प्रभाव प्रकाशन, मथुरा; पृ. 22
6. वही पृ. 101
7. गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर; श्री कामता प्रसाद राय शर्मा; बड़े चाचाजी; चौधरी एण्ड संस बनारस, 01 सन् 1955 पृ. 12
8. सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला; निराला रचनावली खण्ड 3; नंदकिशोर नवल अलका; राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली; सन् 1998; पृ. 220
9. गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर; विपिन बिहारी, उपवन प्रभाव प्रकाशन, मथुरा; पृ. 95
10. सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला; निराला रचनावली खण्ड 3; नंदकिशोर नवल अप्सरा; राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली; सन् 1998; पृ. 123

सहायक प्राध्यापिका (हिन्दी)
वी.अ.बा.शा.महाविद्यालय, छुईखदान (छ.ग.)

साहित्य मस्तिष्क की वस्तु नहीं, हृदय की वस्तु है। जहाँ ज्ञान और उपदेश असफल होता है, वहाँ साहित्य बाजी ले जाता है।

प्रेमचन्द : कुछ विचार

Scanned with CamScanner

नागार्जुन का रचना संसार और सांस्कृतिक सरोकार

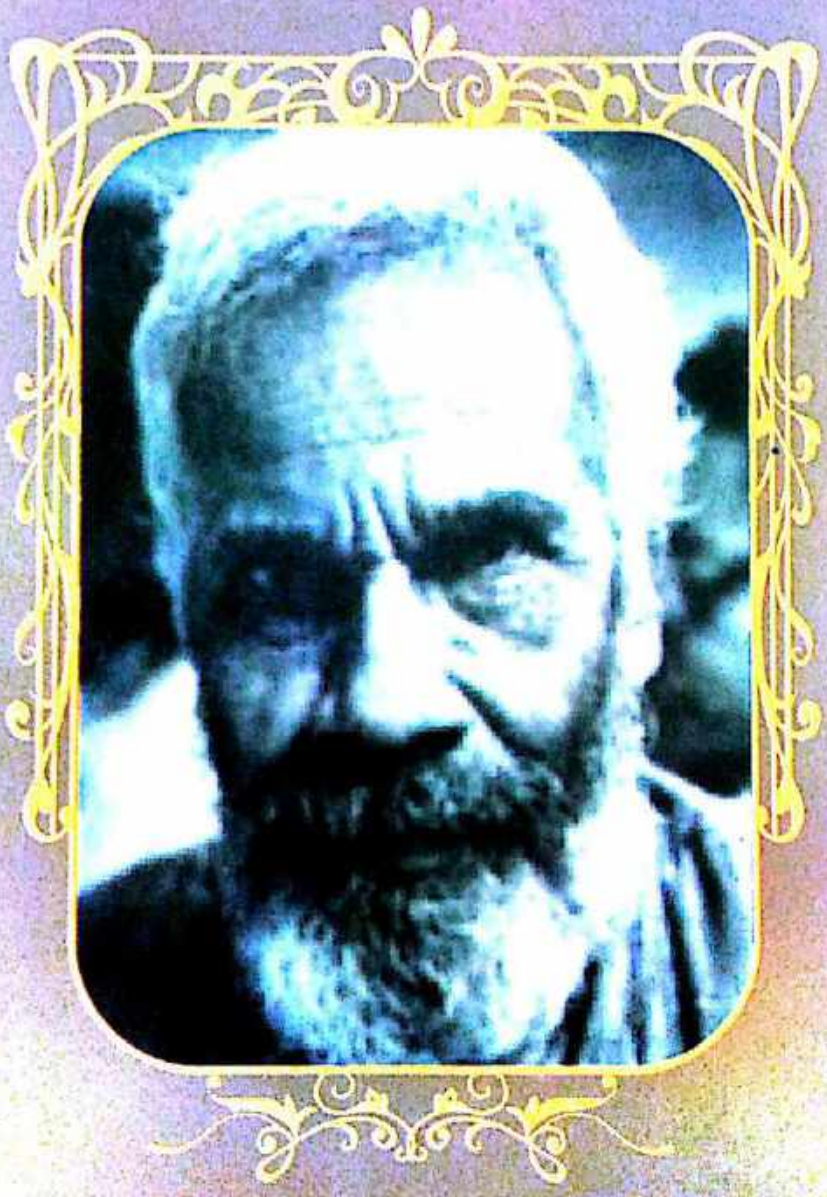

Scanned with CamScanner

नागार्जुन का रचना संसार और सांस्कृतिक सरोकार

संरक्षक

कुलपति
प्रो.माण्डवी सिंह

संपादक

प्रो.मृदुला शुक्ल

सह-संपादक

डॉ.राजन यादव, सह–प्राध्यापक
डॉ.देवमाईत मिंज, सहायक प्राध्यापक
हिन्दी विभाग

प्रकाशक

इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़ (छ.ग.)

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा 11 वीं पंचवर्षीय योजना की मर्ज्ड स्कीम के तहत् प्रदत्त अनुदान से प्रकाशित

Scanned with CamScanner

(विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा 11 वीं पंचवर्षीय योजना की मर्ज्ड स्कीम के तहत् प्रदत्त अनुदान से प्रकाशित)

ISBN : 978-81-910545-8-3

मूल्य : रु. 900

सर्वाधिकार : प्रकाशकाधीन

प्रकाशक : इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़ (छ.ग.)

मुद्रक : छत्तीसगढ़ संवाद, रायपुर

Scanned with CamScanner

17.	नागार्जुन के हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक संवेदना	डॉ. मधुलता धारा	110-119
18.	नागार्जुन के मैथिल उपन्यासों में सांस्कृतिक सरोकार	डॉ. सुधीर शर्मा	120-125
19.	नागार्जुन के उपन्यासों में सांस्कृतिक तत्वों के विविध स्वरूप	श्रीमती सीमा अभिलेखालाल	126-133
20.	नागार्जुन की औपन्यासिक कृतियों में नवनिर्माणपरक चेतना	प्रो. मृदुला शुक्ल	134-139
21.	'बाबा बटेसरनाथ' में सांस्कृतिक विमर्श	श्रीमती जयति श्रीवास्तव	140-142
22.	नागार्जुन के निबन्ध और सांस्कृतिक सरोकार	डॉ. इला द्विवेदी	143-148
23.	नागार्जुन का लोकोन्मुखी व्यक्तित्व और लोक जीवन की छबियाँ : ललित निबन्धों का विशेष परिप्रेक्ष्य	डॉ. देवमाईत मिंज	149-152
24.	नागार्जुन की बेजोड़ साहित्य-सर्जना	प्रो. यज्ञप्रसाद तिवारी	153-157
25.	अमल धवलगिरि से तरौनी तक : नागार्जुन	प्रो. बाँकेबिहारी शुक्ल	158-161
26.	समग्र संस्कृति के उद्घोषक बाबा नागार्जुन	प्रो.गोरेलाल चंदेल	162-164

Scanned with CamScanner

'बाबा बटेश्वरनाथ' में सांस्कृतिक विमर्श

श्रीमती जयती श्रीवास्तव

वर्तमान समय में साहित्य की सर्वाधिक सशक्त एवं गतिशील विधा उपन्यास विधा है। इस विधा के आरंभ से अब-तक इसकी विकास यात्रा में इसके अनेक स्वरूप प्रकट हो चुके हैं। इनमें एक स्वरूप आंचलिक उपन्यास का है, जिसमें किसी भौगोलिक स्थिति के अंतर्गत अंचल की भौगोलिक सीमाओं का निरूपण होता है, वहाँ की नदियाँ, वनस्पतियाँ, मिट्टी, बाढ़ आदि का यथातथ्य चित्रण होता है। कथानक का आधार भी अंचल विशेष की सामाजिक, राजनीतिक चेतना को बनाया जाता है। स्थानीय समस्याओं और आवश्यकताओं पर लेखक की दृष्टि केन्द्रित रहती है। ये स्थानीय समस्याएँ और आवश्यकताएँ अंचल विशेष की होती हुई भी राष्ट्र मात्र की समस्याएँ और आवश्यकताएँ होती हैं, अतः आँचलिक उपन्यास के माध्यम से लेखक इन्हीं मूलभूत बिन्दुओं को स्थान देते हुए परिस्थितियों से जूझने की प्रेरणा देते हैं।

संस्कृति के बिना हम मनुष्य की कल्पना ही नहीं कर सकते। संस्कृति से विहीन मनुष्य पशु की भांति होता है, अर्थात यह कहा जा सकता है कि मनुष्य के भौतिक शरीर को मनुष्य की संज्ञा तभी दी जा सकती है, जब वह संस्कारवान होगा। संस्कृति मानव जीवन को पशुता से भिन्न करती है और उसे विचारवान बनाती है। किसी भी देश की पहचान वहाँ की संस्कृति है। विशेषकर विश्व में भारत की पहचान उसकी संस्कृति और सांस्कृतिक विशेषता है। भारतीय संस्कृति मे वनस्पति का महत्व देवतुल्य है। वनस्पति के बिना जीवन की कल्पना ही असंभव है। बाबा नागार्जुन अपने इस उपन्यास में वटवृक्ष को नायक एवं सूत्रधार के रूप में प्रस्तुत करते हैं। वटवृक्ष स्वयं मजबूत इरादों एवं अदम्य साहस का प्रतीक है। स्वतंत्रता पूर्व एवं स्वतंत्रता पश्चात देश में व्याप्त सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक

Scanned with CamScanner

परिस्थिति को इस उपन्यास के माध्यम से लेखक ने उपस्थित किया है।

बाबा नागार्जुन ने वटवृक्ष का मानवीकरण कर, हमें यह एहसास दिलाया है कि वृक्ष भी मनुष्यों की भांति सुख-दुख की अनुभूति करते हैं, उन्हें भी अपनी मातृ-भूमि और देश के नागरिकों से प्रेम होता है। एक सच्चे नागरिक की भांति वे भी देश में सदैव खुशहाली, भाईचारा, और उन्नति का मार्ग प्रशस्त होते देखना चाहते हैं।

स्वतंत्रता पूर्व की परिस्थितियों में 'बाबा बटेसरनाथ' उपन्यास के बाबा बटेसरनाथ भी स्वतंत्रता प्राप्ति की कोशिश में नागरिकों को सहयोग प्रदान करते हैं। गाँव के उसी वटवृक्ष के नीचे ग्रामीणों द्वारा नमक बनाकर, कानून तोड़ना, क्रांतिकारियों के गिरफ्तार होने पर गर्व से आनंदित होना तथा महात्मा गांधी द्वारा चलाये गए असहयोग आंदोलन में हिसंक घटनाओं के होने पर और आंदोलन वापस लेने पर दुखी होना, बाबा बटेसरनाथ की देश प्रेम की भावना को उजागर करता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के अवसर पर गांव के साधारण ग्रामीण के द्वारा गांव भर में बताशे बांटना, तिरंगा झण्डा फहराना, हारमोनियम-तबला और डुग्गी मांगकर रात भर जश्न मनाना तथा रात भर दीपक जलाना देखकर, बाबा बटेसरनाथ मन ही मन उसके प्रति कृतज्ञता रखते हैं।

स्वतंत्रता पश्चात देश की राजनैतिक स्थिति पर लेखक का जब ध्यान जाता है, तब वे गहरे अवसाद में डूब जाते हैं। जन के विकास के बिना, न तो समाज का विकास हो सकता है, न ही देश का। स्वतंत्रता पूर्व जितनी लगन से लोगों ने आजादी के लिये अपना सब-कुछ अर्पित कर दिया, वे ही जन अवसर आने पर अपनी झोली भरने में मसरूफ हो गए। लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था में जनता के प्रतिनिधि जनता द्वारा चुने जाने लगे, किन्तु इस चुनाव में धन-बल का सहारा लिया जाने लगा। जो जमींदार स्वतंत्रता पूर्व ज़ालिमाना हरकत करते थे, उनमें और बढ़ोतरी हो गई। बाबा बटेसरनाथ सोचते हैं कि असली आजादी तो इन्हें मिली है।

Scanned with CamScanner

जैकिसुन के परदादा ने गांव (रूपउली) के मुख्य रास्ते के किनारे बड़े से मैदान में लगभग डेढ़ सौ वर्ष पूर्व छोटे से वट पौधे को बड़े प्यार से रोपा है। उस मैदान पर अब जमींदार की नजर है, वह बड़े अधिकारियों को खिलापिला कर खुश करके अपना काम निकालना चाहता है, किन्तु उसके मनसूबों पर गांव के नवयुवकों द्वारा पानी फिर जाता है।

इस प्रकार ग्रामीण जनजागृति इस उपन्यास के लेखन का मुख्य उद्देश्य हमें प्रतीत होता है। क्योंकि भारतीय संस्कृति मुख्यतः ग्रामीण संस्कृति है, यहाँ की 80 प्रतिशत जनता ग्रामीण है, अतः ग्राम के विकास से ही देश का विकास निश्चित है। इस उपन्यास में उपन्यासकार ने बाबा बटेसरनाथ के माध्यम से मानवीय संवेदनाओं को बारीकी के साथ प्रस्तुत किया है। आपसी वैमनस्य, असहयोग और आपातकाल में आने वाली परेशानियों से किस प्रकार समाज और देश दूषित होता है, इस पर उन्होंने चिंतन किया है और इसके हल के लिये उन्होंने सहयोग, भाईचारा और स्वच्छ राजनीति के माध्यम से गांव और राष्ट्र की तरक्की का दृश्य भी प्रस्तुत किया है। भारतीय संस्कृति का चरम लक्ष्य सत्यम्-शिवम्-सुन्दरम् युक्त मानवीय विचारणा या चिन्तन है। यही भावना इस उपन्यास का निचोड़ है, जो मानव मूल्य भी कहलाते हैं। 'बाबा बटेसरनाथ' उपन्यास इन मूल्यों पर खरा उतरता है। बूढ़े बरगद के स्थान पर नए वट-पौधे का रोपण इस भाव को पुष्ट करता है।

इस प्रकार यह उपन्यास पशुता पर मानवता की जीत है।

शोधार्थी,
इं.क.सं.वि.वि., खैरागढ़

Scanned with CamScanner

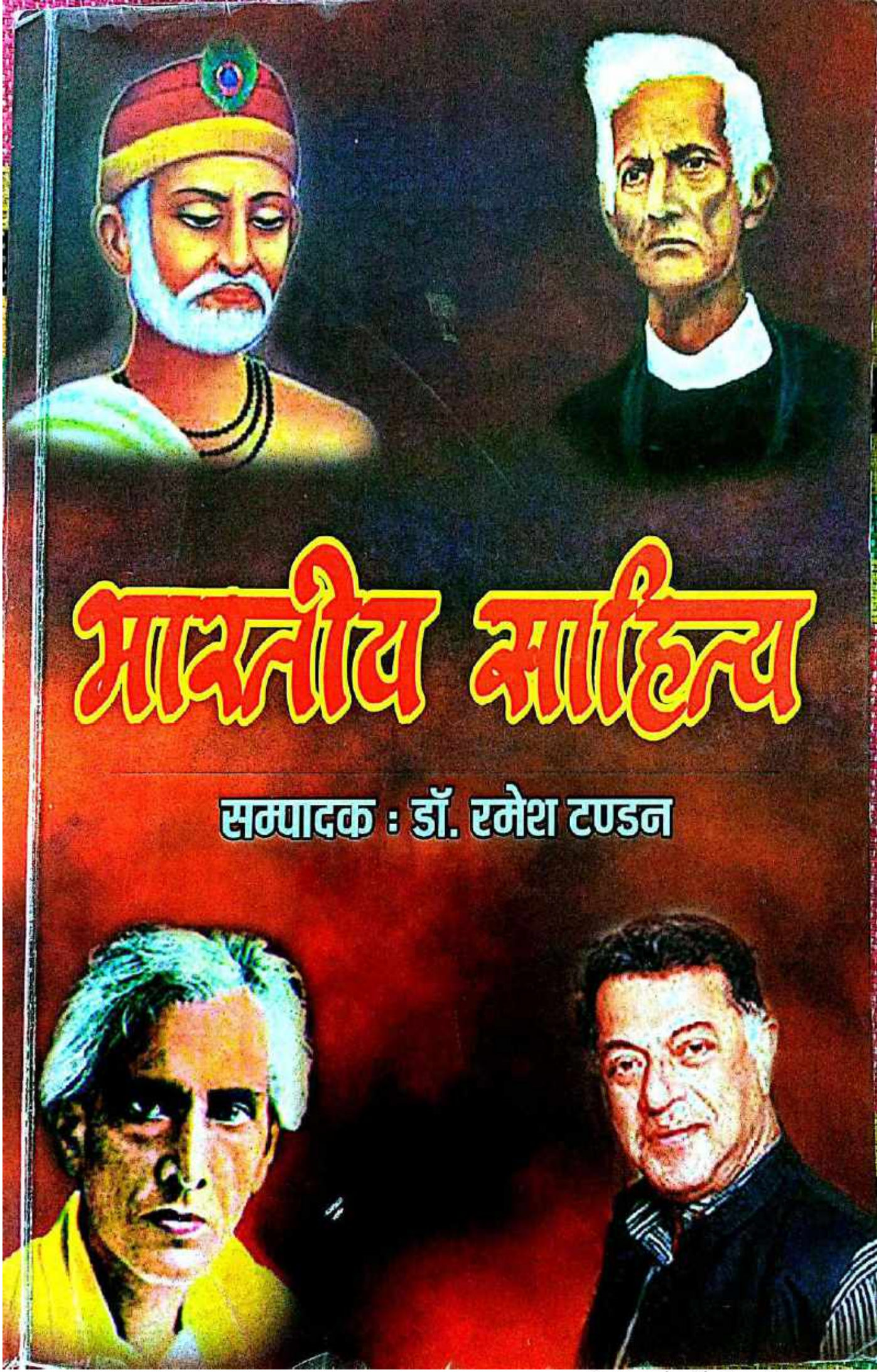

भारतीय साहित्य

सम्पादक : डॉ. रमेश टण्डन

Scanned with CamScanner

एम. ए. हिन्दी–

भारतीय साहित्य

(तृतीय सेमेस्टर – चतुर्थ प्रश्न–पत्र)

[छत्तीसगढ़ स्थित अटल बिहारी वाजपेयी विश्वविद्यालय बिलासपुर के अन्तर्गत विभिन्न महाविद्यालयों में संचालित एम. ए. हिन्दी तृतीय सेमेस्टर चतुर्थ प्रश्न–पत्र (भारतीय साहित्य) के नवीनतम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम पर आधारित एवं अन्य विश्वविद्यालयों के लिए भी एम. ए. हिन्दी की पाठ्य–पुस्तक]

संपादक

डॉ. रमेश टण्डन

(एम. ए.– हिन्दी, अंग्रेजी; पी–एच. डी., सीजी सेट)

विभागाध्यक्ष – हिन्दी

महात्मा गांधी शासकीय कला एवं विज्ञान स्नातकोत्तर महाविद्यालय

खरसिया, जिला– रायगढ़ (छ.ग.)

उप–संपादक

डॉ. बी. नन्दा जागृत – एम. ए. (इतिहास, समाजशास्त्र, हिन्दी), पी–एच. डी. (हिन्दी)

डॉ. दिनेश श्रीवास – बी. एस–सी. (गणित), एम. ए. (हिन्दी), एम. फिल. पी–एच. डी.

डॉ. जयती बिस्वास – एम ए (हिन्दी), एम. फिल,, पी–एच. डी., नेट, सेट, बी. एड., डी. एड.

प्रो. चरणदास बर्मन – एम. ए., बी. एड., स्लेट

प्रो. सीमारानी प्रधान– एम ए (हिन्दी, समाजशास्त्र), सेट

सर्वप्रिय प्रकाशन

कश्मीरी गेट, दिल्ली

Scanned with CamScanner

भारतीय साहित्य

डॉ. रमेश टण्डन

ISBN- 978-93-89989-85-4

●

प्रकाशक

सर्वप्रिय प्रकाशन

प्रथम मंजिल, चर्च रोड, कश्मीरी गेट, दिल्ली

मो. 9 9425358748

e-mail : sahityavaibhav@gmail.com

www.vaibhavprakashan.com

●

आवरण सज्जा : कन्हैया साहू

प्रथम संस्करण : सितम्बर 2020

मूल्य : 300.00 रुपये

कॉपी राइट : लेखकाधीन

BHARTIYA SAHITYA

BY : DR. RAMESH TANDAN

Published by

Sarvapriya Prakashan

First Floor, Church Road, Kashmiri Gate, Delhi

First Edition : September 2020

Price : Rs. 300.00

(प्रस्तुत पुस्तक के विभिन्न अध्यायों में लिखित पाठ्य सामग्री उसके लेखक/संकलनकर्त्ता के द्वारा एम ए हिन्दी में अध्ययनरत छात्रों के हित के लिए विभिन्न किताबों अथवा नेट से संकलित की गई है। अपने पाठ की पूर्णता के लिए इस पुस्तक के अध्याय लेखकों के द्वारा मूल किताबों अथवा परवर्ती संदर्भ/शोध ग्रंथों अथवा नेट से उद्धरण अथवा उदाहरण लिए गए हैं, अतः उन मूल किताबों अथवा परवर्ती संदर्भ/शोध ग्रंथों अथवा नेट के क्रमशः लेखकों अथवा संपादकों/शोध छात्रों अथवा अपलोडर्स का सर्वश्रेष्ठ आभार जिनकी पाठ्य सामग्री को यहाँ उद्धृत किया जा सका है। मौलिक तथ्यों /परिभाषा आदि में फेरबदल के लिए इस पुस्तक के संपादक अथवा प्रकाशक जिम्मेदार नहीं होंगे अपितु अध्याय लेखक स्वयं जिम्मेदार होंगे तथा किसी विवाद की स्थिति में न्याय क्षेत्र खरसिया (छ.ग.) होगा।)

Scanned with CamScanner

अनुक्रम

क्र.	अध्याय	लेखक	पृष्ठ क्र.
1.	भारतीय साहित्य का स्वरूप	प्रो. सीमारानी प्रधान	11
2.	भारतीय साहित्य के अध्ययन की समस्याएँ	डॉ. श्रीमती बी. नंदा जागृत	21
3.	भारतीय साहित्य में आज के भारत का बिंब	डॉ. रमेशकुमार टण्डन	31
4.	भारतीयता का समाजशास्त्र	प्रो. सीमारानी प्रधान	42
5.	हिन्दी साहित्य में भारतीय मूल्यों की अभिव्यक्ति	डॉ. जयती बिस्वास	56
6.	बँगला भाषा के साहित्य का इतिहास	डॉ. दिनेश श्रीवास	81
7.	उड़िया भाषा के साहित्य का इतिहास	डॉ. दयानिधि सा	95
8.	बँगला भाषा के साहित्य के प्रमुख कृतिकारों का परिचय तथा महत्वपूर्ण कृतियाँ	प्रो. करुणा गायकवाड़	110
9.	उड़िया भाषा के साहित्य के प्रमुख कृतिकारों का परिचय तथा महत्वपूर्ण कृतियाँ	डॉ. दयानिधि सा	122
10.	बंगला साहित्य, उड़िया साहित्य और हिन्दी साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन	डॉ. दिनेश श्रीवास	144
11.	गिरीश कर्नाड का परिचय एवं हयवदन की कथावस्तु	प्रो. करुणा गायकवाड़	161
12.	हयवदन की समीक्षा	डॉ. देवमाईत मिंज 'देव लकड़ा'	169
13.	हयवदन के प्रमुख पात्रों का चरित्र–चित्रण	डॉ. देवमाईत मिंज 'देव लकड़ा'	173

———000———

Scanned with CamScanner

5.
हिन्दी साहित्य में भारतीय मूल्यों की अभिव्यक्ति

– डॉ. जयती बिस्वास *

सेमेस्टर – III, प्रश्नपत्र– IV (भारतीय साहित्य), इकाई 01

हिन्दी साहित्य का क्षेत्र अत्यंत व्यापक, वैविध्यपूर्ण एवं विभिन्न बोलियों व उपबोलियों से संपन्न है। हिन्दी साहित्य के व्यापक क्षेत्र को ध्यान में रखते हुए इस अध्याय में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल द्वारा किए गए काल–विभाजन के आधार पर काल–विशेष के प्रतिनिधि साहित्यकारों की कृतियों पर ही विचार किया जाना संभव होगा। आचार्य शुक्ल के काल–विभाजन से चूँकि विद्यार्थी परिचित हैं, इसीलिए इस बात पर ध्यानाकर्षित किया जा रहा है, जिससे वे सहजता पूर्वक हिन्दी–साहित्य में निहित भारतीय मूल्यों की अभिव्यक्ति से परिचित हो सकें।

भारतीय मूल्य समाज और साहित्य को जोड़ने वाली अनिवार्य व महत्वपूर्ण कड़ी है। भारतीय मूल्य वास्तव में भारतीय समाज में व्याप्त वे आदर्शों के जाल हैं, जिन्हें व्यक्ति धारण कर स्वयं सुखी होता है तथा परिवार, समाज, राष्ट्र तथा विश्व को भी सुखी बनाता है। मूल्यों के अंतर्गत उन मानवीय वृत्तियों को शामिल किया जा सकता है, जो सदियों से मानव–मन में प्रेम, दया, क्षमा, न्याय, त्याग, समर्पण, संतोष, अनुशासन, सहिष्णुता जैसे भावों के रूप में विद्यमान हैं। ये गुण देश काल की सीमाओं से परे सदैव विश्व–व्यापी रहे हैं। चूँकि समाज भी व्यक्ति के आपसी संबंधों का जाल है, अतः ये गुण व्यक्ति के साथ समाज के लिए भी कल्याणकारी हैं। हिन्दी साहित्य का लेखन कार्य जब से प्रारंभ हुआ है, तब

*जन्म तिथि एवं स्थान : 25 अगस्त 1970, खैरागढ़, माता : श्रीमती ललिता श्रीवास्तव, पिता : श्री सियाराम श्रीवास्तव, पति : श्री उत्पल बिस्वास, योग्यता : एम ए (हिन्दी), एम. फिल., पी–एच. डी., नेट, सेट, बी. एड., डी. एड., संप्रति : सहायक प्राध्यापक (हिन्दी), विरांगना अवंती बाई महाविद्यालय, छुईखदान, मोबाईल नं. : 9424130323, ई–मेल :jaytibiswas25@gmail.com

से भारतीय मूल्य किसी–न–किसी स्वरूप में साहित्य में अंतर्निहित है। साहित्यकार अपनी रचनाओं के माध्यम से जन–सामान्य को मूल्यों से परिचित कराते रहे हैं। भारतीय साहित्य में नायक–नायिका के चरित्र–चित्रण के साथ–साथ, सामाजिक मर्यादाओं, संस्कारों, प्रथाओं, तीज–त्योहारों विभिन्न कलाओं आदि अनेक क्षेत्रों में मूल्यों की अभिव्यक्ति को स्थान दिया जाता रहा है। सहृदय–व्यक्ति साहित्य का रसास्वादन करके इनमें निहित मूल्यों को धारण करता है और अपना जीवन सुखमय बनाता है तथा समाज राष्ट्र व विश्व के कल्याण में अपनी भूमिका भी निभाता है। साहित्य और मूल्य के अंतर्संबंध को मानक हिन्दी कोश में स्पष्ट किया गया है– "साहित्य में मूल्य शब्द का अर्थ कीमत आदि से न होकर उसके नीतिपरक अर्थ से संबंधित है। नीति शास्त्र में मानव के समस्त आचार–विचार संबंधी श्रेष्ठतम को ही मूल्य के रूप में स्वीकार किया गया है।"[1] अतः यह बात स्पष्ट है कि मानव मूल्य वे सामाजिक आदर्श और व्यक्तिगत चारित्रिक विशेषताएँ हैं, जो परिवर्तनशील सामाजिक प्रकृति में भी स्थिर होते हैं तथा सामाजिक आदर्श और मानवीय उच्चता की गणना करना असंभव होने के बावजूद ये साहित्य में सदैव ही विद्यमान रहते हैं।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने संवत 1050 से 1375 ई. तक का समय आदिकाल का माना है। इस युग में राजाओं की वीरता और पराक्रम के आधार पर अनेक रचनाएँ साहित्यकारों द्वारा की गईं। आदिकाल की सामाजिक पृष्ठभूमि पर प्रकाश डालें तो यह जानकारी प्राप्त होती है कि मुसलमानों के आक्रमण से हिन्दुओं की शक्ति सतत् कम होती रही। दुश्मनों के छल–बल से देश की राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों में गिरावट आई। इस विपरीत परिस्थिति में राजा–महाराजा अपनी परवाह न करके राष्ट्रहित में मरने–मारने को सदैव तैयार रहते थे। राष्ट्रहित के लिए जान न्यौछावर करने वाले राजाओं में पृथ्वीराज चौहान का नाम सम्मानपूर्वक लिया जाता है। पृथ्वीराज चौहान के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालने के लिए महाकवि चन्दबरदायी कृत पृथ्वीराज रासो की पंक्तियों को उदाहरणार्थ प्रस्तुत किया जा सकता है–

"सिर धुनत पतिसाह। धाह सुनि सेना सश्थिय।
लुध्धि लुध्धि मुँह धार। परे बरथन सो बश्थिय।
जम सो जम आहुरै। मूर जट्टै दोई घुट्टै।

Scanned with CamScanner

नई गंठि तन जोग। सूर मुंडवलि घुटट।
पुर सान जैत अब्बु धनिय। धार-धार मुह किट्टय।
ऐसो न जुद्ध दिट्यौ सुन्यौ। दारुन मेह दव टिट्य।"[2]

अर्थात् राजा पृथ्वीराज का पराक्रम और उनकी वीरता के सामने बड़े-बड़े बादशाह सिर धुनते रह गए, उनकी सेना पृथ्वीराज की सेना के आगे शक्तिहीन हो गई।

जिस तरह नायक का सौन्दर्य वीरोचित प्रतिभा सम्पन्न माना जाता है, उसी प्रकार नायिका के सौन्दर्य में उसके नख-शिख सौन्दर्य के साथ-साथ नारी हृदय की कोमल भावनाओं को भी साहित्य में स्थान प्राप्त है। कवि आसगु द्वारा रचित प्रबंधकाव्य 'चन्दनबाला रास' में नायिका चन्दनबाला की चारित्रिक पवित्रता और धार्मिक प्रवृत्ति का वर्णन है। यह नायिका जीवन के कठिन-से-कठिन समय में भी संयम साधना व पतिव्रत धर्म की एक निष्ठता को धारण करती है। नारी के इस सौन्दर्य का समाज पर पड़ने वाले सकारात्मक प्रभाव से सभी बुद्धिजीवी परिचित हैं। 'चन्दनबाला रास' में नारी समर्पण का यह दृश्य निम्न पंक्तियों में दृष्टव्य है-

"दधि वाहण गेहिणि, सु पाहिणी, रूपवन्त साधारिणीं राणी।
तुंग पयोहर खीर सर, कुंडिल केस भुय नयंण सुचंगी।
हंस गमणि सा मृग नयणि नव जीवन नव नेह सुरंगी।"[3]

आदिकालीन साहित्य को समृद्ध करने में सिद्ध साहित्य, नाथ साहित्य तथा जैन साहित्य के अतिरिक्त कुछ फुटकल रचनाएँ भी शामिल हैं। सिद्ध-साहित्य बौद्धों की वज्रयान शाखा के तत्वों के आधार पर विकसित साहित्य है। इनकी रचनाओं में जीवन-यापन के लिए सहज-मार्ग पर चलने की शिक्षा है। इन्होंने माया-मोह का विरोध किया तथा गुरु-सेवा को महत्व दिया। जिस प्रकार बौद्धों की वज्रयान शाखा से सिद्ध-साहित्य का उद्भव हुआ, उसी प्रकार सिद्धों की सहजयान शाखा से नाथ साहित्य विकसित हुआ। गुरु गोरखनाथ नाथ साहित्य के आदि पुरुष माने जाते हैं। नाथों की रचनाओं में गुरु-महिमा, इन्द्रिय संयम, कुण्डिलीनी जागरण, मन की एकाग्रता, प्राण-साधना आदि तत्वों का समावेश एवं विस्तार है। गोरखनाथ जी कहते हैं, "धीर वह है जिसका चित्तविकार साधन होने पर भी विकृत नहीं होता-

नौ लाख पातरि आगे नाचे, पीछे सहज अखाड़ा।
ऐसे मन लै जोगी खेलै, तब अंतरि बसै भंडारा।"[4]

सिद्ध व नाथ-साहित्य की भाँति जैन साहित्य का भी महत्वपूर्ण स्थान है। इन काव्यों में उपदेश परक संदेश की प्रधानता है। इनमें प्रबंध व मुक्तक दोनों काव्य मिलते हैं। जैन-साहित्य में चरित, रास और फागु शैलियाँ मिलती हैं। देवसेन कृत 'श्रवकाचार' में गृहस्थ-आश्रम के कर्त्तव्यों का विस्तार से वर्णन मिलता है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने पूर्व-मध्यकाल या भक्तिकाल का समय संवत 1375 से 1700 ई. तक माना है। भारत-वर्ष का यह समय राजनैतिक और सामाजिक दृष्टि से अत्यंत उथल-पुथल का रहा। मुस्लिम शासक धीरे-धीरे यहाँ पैर जमा रहे थे तथा हिन्दुओं का गौरव और उत्साह धीरे-धीरे घट रहा था। अतः भारतीय समाज में साम्प्रदायिकता अपना प्रभाव दिखा रही थी। हिन्दू संस्कृति में भी जाति-पाँति के अनेक स्तर विद्यमान थे, जिससे जन-सामान्य के बीच वर्ग-भेद, आर्थिक विषमता, अभाव व लाचारी जैसी विषम परिस्थितियाँ मुहँ-बाए खड़ी थी। वे अशिक्षित, उपेक्षित, ज्ञान शून्य व कर्म शून्य जीवनयापन के लिए विवश थे, तो दूसरी ओर पूजा-पाठ की अनेक विधियाँ, तीर्थाटन, पर्व-स्नान आदि आडम्बर से वर्ग-विशेष के संकुचित दायरे थे। ऐसे समय में ज्ञान, प्रेम व भक्ति के माध्यम से साहित्यकारों ने धर्म-कर्म और मर्म को समझाने की चेष्टा की, जिससे व्यक्ति व समाज शुभकर्मों के सुपरिणाम से लाभान्वित हो सकें।

भक्तिकालीन साहित्य सगुण और निर्गुण धारा के माध्यम से भारतीय मूल्यों को अनेक रूपों में अभिव्यक्त करता है। भारतीय संस्कृति में गुरु की महिमा अनंत है। गुरु के द्वारा शिष्य के लिए किए गए उपकार को शब्दों में नहीं बाँधा जा सकता। गुरु के उपकार को सगुण व निर्गुण दोनों भक्त कवि अनुभव करते हैं-

कबीर कहते हैं-

"पीछे लागा जाइ था, लोक-वेद के साथि।
आगै पै सद्गुरु मिल्या, दीपक दीया हाथि।।"[5]

जायसी -

"सैयद असरफ पीर पियारा, जेइ मोहि पंथ दीन्हा उजियारा।

Scanned with CamScanner

गुरु मोहिदी खेवक मैं सेवा, चलै उताइल जेहि कर सेवा।।"[6]

सूरदास –

श्री वल्लभ गुरु तत्व सुनायौ, लीला भेद बतायो।
ता दिन ते हरिलीला गाई, एक लक्ष पद बंध।।[7]

तुलसी –

श्री गुरु चरण सरोज रज, निज मन मुकुर सुधारि।
बरनउँ रघुवर विमल जस, जो दायक फल चारि।।[8]

गुरु का महत्व भारतीय समाज में सर्वविदित है, उनकी कृपा से ही शिष्य लौकिक व अलौकिक ज्ञान के प्रकाश से प्रकाशित होता है। शिष्य इसी ज्ञान के सहारे अपने जीवन का कल्याण करता है तथा समाज को भी परोपकार करने की प्रेरणा देता है।

भक्तिकालीन कवि गुरु–वन्दना व ईश्वरोपासना के साथ–साथ सामाजिक पुनरुत्थान और नव जागरण के लिए समर्पित थे। निर्गुण भक्त कवि सदाचारी, कर्मयोगी तथा सर्जनात्मक मूल्य के लिए सदैव प्रयासरत रहे। ये कवि इसीलिए संत कवि कहलाए। कबीर समाज–कल्याण हेतु संदेश–वाहक के रूप में अवतरित हुए। उनकी दृष्टि न केवल मानव हित के प्रति थी, बल्कि वे समस्त प्राणियों का कल्याण भी चाहते थे। गाय (गउ माता) के प्रति वे अपनी संवेदना इन शब्दों में प्रकट करते हैं–

तिण चरि सुरही उदिक पीयन, ढारे दूध बछ कूँ दीया।
बछा चूसत उपजी न दया, बछा बांधि बिछाही मया।।[9]

भारतीय संस्कृति में गाय को माता कहकर सम्मानित किया जाता है। उक्त दोहे में कबीर कहते हैं कि गउ को माता कह देना ही पर्याप्त नहीं है। वास्तव में, भारतीय समाज में गउ माता के साथ मोह व्यवहार नहीं किया जाता, जिसकी वह अधिकारिणी है। गाय के समस्त दूध को दुहने वाले लोगों को वे अपराधी मानते हैं, जिनके कारण बछड़ा भूखा–प्यासा कुपोषण का शिकार होकर मर जाने को विवश हो जाता है। वे गाय व बछड़े से प्रेम करने की प्रेरणा हमें दे रहे हैं या यह कहा जा सकता है कि अन्य प्राणियों के प्रति भी कबीर सहानुभूति रखने की प्रेरणा दे रहे हैं। प्रेमाख्यानक काव्य परंपरा में जायसी सर्वप्रिय कवि हैं। इन्होंने कबीर की भाँति हिन्दू–मुस्लिम दोनों ही संप्रदायों में अपने प्रेमी स्वभाव के कारण प्रसिद्धि प्राप्त की। इन्होंने

अपनी रचनाओं में मानव मन में निहित प्रेम, त्याग, समर्पण आदि गुणों का उद्घाटन कर समाज पर पड़ने वाले उसके सकारात्मक प्रभाव से परिचित कराया है–

तुरकी, अरबी, हिंदुई। भाषा जेहि आहि।।
जेहि मह मारग प्रेम कर। सबै सराहे ताहि।।
मुहमद कवि यह जोरि सुनावा। सुना सो पीर प्रेम कर पावा।।
जोरी लाइ रकत कै लेई। गाढ़ि प्रीति नयनन्ह जल भेई।।
औ मैं जानि गीत अस कीन्हा। मकु यह रहै जगत महं चीन्हा।।
कहाँ सो रतनसेन अब राजा ? कहाँ सुआ अस बुधि उपराजा।।
कहाँ अलाउदीन सुलतानू ? कहाँ राघव जेइ कीन्ह बखानू।।
कहाँ सुरुप पदमावती रानी ? कोई न रहा जग रही कहानी।।
धनि सोई जस कीरति जासू । फूल मरै पै मरै न बासू।।"[10]

कवि जायसी 'पद्मावत' के उपसंहार में मानव समाज को यह संदेश देते हैं कि इस क्षण भंगुर संसार में कोई सदैव नहीं रहता, परंतु उसके द्वारा किए गए सद्कार्य सदैव स्मरण किए जाते है। मनुष्य द्वारा किए गए सद्कार्य समाज व राष्ट्र के लिए हमेशा मार्गदर्शक होते हैं। जिस प्रकार फूल खिलकर मुरझा जाते हैं, किंतु अपने सुवास से वे पहचाने जाते हैं।

भारतीय समाज में अतिथि को देवतुल्य स्थान प्राप्त है। सगुण भक्त कवि सूरदास के 'भ्रमरगीत सार' में यह भावना मुखरित हुई है। श्री कृष्ण के मथुरा चले जाने पर उद्धव ब्रज की गोपिकाओं के मन से श्री कृष्ण की भक्ति के स्थान पर निर्गुण ईश्वर की भक्ति जागृत करना चाहते हैं। सभी ब्रजवासी उद्धव की मनःस्थिति से परिचित होने के बावजूद उनका हृदय से अतिथि सत्कार करते हैं। सूरदास जी का प्रस्तुत छन्द दृष्टव्य है।

"अरघ आरती तिलक दूध दधि माथे दीन्हीं।
कंचन कलस भराय आनि परिकरमा कीन्हीं।।
गोप भीर आँगन भई मिलि बैठे यादव जात।
जलझारी आगे धरी, हौ बूझति हरि कुसलात।।
कुसलक्षेम बसुदेव, कुसल देवी कुबजाऊ।
कुसल क्षेम अक्रूर, कुसल नीके बलदाऊ।।
पूछी कुसल गोपाल को, रही सकल गहि पाय।
प्रेम मगन ऊधो भए, हो देखत ब्रज को भाव।।"[11]

Scanned with CamScanner

सूरदास जी प्रस्तुत छन्द के माध्यम से उस भारतीय मूल्य को प्रकट करते हैं, जहाँ अहित करने वालों का भी सम्मान करने में लोग पीछे नहीं हटते।

राम काव्य के प्रतिनिधि रचनाकार गोस्वामी तुलसीदास अपने दोहों के माध्यम से यह शिक्षा देते हैं–

तुलसी इह संसार में भाँति भाँति के लोग।
सबसे हिल–मिल चलिए नदी नाव संजोग।।
जड़–चेतन, गुण–देश मय विश्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुन गहहि पय परिहरि वारि विकार।।[12]

अर्थात इस संसार में अनेक स्वभाव के व्यक्ति हमें मिलते हैं। सबसे प्रेमपूर्वक आचरण करना चाहिए। जिस प्रकार नदी में नाव का संतुलन बनाकर नाविक आगे बढ़ता है, उसी प्रकार मनुष्य को भी सबसे उचित व्यवहार करना चाहिए। इस संसार को ईश्वर ने सजीव व निर्जीव, गुण व दोषों से युक्त बनाया है, किन्तु जिस प्रकार हंस दूध और पानी के मिले हुए स्वरूप में से दूध को ग्रहण कर पानी को छोड़ देता है, उसी प्रकार संत मनुष्य इस संसार में गुणों को ग्रहण कर दोषों का परित्याग करते हैं।

रहीम कवि इस काल के फुटकल रचनाकारों में अग्रणी हैं। इनके दोहों में अलग–अलग मानवीय मूल्यों की मनोरम झाँकियाँ सहज ही उपलब्ध हैं। उन्होंने अपनी नीतिपरक कविताओं के साथ–साथ रीति–निरूपण तथा नायिका–भेद के माध्यम से साहित्य की अद्भुत सेवा की। वे अत्यंत दयालु और दानदाता थे। वे अपनी दानशीलता की प्रशंसा सुनकर कहते हैं–

देनहार कोई और है, भेजत सो दिन रैन।।
लोग भरम हम पै करत ताते नीची नैन।।[13]

अर्थात देने वाले तो ईश्वर हैं। वे ही मुझे दिन–रात देते हैं, किन्तु लोगों को यह भ्रम होता है कि मैं देने वाला हूँ। इस भ्रम के कारण मेरी आँखें शर्म से झुक जाती हैं। उनका यह मानवीय गुण सहज ही मनुष्य को दान देने के लिए प्रेरित करता है और मनुष्य को परिवार व समाज में सहृदय बनने की भी शिक्षा देता है–

टूटे सुजन मनाइए, जो टूटे सौ बार।
रहीमन फिर–फिर पाइए टूटे मुक्ताहार।।[14]

प्रस्तुत छन्द में प्रेम व धर्म का मणिकांचन संयोग है। रहीम कवि अपनी इन्हीं सरस और अमृत वाणी से सदैव याद किए जाते रहेंगे।

कृष्ण भक्त कवियों में मीराबाई का नाम स्मरणीय है। बाल्यावस्था में माता–पिता के देहांत के पश्चात उनका लालन–पालन दादा जी की देख–रेख में हुआ। वे पराक्रमी तथा भक्त–हृदय थे। उनके व्यक्तित्व का प्रभाव मीराबाई पर पड़ना स्वाभाविक था। मीराबाई की भक्ति, कांता व माधुर्य–भक्ति कहलाती है। लौकिक जगत में इनका विवाह उदयगिरि के कुँवर भोजराज से हुआ था। श्रीकृष्ण की भक्ति उन्होंने पति रूप में की। इस भक्ति के लिए अनेक विषम परिस्थितियों का उन्हें सामना करना पड़ा, परन्तु वे कभी हार नहीं मानी। वे परब्रह्म ईश्वर को श्री कृष्ण के रूप में पूजती रहीं। मीरा बाई का श्री कृष्ण के प्रति एकनिष्ठ प्रेम, मानव जीवन के दैहिक, दैविक व भौतिक ताप से मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करता है–

"मन रे परसि हरि के चरण।
सुभग सीतल कमल कोमल त्रिविध ज्वाला हरन।
जो चरन ध्रुव अटल कीन्हौ, राखि अपनी सरन।
जिन चरन ब्रह्माण्ड भेंट्यो, नख–सिखौ श्री परन।
जिन चरन प्रभु परस लीन्हे, तरी गौतम घरन।
जिन चरन धार्‌यो गोवरधन, गरब मधवा हरन।
दासि मीरा लाल गिरधर, अगम तारन तरन।"[15]

भक्तिकालीन समस्त कवियों ने ईश्वर के सगुण और निर्गुण दोनों स्वरूपों की भक्ति में अपना जीवन व्यतीत कर दिया। इनकी भक्ति व्यक्तिगत न होकर लोक मंगल का संदेश भी देती है।

रीतिकालीन काव्य में भक्ति, शृंगार, वीर, नीति, विषयक रचनाओं के साथ–साथ प्रकृति वर्णन के मनोहर छन्द मिलते हैं। शृंगार–रस के समस्त हाव–भाव एवं तत्व 'बिहारी–सतसई' में मिलते हैं। नारी–सौन्दर्य की अनुपम छवि, नख–शिख वर्णन, नायक–नायिका मिलन, नायक–दूति संवाद, नायक–नायिका संवाद, नायिका–भेद आदि अनेक विशयों पर रीतिकालीन कवियों ने सहज ही काव्य सृजन किया है। रसों में शृंगार रस का स्थान सर्वविदित है। बिहारी की शृंगारिक कविताओं में भारतीय मूल्यों की अभिव्यक्ति को निम्नलिखित छन्द में देखा जा सकता है। यहाँ नायक–नयिका के प्रेम की अभिव्यक्ति में मर्यादा की सीमा का कवि ने पूर्ण ध्यान रखा है। प्रेम का

Scanned with CamScanner

नटखटपन, मस्ती, उदारता, समर्पण, विस्मय आदि अनेक भावों के उद्घाटन के बावजूद कला पक्ष का ऐसा सौन्दर्य अन्यत्र दुर्लभ है।

कहत, नटत, रीझत, खिझत, मिलत, खिलत, लजियात।
भरे भौन में करत हैं, नैननु ही सौ बात।।[16]

बिहारी अपनी बहुज्ञता के लिए विख्यात हैं। नीति के पद तथा ज्योतिष ज्ञान इनके काव्य की शोभा बढ़ाने वाले कारक हैं। रीतिकालीन कवियों में बिहारी अपनी मुक्तकों के लिए विख्यात हैं, तो आचार्य केशवदास अपनी महाकाव्यात्मक कृति 'रामचन्द्रिका' के विशिष्ट संवाद–सौष्ठव के लिए जाने जाते हैं। इस कृति में रावण–अंगद संवाद के माध्यम से कवि ने भौतिक संसार की निस्सारता का वर्णन किया है तथा घमंड, निर्दयता, कपटता आदि दुर्गुणों को त्याग देने का आह्वान किया है। वे अंगद से कहलाते हैं–

हाथी न साथी, न घोरे न चेरे, न गाऊँ न ठाऊँ, कुठाऊँ बिलैहै।
तात न, मात न, पुत्र न, मित्र न, वित्त न तीय, कहूँ संग रहै।
केशव काम के राम बिसारत और निकाम रे काम न ऐहै।
चेति रे चेति अजौं चित अन्तर, अंतक लोक अकेलोई जैहै।[17]

अर्थात बड़े से बड़ा धनवान व्यक्ति इस संसार का अकेले ही त्याग करता है। उसके साथ न ही उसके सगे–संबंधी जाते हैं, न ही उसकी पूँजी उसका साथ देती है। ईश्वर भक्ति और सत्कर्म ही मनुष्य के सच्चे साथी हैं।

रीतिकालीन कवियों में भूषण वीर रस प्रधान रचना करने वाले प्रमुख कवि हैं। तत्कालीन कवि मतिराम और चिंतामणि भूषण के भाई थे। सोलंकी के राजा रूद्र ने कवि भूषण को 'भूषण' की उपाधि दी थी। तभी से इन्हें इसी नाम से जाना जाता है। इनके वास्तविक नाम का पता नहीं हैं। इन्होंने महाराज छत्रसाल व छत्रपति शिवाजी की वीरता और साहस का स्वाभाविक वर्णन किया है। इनकी कविताएँ भारतीयों में सहज ही उत्साह और देश–प्रेम की भावना का संचार करती हैं। प्रस्तुत पंक्तियाँ इन्हीं भावनाओं का उद्घाटन करती हैं–

"इंद्र जिमि जंभ पर, बाड़व सु अंभ पर,
पौन वारिवाह पर, संभू रतिनाह पर
ज्यों सहस्रबाहु पर, राम द्विजराज हैं।
दावा द्रुम दण्ड पर, चीता मृग झुण्ड पर

भूषण वितुण्ड पर, जैसे मृगराज हैं।
तेज तम अंश पर, कान्ह जिमि कंस पर
त्यों म्लेच्छ बंस पर, सेर सिवराज हैं।"[18]

वीररस प्राधान्य यह कविता पाठकों में सहज ही उत्साह व आनंद का संचार करती है। मानव–मन सदैव ही प्रकृति की सुन्दरता और उसके रहस्यों को जानने के लिए उत्सुक रहा है। अतः साहित्यकारों ने भी प्रकृति के विभिन्न रूपों को वाणी प्रदान की है। भारतीय संस्कृति में प्रकृति को देव–तुल्य माना गया है। वृक्षों–वनों, नदी–पहाड़ों के संरक्षण के लिए मनुष्य सदैव जागरुक व तत्पर रहे हैं। रीतिकालीन कवियों ने भी प्रकृति के विविध सौन्दर्य की अनुभूति को छन्दोबद्ध किया है। सेनापति जी का ऋतु–वर्णन साहित्य जगत में विख्यात है। उनके द्वारा ऋतुराज बसंत का मानवीकरण दृष्टव्य है–

"बरन – बरन तरु फूले उपवन वन,
सोई चतुरंग संग दल लहियतु है।
बंदी जिमि बोलत विरद वीर कोकिल है,
गुंजत मधुप गान गुन गहियतु है।
आवे आस–पास पुहुपन की सुवास सोई,
सोने के सुगंध माझ सने रहियतु है।
सोभा को समाज 'सेनापति' सुख साज आजु,
आवत बसन्त रितुराज कहियतु है।"[19]

बसन्त ऋतु को ऋतुओं का राजा कहते हुए एक राजा के स्वागत–सत्कार का मनोहारी वर्णन कवि ने किया है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल आधुनिक काल का प्रारंभ संवत् 1900 से मानते है। साहित्य रचना के इस दौर में भारतीय स्वतंत्रता की प्राप्ति के लिए देश प्रेमी आमजन धीरे–धीरे सचेत हो रहे थे। भारतीय राजनीति और सामाजिक व्यवस्था में स्वतंत्रता के लिए चेतना व इच्छाशक्ति को संगठित करने के लिए साहित्यकारों ने भी योगदान दिया है। आधुनिक काल में साहित्य के पद्य और गद्य दोनों ही काव्यों के सृजन की ओर साहित्यकार आकृष्ट हुए।

विद्वानों ने आधुनिक काल के पद्यखण्ड को निम्नलिखित नामों से संबोधित किया है–

Scanned with CamScanner

1. आधुनिक काल (भारतेन्दु हरिश्चन्द्र) (1857 से 1900 ई.)
2. जागरण सुधार काल (द्विवेदी युग) (1900 से 1918 ई.)
3. छायावाद युग (1918 से 1938 ई.)
4. छायावादोत्तर युग, प्रगति, प्रयोग काल (1938 से 1953 ई.)
5. नवलेखन काल (1953 ई. से आज तक)"[20]

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का प्रादुर्भाव हिन्दी साहित्य जगत में संधिकाल माना जाता है। यह समय पौर्वात्य और पाश्चात्य संस्कृति के संगम का रहा है। अतः इनकी कविताओं में भक्ति, शृंगार व देश–प्रेम का अद्‌भुत संयोग मिलता है। वे अपने आराध्य से देशवासियों को जगाने (सचेत) व उनमें राष्ट्रभक्ति की भावना का संचार करने के लिए निवेदन करते हैं–

"जगत पिता जग–जीवन जागो, मंगल मुख दरसाओ।
तुम सोए सब ही मनु सोए, तिन कहुँ जागि जगायौ।
अब बिन जागे काज सरत नहीं, आलस दूर भगाओ।
हे भारत भुवनाथ भूमि, निज बूड़त आनि बचाऔ।"[21]

इस पंक्ति में भारतेन्दु जी राष्ट्र उद्धार के लिए जन–सामान्य से आह्वान करते हैं कि आप अपने आलस्य को दूर करके राष्ट्र के प्रति अपने कर्त्तव्यों का चिंतन करें। विदेशी शासकों के हाथों हमारा राष्ट्र फँसकर शक्तिहीन हो रहा है। विरोधी शक्तियों से हमें ही अपने देश को बचाना है।

द्विवेदी युग का नामकरण भारतीय साहित्य में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के नाम पर किया गया है। यह युग सामाजिक और राजनीतिक उथल–पुथल का रहा है। आम जन अंग्रेजों की दमनकारी नीति से परिचित हो रहे थे। परिणामतः कर्मठ और जुझारू देशभक्त और नेताओं का अवतरण इस युग में हुआ। इन्होंने धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक क्षेत्रों के साथ–साथ शैक्षणिक स्तर पर भी कार्य किए। इन जुझारू नेताओं में बाल गंगाधर तिलक, गोपाल कृष्ण गोखले, बिपिन चन्द्र पाल आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के प्रयासों के इस दौर में राष्ट्र प्रेम, नीति, आदर्श, कर्त्तव्यपालन, स्वार्थ–त्याग आदि भारतीय मूल्यों को भी साहित्यकारों ने अपनी कृतियों में स्थान दिया। महावीर प्रसाद द्विवेदी, मैथिलीशरण गुप्त, अयोध्या सिंह उपाध्याय, श्री रामचरित उपाध्याय, पं. लोचन प्रसाद पांडेय इस युग के प्रमुख कवि हैं। मैथिलीशरण गुप्त जी की महाकाव्यात्मक कृति 'साकेत' में नायक श्री राम भारतीय मूल्यों के संरक्षण के लिए स्वयं समर्पित हैं–

"सुख शांति हेतु मैं क्रांति मचाने आया,
विश्वासी का विश्वास बचाने आया।
मैं आया अनेक हेतु कि जो तापित हैं,
जो विवश, विफल, बलहीन, दीन शापित हैं।
संदेश यहाँ मैं नहीं स्वर्ग का लाया,
इस भूतल को ही स्वर्ग बनाने आया।"[22]

प्रस्तुत छंद में कवि ने एक राजा के कर्त्तव्य को स्पष्ट किया है। प्रजा यदि निराश, परेशान व अभावों के कारण सुख–शांति से जीवन यापन करने में असमर्थ हैं, तो राजा का प्रथम कर्त्तव्य उनकी समस्या को दूर कर उन्हें खुशहाल जीवन प्रदान करना है। मातृभूमि के प्रति श्री राम का यह समर्पण उन्हें मानव से देवत्व की ओर ले जाता है।

द्विवेदी युग के बाद का समय हिन्दी साहित्य में छायावाद के नाम से जाना जाता है। छायावादी कवियों के वर्ण्य विषयों में भारतवर्ष की गौरव गाथा, नारी की कोमल भावनाओं की अभिव्यक्ति तथा प्रकृति की सुकुमारता और उनमें चैतन्य की अनुभूति करना है। छायावादी काव्य के सृजनकर्ताओं में पंत, प्रसाद, निराला एवं वर्मा जी को कवि चतुष्टय के रूप में जाना जाता है। श्री जयशंकर प्रसाद कृत 'कामायनी' नामक महाकाव्यात्मक कृति विश्व साहित्य की अनुपम कृति है। यह कृति मानव मन की अनुभूति के साथ–साथ राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक चेतना संपन्न भी है। प्रस्तुत छन्द में कवि ने कृति की नायिका श्रद्धा के कर्त्तव्य पालन की मार्मिक अभिव्यक्ति की है। इसमें श्रद्धा मनु को समझाती है–

"दब रहे हो अपने ही बोझ, खोजते भी न कहीं अवलंब।
तुम्हारा सहचर बनकर क्या, न उऋण होऊँ मैं बिना विलंब।
समर्पण लो सेवा का सार, सजल संस्कृति का यह पतवार।
आज से यह जीवन उत्सर्ग, इसी पद तल में विगत–विकार।
दया, माया, ममता लो आज, मधुरिमा लो अगाध विश्वास।
हमारा हृदय रत्न निधि स्वच्छ, तुम्हारे लिए खुला है पास।
बनो संसृति के मूल रहस्य, तुम्हीं से फैलेगी वह बेल।
विश्व सौरभ से भर जाए, सुमन के खेलो सुन्दर खेल।"[23]

कवि ने इन छायावादी काव्य पंक्तियों में नारी हृदय की कोमल भावनाओं का यथार्थ वर्णन किया है। श्रद्धा मनु के लिए अपना सर्वस्व अर्पण करके उसे खुशहाल बनाना चाहती है।

Scanned with CamScanner

प्रगतिवादी रचनाकारों ने अपने साहित्य में शोषकों के प्रति आक्रोश तथा शोषितों के प्रति सहानुभूति की भावना को मुखर किया है। इन्होंने महलों और झोपड़ियों के बीच समानता लाने की क्रांति की ज्वाला प्रज्ज्वलित की। इन रचनाकारों ने ही शोषित व पीड़ित जन को यह एहसास दिलाया कि बिना संघर्ष के शोषण से मुक्ति नहीं मिलेगी। अतः समस्याओं से भागने की जगह उन्हें ललकारो, जिन्होंने तुम्हें समस्या दी है। उनसे अधिकार पाकर अपना जीवन सार्थक करो। कवि केदारनाथ कहते हैं–

"साइत और कुसाइत क्या है ?
जीवन से बढ़कर साइत क्या है ?
काटो काटो काटो करबी,
मारो मारो, मारो हँसिया।"[24]

प्रगतिवादी रचनाकारों में सुमित्रानंदन पंत, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, शिवमंगल सिंह सुमन, त्रिलोचन, रांगेय राघव प्रमुख हैं। इनकी रचनाओं का मूल स्वर सामाजिक–आर्थिक विषमता को दूर कर सबके मन में सबके प्रति संवेदना जागृत करना था।

प्रगतिवादी और प्रयोगवादी साहित्य लेखन के समय साहित्य की एक और धारा प्रवाहित हुई, जिसे विद्वानों ने हालावाद की संज्ञा प्रदान की। इस धारा में छायावाद की वेदना, सूफी संतों का दर्शन, भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन तथा विश्व–युद्ध के पश्चात् जनमानस में व्याप्त कुण्ठा, अवसाद व आर्थिक विश्रृंखलता को स्थान दिया गया। इनसे मुक्ति के लिए कवियों ने क्षण–भंगुर संसार की असारत को अभिव्यक्ति प्रदान की। सुख–दुख मय संसार से मुक्ति के लिए बेहोशी व आनंद के गीत गाए। तत्कालीन साहित्यिक धाराओं में हालावाद के महत्व से साहित्य प्रेमी परिचित हैं। हालावादी कवियों में हरिवंशराय बच्चन, बाल कृष्ण शर्मा नवीन, हृदयेश, रामेश्वर शुक्ल अंचल, नरेन्द्र शर्मा प्रमुख हैं। कवि हरिवंशराय बच्चन कहते हैं–

"क्षीण, क्षुद्र क्षण भंगुर दुर्बल, मानव मिट्टी का प्याला।
भरी हुई है जिसके अंदर, कटु–मधु जीवन की प्याला।।
मृत्यु बनी है निर्दय साकी, अपने शत–शत कर फैला।
काल प्रबल है पीने वाला, संसृति है यह मधुशाला।।"[25]

प्रस्तुत कविता में कवि ने दार्शनिक एवं रहस्यवादी तत्वों का समावेश कर जीवन–मरण की शाश्वत प्रक्रिया को वाणी प्रदान की है।

जहाँ प्रगतिवादी रचनाकारों ने सामाजिक समानता की भावना को स्वर दिया; हालावादी रचनाकारों ने सुख–दुख मय संसार में आनंद और उल्लास से जीवन यापन करने की प्रेरणा दी; वहाँ प्रयोगवादी रचनाकारों ने व्यक्ति और समाज के अंतर्संबंध को अपने काव्य का विषय बनाया। प्रयोगवादी काव्यधारा के विषय में लेखिका डॉ. शशि जी कहती हैं– "प्रयोगवादी काव्य ने परंपरागत भाषा शैली और विषय सभी के प्रति विद्रोह किया है तथा नई भाषा, नई शैली और नए काव्य विधानों की रूप सज्जा साहित्य को प्रदान की है। उसने कविता में नए छन्द एवं उपमान का प्रयोग किया।"[26]

उक्त कथन से यह बात स्पष्ट होती है कि प्रयोगवादी रचनाकारों ने भाव पक्ष व कला पक्ष दोनों ही दृष्टि से नए प्रयोग किए। प्रयोगवादी रचनाकारों में 'अज्ञेय' प्रयोगवाद के शलाका पुरुष के रूप में विख्यात हैं। उनकी कविता 'यह दीप अकेला' में दीपक के माध्यम से एक व्यक्ति की इच्छा प्रकट की गई है, जो अपना गुण, अपनी कला तथा प्रतिभा समाज को समर्पित कर उसे समृद्ध बनाना चाहता है। अतः समाज को भी चाहिए कि उसे उचित अवसर प्रदान कर उसके जन्म को सार्थक करे तथा उसकी महत्वपूर्ण भूमिका का लाभ भी उठाए।

"यह दीप अकेला,
है गर्व भरा मदमाता पर,
इसको भी पंक्ति दे दो।
यह जन है : गाता गीत जिन्हें फिर कौन गाएगा।
पनडुब्बा : ये मोती सच्चे फिर कौन कृति लायेगा।
यह समिधा : ऐसी आग हठीला बिरला सुलगाएगा।
यह अद्वितीय : यह मेरा : यह मैं स्वयं विसर्जित।"[27]

हिन्दी साहित्य जगत में काव्य के तीन स्वरूप हैं– पद्यकाव्य, गद्यकाव्य तथा चंपूकाव्य। जिस तरह लय, गति व यति से युक्त छन्द बद्ध रचना को पद्य काव्य कहा जाता है; उसी तरह तर्कसंगत तथा सहज भाव से बद्ध विचारों के प्रस्तुतिकरण को 'गद्य' काव्य कहा जाता है। चंपू काव्य गद्य और पद्य काव्य की मिश्रित शैली को कहा जाता है। कविवर मैथिलीशरण गुप्त कृत 'यशोधरा' नामक महाकाव्यात्मक कृति को आधुनिक हिन्दी का चंपू काव्य कहा जाता है। गद्य साहित्य की रचना की शुरुआत पद्यकाव्य की रचना के समकालीन मानी जाती है, किन्तु इस अध्याय के विस्तार को ध्यान में रखते

Scanned with CamScanner

हुए आधुनिक गद्य विधाओं में ही भारतीय मूल्यों की अभिव्यक्ति पर ध्यानाकर्षित करना उचित होगा। हिन्दी की गद्य विधाओं में उपन्यास, कहानी, नाटक, एकांकी, निबंध, रेखाचित्र, संस्मरण, डायरी लेखन, रिपोर्ताज आदि अनेक विधाएँ शामिल हैं।

गद्य साहित्य में उपन्यास विधा का महत्वपूर्ण स्थान है। उपन्यास विधा अपनी विस्तृत भावभूमि के माध्यम से मानवीय मूल्यों को उद्घाटित करने में पूर्णतः सक्षम है, क्योंकि उपन्यासकार समाज से प्राप्त अपने अनुभवों को बड़ी संजीदगी और गंभीरता से विस्तारपूर्वक प्रस्तुत करने में समर्थ होते हैं। साहित्यकार प्रेमचन्द जी को उपन्यास सम्राट की उपाधि प्रदान की गई है। इनकी औपन्यासिक कृतियों में यथार्थ और आदर्श दोनों ही मूल्यों का मणिकांचन संयोग है। इन्होंने अपनी रचनाओं में भारत की सामाजिक, राजनैतिक तथा आर्थिक परिस्थितियों का स्वाभाविक चित्रण किया है। उन्होंने गबन नामक औपन्यासिक कृति में नायक–नायिका को भौतिकता से आध्यात्मिकता की ओर उन्मुख करते हुए हृदय परिवर्तन किया है। भारत के सोलह संस्कारों में विवाह नामक संस्कार को परिवार का रीढ़ कहा जाता है। इस संस्कार के माध्यम से युवक–युवतियों के माता–पिता योग्य वर–वधु की तलाश करके उन्हें दाम्पत्य सूत्र में बाँधते हैं। यही युवक–युवती पति–पत्नी के रूप में जीवन–निर्वाह करते हैं। पहली पीढ़ी को संरक्षण प्रदान करना तथा नई पीढ़ी को जन्म देकर उचित संस्कारों के माध्यम से बच्चों को योग्य नागरिक बनाना इनका प्रमुख कर्त्तव्य होता है। विवाह जैसे संस्कार में प्रसन्नता व उत्साह की अभिव्यक्ति स्वाभाविक है। ऐसे शुभ अवसरों पर रिश्तेदारों, परिचितों, मित्रों आदि का एकत्रित होना खुशियों में सदैव वृद्धि करता आया है। जब ऐसे संस्कारों में लोग दिखावा व आडंबर करते हैं, तब प्रेमचन्द जी जैसे साहित्यकार मूल्यों के संरक्षण हेतु प्रयास करते प्रतीत होते हैं। बारात की शोभा यात्रा की फिजूल खर्ची इन शब्दों में दृष्टव्य है– "नाटक उसका 'पास' होता है जब रसिक समाज उसे पसन्द कर लेता है। नाटक की परीक्षा चार–पाँच घण्टे तक होती रहती है। बारात की परीक्षा के लिए केवल इतने ही मिनटों का समय होता है। सारी सजावट, सारी दौड़–धूप और तैयारी का निबटारा पाँच मिनटों में हो जाता है। अगर सबके मुँह से वाह–वाह निकल गया तो तमाश पास नहीं तो! रुपया, मेहनत, फिक्र सब अकारथ। दयानाथ का तमाश पास हो गया। शहर में वह तीसरे दर्जे में आता, गाँव में अव्वल दर्जे

में आया। कोई बाजों की धो–धो, पों–पों सुनकर मस्त हो रहा था, कोई मोटर को आँखे फाड़–फाड़ कर देख रहा था। कुछ लोग फुलवारियों के तख्ता देखकर लोट–लोट जाते थे। 'आतिशबाजी' ही मनोरंजन का केन्द्र थी।"[28]

अतः यह स्पष्ट है कि पुरुषार्थों में धनोपार्जन के महत्व से सभी परिचित है, शेष पुरुषार्थ इसी पर अवलंबित है, धन का दुरुपयोग परिवार की समस्या का कारण बन सकता है।

औपन्यासिक विधाओं का विस्तार अधिक होने से इनमें मानव जीवन के अनेक मूल्यों पर सविस्तार चिंतन किया जा सकता है, किन्तु कहानियाँ गद्य विधाओं में संक्षिप्त विस्तार के बावजूद साहित्यकार के भावों व विचारों को समग्रता में प्रस्तुत करने में सक्षम होती हैं। हिन्दी के कहानीकारों ने अनेक पृष्ठभूमि पर कालजयी कहानियों की रचना की है। कहानीकार 'सुदर्शन' की कहानी 'हार की जीत' भी उनमें से एक है। इस कहानी में डाकू खड्गसिंह द्वारा बाबा भारती के प्रिय घोड़े को धोखे से लुट लिये जाने पर बाबा भारती अत्यंत विचलित होने के बावजूद असीम धैर्य का परिचय देते हैं। साथ ही खड्गसिंह का हृदय परिवर्तन कर उसमें मानवीय गुणों का संचार करते हैं। खड्गसिंह के द्वारा अपाहिज बनकर घोड़ा लुटे जाने के बाद बाबा भारती कहते हैं– "इस घटना को किसी के सामने प्रकट न करना।" [29]

खड्गसिंह को उनकी बात समझ नहीं आती और वह पूछता है –

"बाबा जी इसमें आपको क्या डर है"[30]

प्रश्न के उत्तर में बाबा भारती कहते हैं– "लोगों को यदि इस घटना का पता लग गया तो वे किसी गरीब पर विश्वास नहीं करेंगे।"[31]

"यह कहते–कहते उन्होंने सुल्तान की ओर से इस तरह मुँह मोड़ लिया जैसे उनका उससे कभी कोई संबंध ही न रहा हो।

बाबा भारती चले गए, परन्तु उनके शब्द खड्गसिंह के कानों में उसी प्रकार गूंज रहे थे। सोचता था कैसे उच्च विचार हैं, कैसा पवित्र भाव है। इन्हें इस घोड़े से प्रेम था, इसे देखकर उनका मुख फूल की नाई खिल जाता था। कहते थे– इसके बिना न रह सकूँगा। इसकी रखवाली में कई रात सोए नहीं। भजन–भक्ति न कर रखवाली करते रहे, परंतु आज इनके मुख पर दुःख की रेखा तक न दिखाई पड़ती थी।

Scanned with CamScanner

उन्हें केवल यह ख्याल था कि कहीं लोग गरीबों पर विश्वास करना न छोड़ दें। ऐसा मनुष्य, मनुष्य नहीं देवता है।"[32]

खड्गसिंह का हृदय परिवर्तन कर लेखक ने उसे डाकू से साधु बनने की दिशा में अग्रसर किया है। खड्गसिंह बाबा भारती के अस्तबल में घोड़े को बांधकर आत्मिक शांति की अनुभूति करता है। बाबा भारती इस परिवर्तनशीलता को देखकर कहते हैं– "अब कोई गरीबों की सहायता से मुँह न मोड़ेगा।"[33] जीवन की मुख्य धारा से कटे हुए लोगों को पुनः जीवन धारा से जोड़ना, साहित्यकार का मुख्य उद्देश्य है। यही उद्देश्य प्रस्तुत कहानी में अंतर्निहित है।

नाट्य विधा गद्य साहित्य की बहुत प्राचीन विधा मानी जाती है। यह विधा एक दृश्य काव्य है, अतः इनमें पात्रों के अभिनय, संवाद व दृश्यों का महत्वपूर्ण स्थान होता है। इन्हीं के सहारे कथावस्तु आगे बढ़ती है। आधुनिक नाट्य लेखन परंपरा की शुरुआत भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से होती है। भारतेन्दु कृत 'अंधेर नगरी' हास्य–व्यंग्य प्रधान एक नाट्य कृति है। इसका मुख्य उद्देश्य जन–सामान्य में एक शासक के प्रति चेतना उत्पन्न करना है। अन्यायी और अविवेकी राजा से प्रजा किस प्रकार परेशान होती है, ऐसे शासक से मुक्ति के लिए क्या प्रयास किए जा सकते हैं, इस पर नाटककार ने चिंतन किया है।

भारतेन्दु जी के पश्चात श्री जयशंकर प्रसाद इस विधा को समृद्ध करने वाले साहित्यकार हैं। नाटकों के विकास में इनका योगदान अमूल्य है। इनके नाटकों में ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और राष्ट्रीय भावना को विशेष स्थान मिला है। इनकी रचनाएँ युगीन होते हुए भी तत्कालीन परिस्थितियों को स्पष्ट करने में समर्थ हैं। ध्रुवस्वामिनी, चन्द्रगुप्त, स्कन्दगुप्त ऐसी ही कृतियाँ हैं।

ध्रुवस्वामिनी नाटक नारी–चरित्र को उद्घाटित करने वाली अप्रतिम कृति है। इसमें मानवीय मूल्य, राष्ट्रीय चेतना तथा भारतीय संस्कारों का चित्रण व चिंतन है। पुरुष प्रधान भारतीय समाज में नारी–अस्मिता पर इस नाटक में ध्यानाकर्षित किया गया है। नारी चाहे राजपरिवार की हो या सामान्य जन, वह अपनी इच्छानुसार जीवन यापन करने में असमर्थ है। लेखक ने ध्रुवस्वामिनी के माध्यम से नारी विद्रोह को स्वर दिया है। साथ ही उसे इच्छानुसार जीवन प्रदान कर नारी मुक्ति का भी दृश्य नाटक में प्रस्तुत किया है।

"पुरोहित : (हँसकर) राजनीतिक दस्यु। तुम शास्त्रार्थ न करो। क्लीव। श्रीकृष्ण ने अर्जुन को क्लीव किसलिए कहा ? जिसे अपनी स्त्री को दूसरे की अंक गामिनी बनने के लिए भेजने में कुछ संकोच नहीं वह क्लीव नहीं तो और क्या है ? ध्रुवस्वामिनी के मोक्ष की आज्ञा देता है।"[34]

रामगुप्त के साथ ध्रुवस्वामिनी का विवाह जिस पुरोहित ने करवाया है, वही पुरोहित ध्रुवस्वामिनी को रामगुप्त के वैवाहिक बंधन से मुक्त करके चन्द्रगुप्त से विवाह की अनुमति प्रदान करता है। भारतीय संस्कृति में नारी को स्वयंवर का अधिकार प्राप्त है। प्रस्तुत संवाद नारी के इसी अधिकार का उद्घाटन है।

गद्य साहित्य में नाटक की भांति एकांकी भी एक दृश्य काव्य है। नाटक की तरह ही इसमें भी पात्रों के अभिनय व संवाद का महत्वपूर्ण स्थान होता है, किन्तु एकांकी का विस्तार सीमित होता है। आधुनिक हिन्दी साहित्य में इस विधा का उद्भव भारतेन्दु युग से माना जाता है। हिन्दी साहित्य में अनेक पृष्ठभूमि को लेकर एकांकियों की रचना की गई है। भारतेन्दु जी के बाद के रचनाकारों में श्री जयशंकर प्रसाद, भुवनेश्वर, डॉ. रामकुमार वर्मा, डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल, धर्मवीर भारती प्रमुख हैं। डॉ. रामकुमार वर्मा कृत 'औरंगजेब की आखिरी रात' नामक एकांकी में मुगल शासक औरंगजेब के पश्चाताप को मार्मिकता से प्रस्तुत किया गया है।

"आलम (औरंगजेब) : (गहरी सांस लेकर) और जीनत! हमारी बेटी! आज इस आखिरी वक्त में हमारे बिस्तर के नजदीक हमारा एक भी बेटा नहीं है। ऐसे बाप को तुम क्या कहोगी, जिसने बादशाहत में खलल पड़ने के वहम से अपने कलेजे के टुकड़ों को सजा देकर हमेशा कैदखाने में रखा ! अपने नजदीक आने भी नहीं दिया। (सोचते हुए) हमारे कैदी बच्चों। तुम बदकिस्मत हो कि आलमगीर तुम्हारा बाप है। तुमने और कोई गुनाह नहीं किया। तुम लोगों का सिर्फ यही गुनाह है कि तुम औरंगजेब के बेटे हो। आज तुम्हारा बाप मौत के दरवाजे पर पहुँचकर तुम्हारी याद कर रहा है।

मुअज्जम.....आजम.....कामबख्श।"[35]

अपनी गलतियों व अपराधों के लिए आत्मग्लानि एक महत्वपूर्ण मानवीय मूल्य है। जीवन भर स्वार्थ से वशीभूत औरंगजेब न केवल अपनी प्रजा को परेशान करता रहा, बल्कि परिवार के सदस्यों को भी परेशान करता रहा। मृत्यु को निकट देखकर औरंगजेब की अंतरात्मा उसे उसके पापों से

Scanned with CamScanner

अवगत कराती है और वह आत्मग्लानि से भर उठता है। अतः मनुष्य को स्वयं से ऊपर उठकर जीवन जीना चाहिए।

गद्य की अन्य विधाओं की भाँति भी 'निबंध' गद्य साहित्य को महत्वपूर्ण विधा है। डॉ. गुलाबराय ने निबंध को इस तरह परिभाषित किया है– "निबंध उस गद्य रचना को कहते हैं, जिसमें एक सीमित आकार के भीतर किसी विषय का वर्णन या प्रतिपादन एक विशेष स्वच्छन्दता सौष्ठव और सजीवता तथा आवश्यक संगति और संबद्धता के साथ किया गया हो।"[36] अतः यह बात स्पष्ट है कि निबंध किसी विषय का किसी लेखक द्वारा क्रमबद्ध उद्घाटन है, जिसमें लेखक की अपनी भाषा शैली होती है।

आधुनिक हिन्दी निबंध को विद्वानों ने चार युगों में विभाजित किया है–

1. भारतेन्दु युग 2. द्विवेदी युग 3. शुक्ल युग 4. शुक्लोत्तर युग।

हिन्दी के प्रमुख निबंधकारों में राजा शिव प्रसाद, पंडित श्रद्धानंद, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, प्रताप नारायण मिश्र, महावीर प्रसाद द्विवेदी, चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, सरदार पूर्ण सिंह, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी प्रमुख हैं। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी अपने निबंध 'भारतीय साहित्य की प्राणशक्ति' में कर्म और पुनर्जन्म की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए कहते हैं– "संसार की अपेक्षा भारतवर्ष के साहित्य की एक निश्चित विशेषता है; यह है पुनर्जन्म और कर्मफल का सिद्धांत। प्रत्येक पुरुष को अपने किये का फल भोगना ही पड़ेगा। प्रलय भी हो जाए तो भी वह अपनी करनी के फल से मुक्त नहीं हो सकता।"[37] इस उद्धरण में निबंधकार भारतीय संस्कृति और भारतीय जीवन के उस दार्शनिक पक्ष का उद्घाटन कर रहें हैं, जिसे स्वीकार कर मनुष्य मर्यादित और संयमित जीवन यापन करता है। कर्मफल और पुनर्जन्म का सिद्धान्त भारतीय साहित्य के सनातन मूल्य हैं। इसे अमीर–गरीब तथा सभी संप्रदाय के लोग स्वीकार करते हैं।

उपन्यास, कहानी, नाटक, एकांकी और निबंध के अतिरिक्त भी आधुनिक साहित्यकारों ने अपनी भावनाओं, विचारों, कल्पनाओं, अनुभवों एवं प्रयोगों को प्रकट करने के लिए अन्य गद्य विधाओं को माध्यम बनाया है। इन विधाओं में संस्मरण, रेखाचित्र, रिपोर्ताज, यात्रावृत्तांत, जीवनी, आत्मकथा डायरी लेखन आदि शामिल हैं।

संस्करण नामक विधा के माध्यम से लेखक अपने जीवन के उन अनुभवों का चित्रण करते हैं, जो दूसरों के लिए प्रेरणा व आदर्श बन जाए। अच्छा संस्मरण प्रस्तुत करना एक महत्वपूर्ण कला है। अतः इस विधा में सहजता व रोचकता का समावेश होता है। इस विधा को समृद्ध करने वाले लेखकों में बनारसी दास चतुर्वेदी (संस्मरण हमारे आराध्य), रामवृक्ष बेनी पुरी (माटी की मूरतें), कन्हैया लाल मिश्र प्रभाकर (जिंदगी मुस्काई), महादेवी वर्मा (स्मृति की रेखाएँ, अतीत के चलचित्र, पथ के साथी) प्रमुख है।

रेखाचित्र के माध्यम से लेखक किसी घटना, स्थान या व्यक्ति के व्यक्तित्व का शब्दों के माध्यम से स्वाभाविक चित्र प्रस्तुत करते हैं। इसमें लेखक की अनुभूति व हृदय की संवेदना प्रकट होती है। अतः सरल व सुगठित भाषा के माध्यम से लेखक इस विधा को समृद्ध करते हैं। डॉ. नगेन्द्र कहते हैं– "चित्रकला का यह शब्द साहित्य में आया तो इसकी परिभाषा भी स्वभावतः इसके साथ आई अर्थात रेखचित्र ऐसी रचना के लिए प्रयुक्त होने लगा जिसमें रेखाएँ हों पर मूर्त रूप अर्थात कथानक का उतार–चढ़ाव आदि न हो, तथ्यों का उद्घाटन मात्र हो।"[38] पंडित पद्म सिंह शर्मा, पं. बनारसी दास चतुर्वेदी, सत्यनारायण कवि रत्न, अमृत लाल नागर प्रमुख रेखाचित्रकार हैं।

रिपोर्ताज का समाचार पत्रों से घनिष्ठ संबंध है। किसी घटना या समारोह का सूक्ष्म निरीक्षण कर लेखक उसे अपनी भाषा से सजीव व रोचक बनाते हैं। इससे पाठक को यथार्थ व स्वाभाविक अनुभूति होती है। रिपोर्ताज साहित्य की ऐसी विधा है, जिसमें लेखक तटस्थता के साथ तथ्यों को प्रस्तुत करते हैं। भाषा की सरलता तथा बोधगम्यता इस विधा के सौन्दर्य में वृद्धि करते हैं। कन्हैया लाल मिश्र प्रभाकर (क्षण बोले कण मुस्काए), संगेय राघव (तूफानों के बीच), अमृत लाल नागर (गदर के फूल) रिपोर्ताज के प्रमुख लेखक हैं।

यात्रा–वृतांत, साहित्य की एक महत्वपूर्ण विधा है। विश्व में व्याप्त अनेकानेक संस्कृति से परिचय यात्रा से भी संभव है। साहित्य में मूल्यों के समागम इसी आदत के अनुभव का परिणाम है। सृष्टि के अनंत रहस्यों और सौन्दर्य की निकटता से अनुभूति, यात्रा करने पर ही संभव है। साहित्यकार इन्हीं विलक्षण अनुभूतियों के लिए जोखिम उठाते हैं और साहस के साथ उसका सामना करते हैं। इन्हीं वृत्तांतों को वाणी प्रदान करना यात्रा–वृतांत

Scanned with CamScanner

कहलाता है। अनादिकाल से संपूर्ण विश्व में जन सामान्य, भिक्षुक, धर्मानुयायी, ज्ञान पिपासु, व्यवसायी एक स्थान से दूसरे स्थान आते जाते रहे हैं। इनके द्वारा प्रस्तुत यात्रा वृत्तांत साहित्य की इस विधा को समृद्ध करते हैं। पाठक इनके अनुभव से प्रेरणा प्राप्त कर जीवन–संघर्ष की ओर उन्मुख होते हैं। धर्मवीर भारती (ठेले पर हिमालय), अज्ञेय (अरे यायावर रहेगा याद, एक बूँद सहसा उछली), राहुल सांकृत्यायन (मेरी जीवन यात्रा के 3 खंड) इस विधा के प्रमुख लेखक हैं।

'जीवनी' किसी विशिष्ट व्यक्ति का संपूर्ण जीवन परिचय होती है। जीवनी लेखक विशिष्ट व्यक्ति के जीवन की घटनाएँ, उसके संघर्ष, स्वभाव तथा व्यक्तित्व का उद्घाटन करते हैं। जीवनी लेखक चूँकि व्यक्ति के अंतः और बाह्य दोनों प्रकार के व्यक्तित्व को अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं, इसीलिए उन्हें सचेत व परिश्रमी होना चाहिए, जिससे किसी महत्वपूर्ण अंश के छूटने का भय न हो। जीवनी साहित्य का इतिहास भी प्राचीन है। यह प्राचीनता धार्मिक–पौराणिक आख्यानों व दन्त कथाओं के रूप में मिलती है। वीर गाथा काल की घटित कथाएँ भी एक तरह की जीवनी ही है।

नाभादास का भक्तमाल, पुष्टीमार्गीय वैष्णव संतों में 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता' तथा 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता' तथा आधुनिक युग की जीवनियों में रामदयाल तिवारी की 'गाँधी–मीमांसा', बनारसीदास कृत 'कविरत्न सत्यनारायण जी की जीवनी', शिवरानी देवी का 'प्रेमचन्द घर में', अमृतराय का 'कलम का सिपाही' इस विधा की प्रमुख कृतियाँ हैं।

आत्मकथा – अन्य गद्य विधाओं की भाँति यह भी महत्वपूर्ण विधा है। इसमें लेखक अपने जीवन के भोगे हुए यथार्थ को समग्रता में प्रस्तुत करते हैं। लेखक अपने परिवेश से प्राप्त मूल्यों को ग्रहण करके स्वयं के व्यक्तित्व का निर्माण करते हैं, इसी व्यक्तित्व का सिंहावलोकन करना आत्मकथा है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि प्रकृति ने सभी मनुष्य को गुण–दोषों से युक्त बनाया है तथा सभी को कहीं–न–कहीं संघर्ष भी करना पड़ता है। इन्हीं बातों को ईमानदारी से विश्लेषण आत्मकथा के माध्यम से किया जाता है, जिससे साहित्य के अध्येता इनके जीवन से प्ररेणा प्राप्त कर सकें।

बनारसी दास कृत 'अर्द्धकथानक' को हिन्दी की प्रथम आत्मकथा मानी जाती है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की 'कुछ जगबीती कुछ आपबीती', अमृतलाल

नागर की 'टुकड़े–टुकड़े दास्तान', श्री हरिवंशराय बच्चन की आत्मकथा – 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ', 'नीड़ का निर्माण फिर' प्रमुख आत्मकथाएँ हैं।

अतः यह स्पष्ट है कि हिन्दी साहित्य में शुरुआत से ही भारतीय मूल्यों के विविध स्वरूप साहित्यकार की रचनाओं में अंतर्निहित है। रचनाकार अपनी रचनाओं के माध्यम से जन–सामान्य को मूल्यों से सदैव परिचित कराते रहे हैं। सहृदय व्यक्ति साहित्य के रसास्वादन के साथ–साथ इनसे प्रेरणा प्राप्त करते हैं। साहित्य में निहित मूल्यों के माध्यम से ही व्यक्ति अपने कर्त्तव्यों व अधिकारों से परिचित होते हैं एवं स्वार्थ से उठकर निस्वार्थ व निष्काम कर्म की ओर उन्मुख होते हैं। गद्य व पद्य की विविधता मनुष्य को समदर्शी बनाती है तथा नई संभावनाओं के बीजारोपण की क्षमता विकसित करने में साहित्यिक मूल्य ही मुख्य भूमिका निभाते हैं। मानव समुदाय अपने जीवन के सुख–दुख व संघर्षों के बीच इनके माध्यम से ही शक्ति व ऊर्जा ग्रहण करते हैं।

सन्दर्भ–सूची :–

1. साठोत्तरी कहानी में मानवीय मूल्य पृ. 13
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास, आ. रामचन्द्र शुक्ल पृ. 73
3. हिन्दी साहित्य का इतिहास, आ. रामचन्द्र शुक्ल पृ. 84
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास, डॉ. नगेन्द्र पृ. 67
5. कबीर ग्रंथावली, भाषाकार– हरिहर प्रसाद गुप्त पृ. 39
6. जायसी ग्रंथावली, संपा. – आ. रामचन्द्र शुक्ल पृ. 20
7. भारती कक्षा 6 – छत्तीसगढ़ राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, रायपुर पृ. 48
8. भारती कक्षा 6 – छत्तीसगढ़ राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, रायपुर
9. कबीर ग्रंथावली, भाषाकार हरिहर प्रसाद गुप्त पृ. 52
10. जायसी ग्रंथावली, सं.– आ. रामचन्द्र शुक्ल पृ. 270
11. प्राचीन हिन्दी काव्य बी.ए. भाग एक – सं. डॉ. सत्यमामा आडिल, पृ. 68
12. भारती कक्षा 6 – छत्तीसगढ़ राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, रायपुर पृ. 48
13. भारती कक्षा 6 – छत्तीसगढ़ राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, रायपुर पृ. 49

Scanned with CamScanner

14. भारती कक्षा 6 – छत्तीसगढ़ राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, रायपुर
15. हिन्दी साहित्य का इतिहास – आ. रामचन्द्र शुक्ल पृ. 110
16. बिहारी सतसई – संपा. जगन्नाथ रत्नाकर पृ. 23
17. केशव ग्रंथावली भाग दो – सं. विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, पृ. 263
18. हिन्दी साहित्य का इतिहास – आ. रामचन्द्र शुक्ल पृ. 153
19. हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ. नगेन्द्र पृ. 347
20. हिन्दी साहित्य का इतिहास (भाषा, संस्कृति, चिंतन) – डॉ. सुशील द्विवेदी पृ. 29
21. हिन्दी काव्य संकलन बी.ए. भाग दो – सं. वीना गुप्त, डॉ. रामविलास गुप्त, पृ. 259
22. साकेत एक अध्ययन – डॉ. नगेन्द्र, पृ. 89
23. कामायनी – श्री जयशंकर प्रसाद (कमल प्रकाशन) पृ. 27
24. आधुनिक काव्य संकलन – सं. गणेश दत्त त्रिपाठी, पृ. 19
25. आधुनिक काव्य संकलन – सं. गणेश दत्त त्रिपाठी, पृ. 05
26. आधुनिक काव्य संकलन – डॉ. शशि, पृ. 07
27. समकालीन काव्य संकलन
28. गबन
29. भारती कक्षा 6 – छत्तीसगढ़ राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, रायपुर पृ. 03
30. भारती कक्षा 6 – छत्तीसगढ़ राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, रायपुर पृ. 04
31. भारती कक्षा 6 – छत्तीसगढ़ राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, रायपुर पृ. 04
32. भारती कक्षा 6 – छत्तीसगढ़ राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, रायपुर पृ. 05
33. भारती कक्षा 6 – छत्तीसगढ़ राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, रायपुर पृ. 05
34. ध्रुवस्वामिनी – श्री जयशंकर प्रसाद पृ. 143
35. हिन्दी साहित्य बी.ए. भाग दो – सं. डॉ. राजेन्द्र मिश्र, पृ. 43
36. शुक्लोत्तर निबंध संकलन – एम. ए. पूर्व. सं.– डॉ. मेघनाथ कन्नौजे, पृ. 02

37. शुक्लोत्तर निबंध संकलन – एम. ए. पूर्व. सं.– डॉ. मेघनाथ कन्नौजे, पृ. 34
38. विविधा – श्री विनोद शंकर शुक्ल, पृ. 06

संदर्भ ग्रंथ :–

1. साठोत्तरी कहानी में मानवीय मूल्य, डॉ. विनीता अरोरा, नमन प्रकाशन नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1999
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास, आ. रामचन्द्र शुक्ल, नमन प्रकाशन नई दिल्ली – 2009
3. हिन्दी साहित्य का इतिहास, डॉ. नगेन्द्र, सरस्वती प्रिंटिंग प्रेस नोएडा – 1973
4. कबीर ग्रंथावली, भाषाकार – हरिहर प्रसाद गुप्त, भाषा–साहित्य संस्थान, इलाहाबाद प्रथम संस्करण 1992
5. जायसी ग्रंथावली, सं. आ. रामचन्द्र शुक्ल, नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी, 19वाँ संस्करण 2056
6. प्राचीन हिन्दी काव्य, बी.ए.भाग एक, सं. डॉ. सत्यभामा आडिल, छत्तीसगढ़ राज्य हिन्दी ग्रंथ अकादमी अन्नपूर्णा प्रकाशन रायपुर – 2016
7. भारती कक्षा 6
8. बिहारी सतसई, सं. जगन्नाथ दास रत्नाकर, प्रकाशक – प्रकाशन केन्द्र लखनऊ– 1989
9. केशव ग्रंथावली भाग 2, संपा. आ. विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, हिन्दुस्तानी एकेडमी इलाबाद 1990
10. हिन्दी साहित्य का इतिहास, डॉ. सुशील त्रिवेदी, म. प्र. उच्च शिक्षा अनुदान आयोग भोपाल – 1980
11. आधुनिक हिन्दी कविता में पौराणिक संदर्भों की पुनर्रचना, डॉ रामदरश राय, नमन प्रकाशन नई दिल्ली 2001
12. कामायनी, श्री जयशंकर प्रसाद, कमल प्रकाशन, नई दिल्ली (नवीन संस्करण) 1992
13. आधुनिक काव्य संकलन, डॉ. शशि त्रिमूर्ति, प्रकाशन– सदर बाजार रायपुर 1982
14. समकालीन काव्य संकलन, डॉ. भारद्वाज, कमल प्रकाशन, नई दिल्ली 1992–93

Scanned with CamScanner

15. भारती कक्षा 6 – छत्तीसगढ़ राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, रायपुर 2002–03
16. ध्रुवस्वामिनी, श्री जयशंकर प्रसाद, संपादक – श्री रत्नशंकर प्रसाद, प्रसाद प्रकाशन वाराणसी – 1987
17. हिन्दी साहित्य बी.ए. भाग दो, संपादक– डॉ. राजेन्द्र मिश्र, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल, तृतीय आवृत्ति 2009
18. शुक्लोत्तर निबंध संकलन एम. ए. पूर्व., संपादक– डॉ. मेघनाथ कन्नौजे, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल 1987
19. विविधा, संपादक– विनोद शंकर शुक्ल, म. प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल 1984

■■

"राज्य में मेरी भी कुछ भूमिकाएँ हैं, इसलिए मैं बहुत महत्त्वपूर्ण हूँ और मेरा जिंदा रहना भी आवश्यक है।"

– डॉ. रमेश टण्डन फूलबंधिया

Scanned with CamScanner

Cultural Nuances of Language and Literature

I. D. Tiwari

Published by
Indira Kala Sangit Vishwavidyalaya
Khairagarh, Chhattisgarh (India)
(Grant provided by UGC Under Merged Scheme of XI Plan)

Scanned with CamScanner

Cultural Nuances of Language and Literature

Editor

Prof. I.D. Tiwari

Published by

Indira Kala Sangeet Vishwavidyalaya
Khairagarh- 491881, C.G., India
(Grant provided by UGC under Merged Scheme of XI Plan)

Scanned with CamScanner

Printer
Chhattisgarh Samvad, Raipur

ISBN: 978-81-910545-9-0

Year: 2012

Rs. 600/-

Published by
Indira Kala Sangeet Vishwavidyalaya
Khairagarh- 491881, C.G., India

Editor
Prof. I. D. Tiwari
Dept. of English
IKS University, Khairagarh
C.G., India
Mob: 9755635555

Scanned with CamScanner

14. An Aesthetic Insight in the Multicultural Context with Reference to P.B Shelly's *Clouds* and Kalidasa's *Meghdootam* 142
Dr. Sunayana Mishra & Vineeta Diwan
15. Rasanubhuti and Hardy's Philosophy of Life 149
Dr.Sushama Tiwari
16. Literature in Translation: Establishing Cross-Cultural Dialogue 164
U.N. Kurrey & Dr. Susan Udai
17. Concept of Beauty in Sanskrit Literature 170
Dr. Vinay Kumar Upadhyay
18. Reinterpretation of Indian Mythical Characters in the Fictional Works of Shashi Deshpande 176
Vinod Kumar Mangwani & Pramod R. Jaware
19. Dushyant Kumar and His Contribution to Hindi Gazhal 187
Lieutenant Dr. Bishnu Dev Singh Mallick
20. भाषा, संस्कृति और समाज 195
ए0 सी0 वर्मा और सुश्री श्रुति खरे
21. मधुबनी चित्रकला का दार्शनिक आयाम 204
डॉ आशा चौधरी
22. वैश्विक तथ्य और भारतीय काव्य 215
जय कुमार साहू
23. अमृत लाल नागर के उपन्यासों में नारी विमर्श 225
भूख, बूंद, और समुद्र तथा अमृत और विष नामक उपनयासों के संदर्भ में
जयती श्रीवास्तव
24. लोक नृत्य हमारी सांस्कृतिक धरोहर–संदर्भ छत्तीसगढ़ 232
डॉ. जयपाल सिंह प्रजापति और डॉ. वैशाली गोलाप
25. भारतीय संस्कारों के परिप्रेक्ष्य मे लोकसंगीत का समाजशास्त्रीय अध्ययन 244
कु. ज्वाला शशिकान्त नागले
26. भारतीय कला रूपों के माध्यम से आजीवन शिक्षा– महानदी बेसिन की गोंड एवं कँवर जनजातियों का सांगीतिक एवं कलात्मक रूप (छत्तीसगढ़ के विशेष संदर्भ में) 254
डॉ. काशीनाथ तिवारी
27. छत्तीसगढ़ के लोकगीतों का संगीत पक्ष 268
लिकेश्वर वर्मा
28. संस्कृत, छत्तीसगढ़ और छत्तीसगढ़ी 279
(छत्तीसगढ़ के विशेष सन्दर्भ में आधुनिक संस्कृत साहित्य का मूल्यांकन)
डॉ. महेशचन्द्र शर्मा

Scanned with CamScanner

अमृत लाल नागर के उपन्यासों में नारी विमर्श

भूख, बूंद, और समुद्र तथा अमृत और विष नामक उपनयासों के संदर्भ में

जयती श्रीवास्तव
शोध छात्रा, हिन्दी विभाग,
इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़

अमृतलाल नागर प्रेमचन्द की परंपरा के अगली कड़ी के साहित्यकार के रूप में प्रतिष्ठित है, जिस प्रकार प्रेमचन्द ने हिन्दी उपन्यास साहित्य को कल्पना और तिलस्म से निकालकर मानव समाज की यथार्थता में उसे प्रतिष्ठित किया, मानव समाज में नारियों की तत्कालीन परिस्थिति का स्वाभाविक वर्णन किया। गोदान, कर्मभूमि, निर्मला, सेवासदन, गबन, आदि उपन्यासों में नारी वर्ग की अलग–अलग विसंगतियों को उपन्यासों का विषयवस्तु बनाया, इतने वर्षो के बाद भी ये विसंगतियाँ आज भी प्रासंगिक है। उसी प्रकार नागर जी के अपने उपन्यासों में एक ओर विभिन्न कालों के तत्कालीन नारी संघर्ष, विसंगति, निराशा, कुण्ठा एवं अकेलेपन को चित्रित किया है तो दूसरी ओर उनके उपन्यासों में नारी के समर्पण, प्रेम, ममता एवं निष्ठा का वर्णन मिलता है ताकि समाज उससे प्रेरणा प्राप्त कर सकें।

नागर जी के कुछ उपन्यासों में नारी जीवन की इसी बेबसी और लाचारी के साथ–साथ उसके अदम्य साहस को प्रस्तुत आलेख में स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है जो नारी को दैवीय गुणों से विभूषित करता है।

भूख (महाकाल) नामक उपन्यास सन् 1943 के बंगाल के भीषण अकाल को पृष्ठभूमि बना कर लिखा गया यह एक मर्मस्पर्शी उपन्यास है। भूख की दयनीय परिस्थिति प्रकृतिप्रदत्त तो थी परन्तु मनुष्य की परम दानवता ने मनुष्य को परम दयनीय बना दिया था। उस दारूण दृश्य को लेखक ने आँखों से देखा था जिसे वे बयाँ करते हुए कहते हैं – "कलकत्ते की सड़को के फुटपाथ ऐसी वीभत्स करूणा से भरे थे कि देख–देख कर जी उमड़ता था..... द्वितीय महायुध्द में गला फँसाए हुए तत्कालीन ब्रिटीश सरकार और निहित स्वार्थो भरे अफसर व्यापारियों के षड़यंत्र के कारण ही हजारों लोग भूखों तड़प–तड़प कर मर गए, सैकड़ों गुलामों की तरह दो मुट्ठी चावल के मोल बिक गए – इस उपन्यास में यह सब अंकित है।"[1]

Scanned with CamScanner

निम्न मध्यम वर्गीय परिवार में भूख से व्याकुल पुरूष अपनी पत्नी के साथ किस प्रकार निमर्मता का व्यवहार करता है – " तुलसी बोष्टम अपनी पत्नी की फटी हुई धोती खींच रहा था।और वह अपनी शक्तिभर चीख – चीख कर रोती हुई उस हजार जगह से फटी हुई मैली धोती को अपने तन से चिपकाए रखना चाहती थी। तुलसी कहता था–अपनी धोती दें दे।मोनाई से चावल लूंगा। उसकी पत्नी कहती थी तुम अपनी धोती क्यों नही बेच देते ?

तामाशाई दोनों तरह के थे– तुलसी के पक्ष वाले ज्यादा थे, नजीरें पेश की जा रही थी – कइयों के घरो में औरते इसी तरह नंगी बैठी है।

पुरूष के आगे अंत मे स्त्री को झुकना ही पड़ा। .... जाते –जाते कह गई –औरतों की लाज भी बेच कर खा लो कै दिन पेट भर लोगे।"[2]

अकाल की इस विभीषिका मे उच्चवर्गीय पूंजीपति पुरूषो के लिए नारी मनोरंजन का सशक्त माध्यम एवं मात्र भोग्या थी। इस उपन्यास का एक प्रमुख पात्र दयाल ऐसा ही पुरूष है जिसके शीशमहल का वर्णन दृष्टव्य है –" .... हाल के चारो ओर कोनो मे शीशम के खूबसूरत स्टैंडों पर विभिन्न मुद्राओ मे नग्न नारी मुर्तियां रखी थी .... पेड़ों से झाँकते हुए चंद्रमा और तारो भरी रात में दरख्त की एक शाख पर फूलों का हिडोंला डालें हुए नग्न सुन्दरी झूल रही है, एक तस्वीर नूरजहाँ की सुहाग रात बनी थी.... एक दुसरी तस्वीर में विश्वामित्र– मेनका तूफानी रात में राजर्षि की कुटिया में आश्रय पाकर छद्मरूपा मेनका बेसुध होकर सो रही थी । स्वर्ग यही है इस चित्र में अनेको अर्धनग्न और प्रायः नग्न रूपसियों से घिरा हुआ शहजादा बैठा हुआ था...., इनके अलावा उमर खैयाम और साकी ,गोपी चीरहरण, मुगलहरम का स्नान गृह, बसंत नारी का निमंत्रण संयोग श्रृंगार के मांसल चित्रो से मन की वासनाएँ स्थूल होने लगी.... ।"[3]

शीशमहल का उपर्युक्त वर्णन दयाल साहब को सन्तुष्ट करने के लिए पर्याप्त नही है वह भूख से बिलखती सभ्य नारियों को अपने पास बुलाकर उनके भोजन की भूख को शांत करके बदले में अपने काम की भूख को शांत करता है ऐसा करने में वह तनिक संकोच नही करता – " पाँचू ने देखा औरते धुली हुई उजली धोतीयाँ पहनकर आई है। अरसे से गाँव में औरत और मर्द किसी के तन पर उजला कपड़ा दिखाई नही देता – ये उजली नई धोतियाँ पाँचू की आँखो के लिए नुमाइशी चीज हो गई थी । .... औरतों के हाथ काँप कर अपना घूँघट

Scanned with CamScanner

हटाने लगे पाँचू ने कौतूहल से देखा – बढ़ई मुनीर की विधवा .... और काली राय की पत्नी ।"[4]

इस तरह एक ओर पुरूष नारी की विवशता का लाभ उठाते हुए उसे वेश्या बनने मजबूर करता है तो दूसरी ओर संभ्रात परिवार का कुल वधुएं शोषण का शिकार होती है।

"शिबू को अपनी पत्नी के प्रति बेहद गुस्सा आ रहा था उसके पास सीधा तर्क था कि पत्नी पति की मिल्कियत है और इसलिए कुदरतन सर्वाधिकार प्राप्त है । बच्चे अपने खिलौने को जैसे जी चाहे खेलें, उसे तोड़ भी डाले– इसमें खिलौने को शिकायत क्यों हो ? शिबू की ज़िद ठीक इसी किस्म की थी .... रात आई, पत्नी कमरे में आई भय को जीतने की भावन क्रमशः शिबू को उत्तेजित करने लगी, अपनी पत्नी को भूख–सूखे शरीर और टूटे हुए मन पर बालात्कार करने लगा । पत्नी जितनी ही पीड़ा होती थी, शिबू का आनंद उतना ही बढ़ता था । शिबू की पत्नी के लिए पति के अत्याचार असह्य हो उठे । .... सहनशीलता की सीमा से परे इस अमानुषिक अत्याचार से घबराकर बड़ी बहू जोर से चीख उठी ।"[5]

पाँचू के पिता की भी यही सोंच थी – "बाबा ज्ञानी और चैतन्य थे परन्तु अपनी इसी कमजोरी के प्रति वह सदा अधिकार में रहे । धर्मपत्नी के साथ संभोग करने को उन्होने कभी व्यभिचार नहीं समझा और इसी नासमझी में वे अपनी धर्मपत्नी को सदैव के लिए वैश्या बनाकर उसके साथ व्यभिचार करते हुए गृहस्थ धर्म का पालन करते रहे ।"[6]

इस प्रकार नारी–जीवन की विसंगति का मार्मिक चित्रण नागर जी ने जीवंतता के साथ प्रस्तुत किया है । इस दयनीय स्थिति के बावजूद नारी अपने हृदय की सहृदयता को सदैव कायम रखती है जो सबके लिए अनुकरणीय है नारी की सहनशक्ति को नागर जी ने इन शब्दों में अभिव्यक्त किया है – "इसके बाद से वह माँ को एक नए रूप में देखने लगा था । इतने दिनों की महातपस्या का तेज उनके कृशगात को प्रतिक्षण नवजीवन दे रहा था । उसी जीवन की ज्योति से वे अपने बच्चों को खिला रहीं हैं । पाँचू धरती के रूप में अपनी माता को देखता था – धरती जिसे मनुष्य प्रतिक्षण अपने पैरों तले कुचलता है परन्तु उसी के सहारे खड़ा भी है । लेकिन पाँचू सोंचता है इस तरह से माँ और कितने दिन जी सकेगी ? कब तक, पाँचू सोंचता है धरती भी इन अत्याचारों को सह सकेगी ?"[7]

'बूँद और समुद्र' नागर जी का एक प्रतीकात्मक उपन्यास है । बूँद व्यक्ति का तथा समुद्र समाज का प्रतीक है । व्यक्ति और समाज

Scanned with CamScanner

के परस्पर संबंधों से ही मानव जीवन के मूल्य संरक्षित रहते हैं । व्यक्ति और समाज के सह–अस्तित्व के लिए जितना महत्व पुरूषों का है उतना ही महत्व नारियों का है । समाज के प्रत्येक वर्ग में नारी अपनी अलग–अलग भूमिका में पुरूषों को सदैव सहारा देती आई है । नागर जी ने इस उपन्यास में 'ताई' एक नारी पात्र का सृजन किया है जो पति द्वारा त्यागे जाने पर अंदर से टूट–सी गई है । इस टूटन में वह शांत व गंभीर न रहकर आक्रोश से भरी हुई सब पर कटु वचनों से प्रहार करती है – "निगोड़ों के तन–मन में कीड़े पड़े, रौवे–रौवे में कोड़ हो, मरों के पूरे घर की अर्थियाँ साथ–साथ उठे, हैजा हो, पिलेग हो, सीतला खाए ।"[8]

पति के घर आने से पहले मायके में ताई के बचपन में उसके माता–पिता का स्वर्गवास हो चुका था, चाचा–चाचियों के दुत्कार के बीच वह पली–बढ़ी, विवाह के पश्चात् पति ने दूसरा विवाह करके उसे त्याग दिया था । ताई के अंदर नारी सुलभ गुण इतनी विसंगतियों के बावजूद कायम है । वह अपनी ममता बिल्लियों के पिल्लों को दूध पिलाकर पूरा करती है । तारा नामक नारी पात्र ताई की हवेली की एक ऐसी किरायेदार है जिसने अन्तर्जातीय प्रेम–विवाह किया है । विवाहोपरांत तारा के लिए मायके और ससुराल के दरवाजे सदा–सदा के लिए बंद हो गए हैं, उसके प्रसव के समय ताई ही तन–मन–धन से सहयोग करके दैवी गुणों से सुशोभित हो जाती हैं । इस प्रसंग में नागर जी ने ताई के रूप में नारी हृदय की कोमल भावनाओं को अभिव्यक्ति दी है जिसे इस समाज ने जन्म से वृद्धावस्था तक अकेलेपन में जीने के लिए विवश किया । ऐसी नारी के हृदय में अब भी ममता, करूणा और अपनत्व का सागर उमड़ रहा है ।

तारा के रूप में आधुनिक नारी के बदलते विचारों को भी नागर जी ने रेखांकित किया है जो अपने जीवन में स्वयं राह बनाकर जीना चाहती हैं परन्तु उसे इस समाज में सहयोग की अपेक्षा उपेक्षा मिलती है फलतः ऐसी युवतियों के लिए तारा का जीवन एक सीख है जो प्रेम–विवाह करके मनचाहा पति प्राप्त करने के बाद भी मन में खुशियों की अनुभूतियाँ नहीं कर पाती क्योंकि पति–पत्नी दोनों के माता–पिता ने उनसे रिस्ता तोड़ लिया है । व्यक्ति को समाज से अलग कर देना अत्यंत भयावह है ।

'बूँद और समुद्र' में नागर जी ने एक और प्रगतिशील नारी का सृजन इस उपन्यास में किया है, वह है 'वनकन्या' । वनकन्या पुरूष–प्रधान समाज में एक पुरूष को जीवन जीने का सही तरीका सिखाती है । सज्जन इस उपन्यास का ऐसा पात्र है जो उपन्यास में

Scanned with CamScanner

शुरू से अंत तक उपस्थित है । वह अपनी अच्छाई–बुराई के बावजूद सुसंस्कृति और विनयशील है किन्तु उसमें भी अन्य पुरूषों की तरह नारी विषयक दुर्बलताएँ हैं । इस दुर्बलता को वनकन्या दूर करके उसमें चारित्रिक दृढ़ता का संचार करती है तथा उसे समाज सेवा की ओर अग्रसर करती है ।

'अमृत और विष' नागर जी का स्वातंत्र्योत्तर उपन्यास है जिसमें स्वतंत्रता पश्चात् भारतीय समाज के वृहत्तर स्वरूप को प्रस्तुत किया गया है । इस उपन्यास के माध्यम से नागर जी ने सदियों पुरानी सड़ी–गली यथार्थता को विष का प्रतीक माना है । अतः समाज में परिवर्तन की अपेक्षा है, यह परिवर्तन स्वयं तो होगा नहीं इसके लिए मानवतावादी दृष्टि की आवश्यकता है । नागर जी कहते हैं विष, अमृत तभी बन सकता है जब मनुष्य का जीवन कर्ममय होगा ।

समाज के विषाक्त वातावरण में नारी की दुर्दशा को लेखक ने इन शब्दों में स्पष्ट किया है – "लच्छू के जीजा बड़े ही कुटिल निकले । उनके माता–पिता ने भी लच्छू की बड़ी बहन के साथ भला बर्ताव न किया । विवाह के साढ़े तीन वर्ष तक जीजी अपने मायके में न झांक सकी । चिट्ठी–पत्री तक लिखने की सुविधा उन्हे न दी गई । इस बीच में एक लड़का हुआ, दिक की बिमारी हुई और जब वह काम करने लायक न रहकर खाट पर पड़ गई तो लच्छू के जीजा उन्हे यहाँ छोड़ गए । यथाशक्ति इलाज करने पर भी लच्छू के माता–पिता अपनी बेटी को न बचा सके । .... ।"[9]

बाल–विवाह एवं विधवाओं के जीवन–संघर्ष को भी नागर जी ने मार्मिक अभिव्यक्ति प्रदान की है । "रानी तेरह बरस की उम्र में विधवा हो गई, झलक भर देखे हुए पति की झांई सी सूरत भी उसके मन से मिट चुकी थी लेकिन यह विद्रोह चमत्कार की तरह तुरन्त गायब भी हो जाता था । वह जानती है कि कुँवारी कन्या की तरह उसका फिर से विवाह नहीं हो सकता । उसके पिता ऋषि–मुनियों के पवित्र धर्म और अपनी स्वर्गीय कोतवाल पिता के ऊँचे नाम की दुहाई देकर बालविधवा रानी का पुनर्विवाह न करने की घोषणा चार बार प्रसंगवश कर चुके थे और पिता की मर्जी के विरूद्ध वह कुछ भी करती । हालाकि कई बार उसके मन में यह बात उठ चुकी है कि बाबू ने फिर अपना पुनर्विवाह क्यों किया, पुरूष के लिए यह पाप क्यों नहीं है ।"[10]

इन परिस्थितियों में जीवन–यापन करना विषपान करने की तरह असह्य है । ऐसी नारियों को अनुभव होता है कि –

Scanned with CamScanner

"वह एकदम अशक्त है, दीन है– उसकी अपनी कोई भी मर्जी होकर भी नहीं है ।"[11]

लेखक ने विधवाविवाह का दृश्य उपस्थित करके विष को अमृत में बदलने का साहस किया है । इस उपन्यास का एक पात्र रमेश ब्राह्मण परिवार का लड़का है वह वैश्य विधवा लड़की रानी के साथ जब विवाह करता है तो रमेश के पिता का ब्राह्मणत्व उस लड़की को वधू के रूप में एकाएक स्वीकार नहीं करता परन्तु धीरे–धीरे उसका मन पिघलने लगता है । उसके इस बदलाव में उसकी धर्मपत्नी का सहयोग अविस्मरणीय है – "पुत्तीगुरू स्नेह विवश दूध पीते बच्चे से, पत्नी की मातृत्व भावना के आगे भोले भाव से नत हो गए, पत्नी ने पना पिलाया, अंगोछे से अपने पति का मुँह पोछा, फिर जमीन पर कुल्हड़ रखने के लिए शरीर को दाहिनी ओर झुकाती हुई बोली – हमें न लड़कन से मोह हैगा, न बिटियन से । जो जिसकी समझ मे आवे करै, जो जिसके भाग में होय सो भोगै । हमाये लिए तो ठाकुर जी करै सब तरीयों से तुम नेक–निके रहो बस । तुमाई गोदी में सिर रख के धन–धन चली जाऊँ बस ।"[12]

वर्तमान भारतीय समाज में आज भी बालिका शिक्षा का प्रचार–प्रसार जिस स्तर पर होना चाहिए वह अब तक संभव नहीं हो पाया है । प्रस्तुत उपन्यास के लेखन काल में तो नारी शिक्षा की दृष्टि से भारतवर्ष और अधिक अंधकार के गर्त में खोया था, तत्कालीन भारतीय समाज में नारी को पढ़ने–लिखने की आजादी नहीं के समान थी । घर के मुखिया द्वारा बालिका शिक्षा का जमकर विरोध किया जाता था किन्तु नागर जी ने इस विष को समाप्त करने की ओर कदम बढ़ाया । उपन्यास की रानी बालविधवा होते हुए भी पढ़ाई करती है साथ ही वह हमउम्र सौतेली माँ को भी पढ़ाई के लिए प्रोत्साहित करती है । दोनों मिलकर घर के प्रधान पुरूष का हृदय परिवर्तन करने में वे सफल हो जाते हैं – "मगर तुम्हारी नई अम्मा आज भी हमसे नहीं बोली, इसके इस्कूल जाने को भी हम अब मना नहीं करेंगे । हमने कल रात ही में खुशी–खुशी यह कह दिया था.... ।"[13]

भारतवर्ष के दो प्रमुख सम्प्रदाय हिन्दु और मुसलमान हैं । नागर जी ने जिस प्रकार हिन्दुओं की कुरीतियों को दूर करने का प्रयास किया उसी तरह मुसलमानों की कुरीतियों ओर भी सबका ध्यानाकर्षित किया और उन्होंने इन कुरीतियों को समाप्त करने के रास्ते भी सुझाए । प्रस्तुत उपन्यास में उनकी पर्दाप्रथा का विरोध बानो नामक नारी पात्र के द्वारा किया जाता है । बानो जब घर से बाहर बेपर्दा

Scanned with CamScanner

लौटती है तब उसके नानाजान कहते हैं कि – "और ये आज तुमने अपनी का कौन सा फैशन अख्तियार किया बानो ?"[14]

तलाकशुदा बानो अपने विवाहित प्रेमी के साथ रहना चाहती है परन्तु सम्पूर्ण समाज में उसकी कोई मदद नहीं करता । अतः वह घर छोड़कर अपने प्रेमी के पास पहुँच जाती है । इस प्रकार बानो अपने जीवन को सुखमय बना लेती है ।

नागर जी ने अपने अन्य उपन्यासों में भी इसी तरह नारी जीवन के संघर्षों को यथार्थ अभिव्यक्ति प्रदान की है – अग्निगर्भा, सुहाग के नुपुर, सात घूँघट वाला मुखड़ा, नाच्यो बहुत गोपाल आदि उल्लेखनीय उपन्यास है ।

भारतीय संस्कृति का चरम लक्ष्य सत्यम शिवम् सुन्दरम् युक्त मानवीय चिन्तन है । इस लक्ष्य तक पहुँचने के लिए नारी और पुरूष का सुसंस्कृत होना आवश्यक है । परिवार और समाज तभी सुखी रह सकता है जब नर और नारी परस्पर सहयोग की भावना से जीवन–यापन करें ।

सन्दर्भ संकेत:

1. भूख – भूमिका पृष्ठ घ
2. –"– पृष्ठ 95
3. –"– पृष्ठ 140, 141
4. –"– पृष्ठ 152
5. –"– पृष्ठ 206
6. –"– पृष्ठ 208
7. –"– पृष्ठ 203
8. बूँद और समुद्र–पृष्ठ 10
9. –"–अमृत और विष– पृष्ठ 133
10. –"– पृष्ठ 120
11. –"– पृष्ठ 120
12. –"– पृष्ठ 301
13. –"– पृष्ठ 310
14. –"– पृष्ठ 356

Scanned with CamScanner

जनकवि केदारनाथ अग्रवाल की सौन्दर्य एवं समष्टि दृष्टि

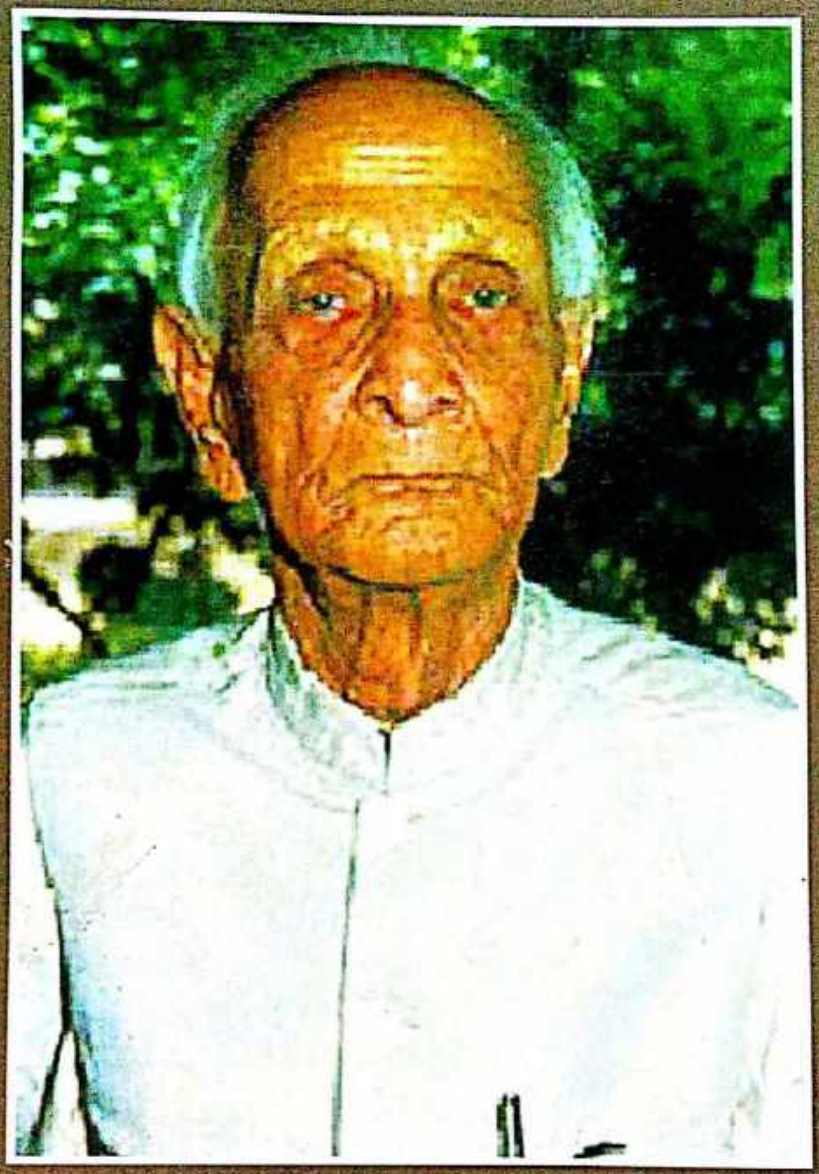

Scanned with CamScanner

श्रीमती जयंती त्रिपाठक

जनकवि केदारनाथ अग्रवाल की सौन्दर्य एवं समष्टि दृष्टि

संरक्षक

प्रो. माण्डवी सिंह

कुलपति

संपादक

प्रो. मृदुला शुक्ल

अध्यक्ष, हिन्दी विभाग

सह संपादक

डॉ. राजन यादव, प्रवाचक-हिन्दी विभाग

डॉ. देवमाईत मिंज, व्याख्याता-हिन्दी विभाग

प्रकाशक

इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय,

खैरागढ़- जिला राजनाँदगाँव (छत्तीसगढ़)

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा 11वीं पंचवर्षीय योजना की मर्ज्ड स्कीम के तहत प्रदत्त अनुदान से प्रकाशित।

Scanned with CamScanner

सर्वाधिकार : प्रकाशकाधीन
प्रथम संस्करण : सन् 2012.
ISBN : 978-81-910545-4-5

मुद्रक
संवाद
शासकीय प्रेस, छत्तीसगढ़ शासन
रायपुर

मूल्य : 400 रु.

Scanned with CamScanner

अनुकमणिका

क्रमांक	शीर्षक		पृष्ठ सं.	
1.	संवेदना एवं संघर्ष के कवि – केदारनाथ अग्रवाल	डॉ.वीणा दाढ़े	1–8	1
2.	स्थानीयता व सहजता से ओत–प्रोत हैं केदार की कविताएँ	प्रो. राजेन्द्र मिश्र	9–13	1
3.	हिन्दी की जनवादी परम्परा और केदारनाथ अग्रवाल का कविकर्म	डॉ. मनोज कुमार पाण्डेय	14–25	1
4.	जनवादी काव्य–परम्परा का परिप्रेक्ष्य और केदार की कविता	डॉ. नरेश कुमार वर्मा	26–28	1
5.	केदार का काव्यसृजन और जनवादिता	प्रो. अलका श्रीवास्तव	29–34	1
6.	सर्जक केदार की युगीन सजगता	श्री नितेश मिश्र	35–36	1
7.	अग्रवालजी का लेखन : साहित्य कर्म और आम आदमी के परिप्रेक्ष्य में	कु. निकेता सिंह	37–39	2
8.	कवि केदारनाथ अग्रवाल और प्रगतिशील काव्यधारा	डॉ. नीलिमा शर्मा	40–45	2
9.	केदारनाथ अग्रवाल की समाजपरक दृष्टि : यात्रावृत्तांत 'बस्ती खिले गुलाबों की' का संदर्भ	श्री आशुतोष चौरे	46–48	2
10.	केदार की सामाजिक–परिष्कार भावना : 'नर्तकी' कहानी के परिप्रेक्ष्य में	श्रीमती जयति श्रीवास्तव	49–	2
11.	श्रम का सौन्दर्यशास्त्र और केदारनाथ अग्रवाल का काव्य	डॉ.जयपाल प्रजापति	52–57	2
12.	केदारनाथ अग्रवाल की रचनाधर्मिता के विशिष्ट आयाम	प्रो. रमाकांत श्रीवास्तव	58–63	
13.	जनकवि केदारनाथ अग्रवाल की कविता में सौंदर्य दृष्टि	डॉ.मधुलता बारा	64–72	

Scanned with CamScanner

केदारनाथ अग्रवाल की कहानी 'नर्तकी' में सौन्दर्य एवं समष्टि दृष्टि

श्रीमती जयति श्रीवास्तव

केदारनाथ अग्रवाल का मानव प्रेम समाजवादी एवं मार्क्सवादी दृष्टि पर आधारित है। वे साहित्य–जगत में एक जनकवि के रूप में विख्यात हैं। वे पेशे से वकील थे, परंतु वे वकालत पैसा कमाने के लिए नहीं, बल्कि आत्मसंतुष्टि के लिए करते थे। उनकी रचनाएँ विश्वास एवं आस्था का संदेश देती हैं। उनकी 'नर्तकी' नामक कहानी में एक नर्तकी के अदम्य साहस का परिचय मिलता है। पुरुषप्रधान इस समाज में नारी का यह साहस अनुकरणीय है।

प्रस्तुत कहानी में एक अत्यंत रूपवती, गुणवती और कलावती नृत्यांगना एक भव्य देवालय के महंत की काम–पिपाशा का शिकार बनती है। विशेष बात यह है कि नृत्यांगना साहसपूर्वक उसका विरोध करके उससे दुश्मनी मोल ले लेती है। संवत् 1970 के समय का आधार लेते हुए कहानीकार ने मंदिर–देवालयों की भव्यता व उनकी भौतिक सुविधा संपन्नता पर प्रकाश डालते हुए नारी समस्या पर ध्यान केन्द्रित किया है। कहानी में नृत्यांगना द्वारा क्षमा–दान दिए जाने के पश्चात खलनायक के हृदय–परिवर्तन का दृश्य भी उपस्थित किया गया है।

मायापुर के देवालय में प्रतिवर्ष गीत, वाद्य एंव नृत्य का सांगीतिक आयोजन भगवान की प्रभामय मूर्ति के आगे होता है, जिसमें शुद्ध आचरण वाली नर्तकियों को ही कला–प्रदर्शन का अवसर मिलता है। प्रतिवर्षानुसार इस वर्ष के आयोजन में एक अपूर्व सुन्दर नर्तकी का आगमन होता है। जब वह अपनी कला का प्रदर्शन करने मंच पर उपस्थित होती है, तो पॉच–दस मिनट में ही एक महंत उठकर उसके शुद्ध आचरण पर आरोप लगाते हुए उसके नृत्य प्रदर्शन पर रोक लगा देता है। उसके कहने पर नृत्यांगना को बंदी बना लिया जाता है। जब नर्तकी को अगले दिन पंचायत की कार्यवाही में उपस्थित किया जाता है, तो वह यह इच्छा जाहिर करती है कि मैं मंदिर प्रांगण में न सही बाहर तो अपनी कला का प्रदर्शन कर सकती हूँ। मुख्य मंहत के अनुमति दिए जाने पर सामान्य जन उस कलावती नर्तकी की कला से परिचित होते हैं। जिस मंहत ने इस नर्तकी की नृत्यकला के प्रदर्शन पर रोक लगवाई थी, वही महंत अपना आपा खोकर नर्तकी को गले लगाने मंच पर चढ़ जाता है। इस प्रकार इस नृत्य प्रदर्शन से नर्तकी एक ओर अपनी कला से लोगों का मन जीत लेती है, तो दूसरी ओर वह अपनी बेगुनाही भी भरी सभा में बिना बोले साबित कर देती है। नर्तकी के रूप में एक नारी अपनी बुद्धिमता का परिचय देती है, लोग नर्तकी की प्रशंसा करने लगते हैं।

Scanned with CamScanner

नर्तकी की बेगुनाही अभी पूर्णतः साबित नहीं हो पायी है। गुरू महंत उसकी बेगुनाही का ठोस सबूत पाना चाहते हैं। नर्तकी अपनी बेगुनाही साबित करने के लिए निडरतापूर्वक कहती है कि मेरे द्वारा भगवान को चढ़ाए फूल यदि गिर जाएँगे, तो मैं निर्दोष हूँ। इस महंत के प्रति कहे गए मेरे एक-एक शब्द बिल्कुल सच है। गुरू महंत को उसकी ईश्वर भक्ति और अटूट आस्था पर आश्चर्य होता है। उन्हें तो इसके पहले अपनी ही ईश्वर भक्ति पर बड़ा गर्व था। वे स्वयं फूल-चढ़ाने देवमूर्ति के पास जाते हैं। फूल तुरंत अपने स्थान से गिर पड़ता है। इस प्रकार नर्तकी की बेगुनाही तथा महंत का गुनाह साबित हो जाता है।

महंत का दोष साबित होने पर उसे प्राणदण्ड मिलता है। जिस नर्तकी को वह महंत अपने काम की आग से भस्म करना चाहता था, वह नर्तकी उसे मृत्युदण्ड से बचाकर आश्रम में सेवा कार्य के लिए मुक्त करवाती है। इस प्रकार उस मंदिर में महंतशाही नीति में कुछ परिवर्तन करके दण्ड विधान में बदलाव किया जाता है, जो दण्ड पहले घृणास्पद एवं दर्दनाक हुआ करते थे। अब अपराधी को मृत्युदण्ड न देकर समाज के सेवाकार्य में लगा दिया जाता है। उस क्रूरता का अंत नर्तकी के हाथों हुआ है। दोषी महन्त का हृदय परिवर्तन करके भौतिक सुविधासंपन्न व्यक्ति का अंततः आध्यात्मिक प्रवृत्ति की ओर झुकाव लेखक द्वारा दिखाया गया है। इस प्रकार हम देखते हैं कि सौन्दर्य जितना बाहरी तत्व है, उससे अधिक वह आंतरिक तत्व है। सौन्दर्य की मूलभावना आत्म-प्रेरणा से उदित होती है। इसके लिए किसी चेष्टा या प्रयास की आवश्यकता नहीं होती। सौन्दर्य वह नहीं, जो बाहुबल से किसी को वश में करके अपना स्वार्थ साधन बनाए, बल्कि स्वयं की रक्षा करने, स्वयं को न्याय दिलाने तथा नुकसान पहुँचाने वाले को भी क्षमादान करने में है।

मौत जीवन की सबसे बड़ी सच्चाई है। इसके नाम से प्रत्येक मानव की आत्मा भय से काँप उठती है। दलित से दलित, कुत्सित से कुत्सित् व्यक्ति भी जीना चाहता है, अतः प्रस्तुत कहानी में जिस निर्दोष नर्तकी को मृत्युदण्ड का सामना करना पड़ा, वही उसे मृत्यु का बहुत निकट से एहसास कराती है। वह अपने विरोधी को मृत्युदण्ड से उबारकर सेवाकार्य में लगाती है, यही लेखक की प्रस्तुत कहानी में सौन्दर्य और समष्टि-दृष्टि है। जिस व्यवहार की हम दूसरों से उम्मीद करते हैं, वही व्यवहार जब दूसरों से करना प्रारंभ करते हैं, तब वातावरण स्वयं शांत एवं सुखद बन जाता है।

शोधार्थी
हिन्दी विभाग,
इं. क. सं. वि. विद्यालय, खैरागढ़

Scanned with CamScanner

२१वीं सदी की कविता का चेहरा

लीलाधर जगूड़ी

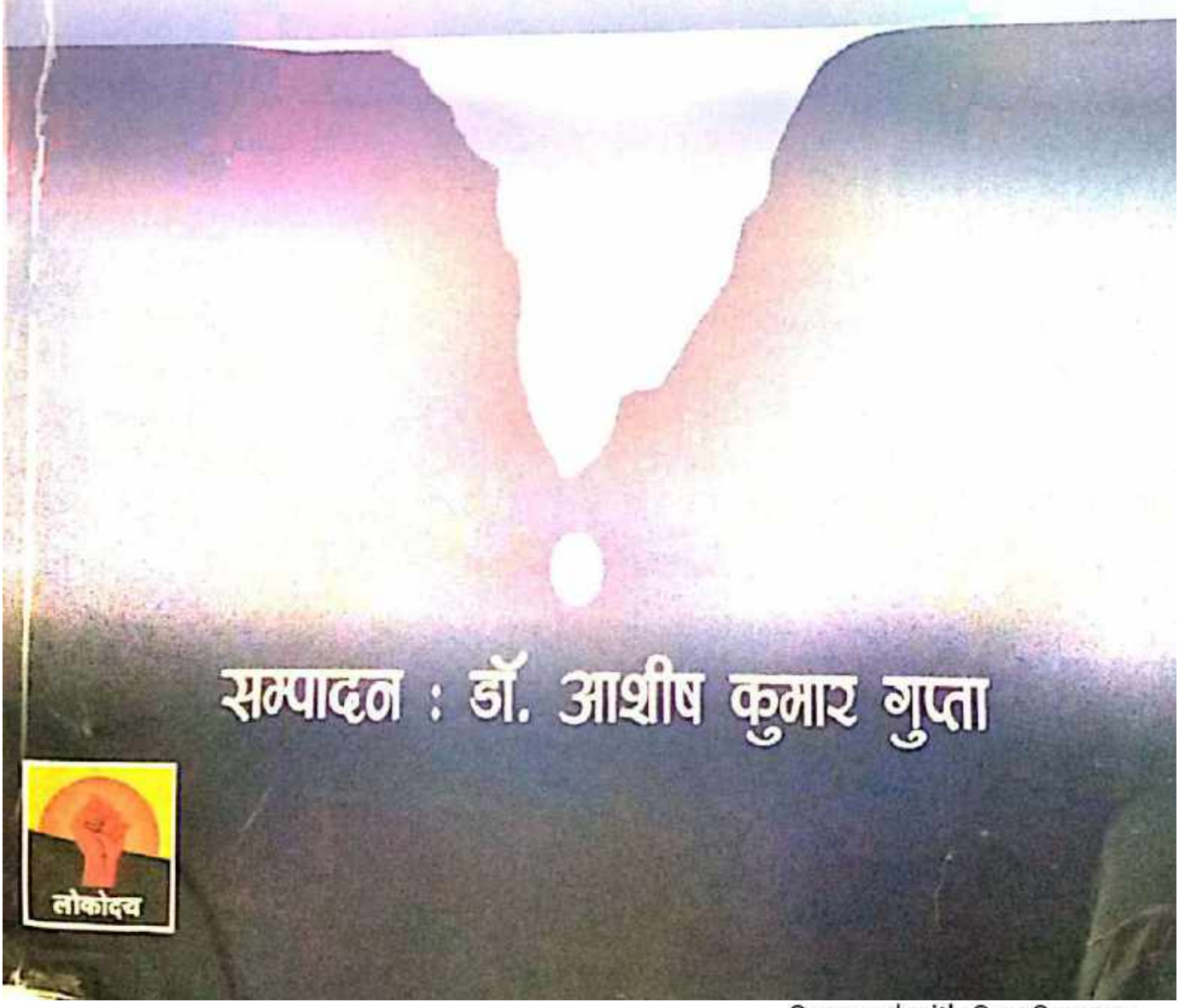

सम्पादन : डॉ. आशीष कुमार गुप्ता

लोकोदय

Scanned with CamScanner

21वीं सदी की कविता का चेहरा

लीलाधर जगूड़ी

सम्पादन

डॉ. आशीष कुमार गुप्ता

लोकोदय प्रकाशन

लखनऊ

Scanned with CamScanner

लोकोदय प्रकाशन
65/44, शंकर पुरी, छितवापुर रोड
लखनऊ–226001
दूरभाष : 9076633657
ई–मेल : lokodayprakashan@gmail.com

कॉपीराइट © डॉ. आशीष कुमार गुप्ता

प्रथम संस्करण : 2018

आवरण एवं रेखांकन : कुँवर रवीन्द्र

मुद्रक : विकास कम्प्यूटर & प्रिन्टर्स

ISBN : 978-93-87149-41-0

Liladhar Jaguri
By Aashish Kumar Gupta

मूल्य : ₹250

Scanned with CamScanner

मनुष्यता के कवि 173
कविता की स्त्री आँख 180
अनुभव के आकाश में चाँद के वैचारिक रूप 184
1960 के बाद के जीवन में भय की शक्ति 188
सामाजिक मनोविज्ञान में हस्तक्षेप के कवि 191
प्रकृति और समाज के अंतर्द्वंद्वों का भावबोध 196
अनुभव के आकाश के लिए चाँद की खोज 200
यथार्थ की लोक चेतना 205
बची हुई पृथ्वी में समाज 210
लोक तत्वों की लबालब समृद्धि 215
कवितामय जीवन का नाम है कवि लीलाधर जगूड़ी 219
परिशिष्ट 223

Scanned with CamScanner

अनुभव के आकाश में चाँद के वैचारिक रूप

डॉ. जयती बिस्वास

'अनुभव के आकाश में चाँद' जगूड़ी के वृहत्तर जीवन की अशेष अनुभवों का काव्य संग्रह है। इस काव्य संग्रह में उन्होंने मानवीय अनुभूति के अति सूक्ष्म भावों की अभिव्यक्ति को वाणी प्रदान की है। समकालीन कवि अपने अनुभवों की अभिव्यक्ति में प्रकृति को माध्यम बनाने में सिद्धहस्त हैं। जगूड़ी भी इसी परम्परा के अग्रणी कवि हैं। इन्होंने भी समकालीन कवियों की भाँति प्रकृति के माध्यम से अपने हृदय के उद्‌गारों को प्रकट किया है। वर्तमान मानव समाज वास्तव में व्यक्तिवादी होकर प्रकृति के प्रति अपने दायित्वों को भूलता चला जा रहा है। वह भौतिक सम्पत्ति एकत्रित करते हुए अपने हृदय की बात को भी अनसुनी करने लगा है। इन भावों की अभिव्यक्ति के लिये कवि 'इस जीवन में' के माध्यम से वाणी देते हैं-प्रकृति की प्रेरणा से उपजी जरूरतें/ बढ़ाती जा रही हैं मेरे खर्च/ घटती जा रही हैं मेरी क्रय शक्ति/...../ जितना जीवन है उससे ज्यादा उससे खर्च करूँ/ एक महंगी चीज खरीदूँ/ बहुत-सी सस्ती चीजें खरीदने के बजाय/ ऐसी चीज खरीदूँ/ जो एक ही दिन में दस वर्ष ले लेती हैं/ (गारंटी युक्त इत्मिनान के साथ)।[1] रोटी कपड़ा और मकान मानव जीवन की प्राथमिक आवश्यकताएँ हैं, जिन्हें प्रकृति से प्राप्त किया जाता है, किन्तु जरूरत से ज्यादा संग्रह करने की होड़ में मनुष्य जीवन के सुखद एहसासों को समझ नहीं पाता व उलझनों में फँसता चला जाता है। फलतः वह न तो प्राकृतिक सौंदर्य का आनन्द ले पाता है न ही उसके प्रति अपने कर्तव्यों का निर्वाह कर पाता है। भ्रमवश झूठे सुख को सुख मानकर वह जीते चला जाता है।

'बसंत आया' कविता मानव के अति स्वार्थ की ओर इशारा करती है। बसंत ऋतु को ऋतुओं का राजा माना गया है। बसंत के आगमन से धरती विविध रंगों और सुंगधी से आच्छादित होकर सबको आनन्दित व तृप्त करती है। पूर्ववर्ती कवियों ने बसंत ऋतु में धरती के सौंदर्य का अपने-अपने शब्दों में वर्णन किया

Scanned with CamScanner

है। जगूड़ी वर्तमान में बसंत ऋतु को इस दृष्टि से देखते हैं-बसंत आया तमतमाया/ खून खौलाया/ इतनी सारी लाशों के बीच बसंत आया/ दबे हुए फूटकर बंधे हुए जैसे छूटकर/ जोड़-तोड़ वाले जैसे पूरी तरह टूटकर निकले/ पत्तों से भरा पेड़ झन्नाया/ इतनी सारी लाशों के बीच बसंत आया।[2] बसंत ऋतु का यह दृश्य बदलते हुए मानव व्यवहार को प्रकट करता है। वर्तमान बसंत कवि की दृष्टि में हिंसक, डरावना व वीभत्स हो चुका है। प्रकृति के इस उग्र रूप के माध्यम से कवि मानव मन को पढ़ने व समझने की कोशिश करते हुए दिखते हैं जिनमें उन्हें केवल आतंक ही दिखता है। उपर्युक्त प्रकृति की उग्रता के पश्चात वे इनके सौम्य रूप से भी हमें परिचित कराते हैं तथा वनस्पति के महत्व को प्रकट करते है। 'न होने का होना' कविता में वे कहते हैं-पेड़ की छाया ब्रह्माण्ड का चेहरा है। सूर्यमुखी ब्रह्माण्ड का/ अधबना। अधभूला। अधोमुखी चेहरा/ दिन भरा के पेड़ जीवन भर की छायाएँ फैलाए हुए/ जीवन से भरी छाया, दुनिया भर की जंगल हो जाती है/ दुनिया के जीवन भर जंगल हो जाते है मिलकर एक महा वृक्ष।/ रात हो जाती है उस महा वृक्ष की छाया।[3] प्रस्तुत छंद में कवि ने प्रकृति के प्रति दार्शनिक दृष्टिकोण को अभिव्यक्ति दी है। पेड़ मानव जीवन के आधार हैं। कवि को पेड़ मात्र पेड़ प्रतीत नहीं होते बल्कि उन्हें वे ब्रह्माण्ड का सूक्ष्म स्वरूप मानते हैं। वनस्पति के न रहने पर जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती। जीवन सतत् गतिशील व परिवर्तनशील है। पेड़ भी अपने सम्पूर्ण आकार के बावजूद परिवर्तनशील हैं इसीलिए कवि ने वृक्ष को अधबना अधमूला व अधोमुखी कहा है। पेड़ अपनी जड़ गहराई तक ले जाकर स्वयं को मजबूती प्रदान करते हैं और ऊपर की ओर फैलकर अपनी छाया को देख पाने में समर्थ होते हैं जिससे आश्रय प्राप्त करने वाले प्राणी को निराश न होना पड़े। पेड़ अपनी संख्या बढ़ाकर जंगल का स्वरूप प्राप्त करके लोकमंगल के लिये प्रस्तुत होते हैं। परोक्ष रूप कवि पेड़ों के माध्यम से मानव जीवन के उद्देश्य की ओर संकेत करते हुए दिखते हैं।

'बाजार में' कविता के माध्यम से हम जीवन की कठोर सच्चाई से परिचित होते हैं-जब एक पेड़ मरता है/ एक झरना सूख जाता है/ जब एक झरना सूख जाता है/ एक कुआँ अंधा हो जाता है/ मृत्युलोक के बाजार में फिर भी हवा चलती है/ फिर एक बीज नदियाँ पार करता है/ एक तत्व दूर से आकर किसी दूसरे तत्व को छूता है/ किसी ह्रास पर थोड़ी घास रोमंचित होती है/ और बढ़ने लगती है/ तिनको जैसी कड़ी पड़ जाती है बची हुई करूणा/ इतनी यह दृढ़ता/ पेड़ो थपेड़ों चट्टानों मकानों से टकराने के लिये/ काफी है।[4]

Scanned with CamScanner

इन छंदों में कवि ने पेड़ व घास के माध्यम से वनस्पति का महत्व स्पष्ट किया है, साथ ही इनके माध्यम से विपरीत परिस्थिति में अस्तित्व बनाए रखने की प्रेरणा मिलती है। जिस प्रकार घास स्वयं को छोटा न समझकर अपनी संख्या इतना कर लेती कि वह विषम परिस्थिति से बची रह सके। पेड़ों के न रहने पर झरनों का सूखना, कुएँ का अंधा होना, बीज द्वारा नदियाँ पार करना आदि उपमाएँ मनुष्य को नैतिकता की राह पर चलने की दिशा में अग्रसर करता है। मानव जीवन की अनन्त आवश्यकताओं और उनकी पूर्ति के लिये प्रयास में भागते हुए मनुष्य की दशा को देखकर 'दिल्ली में हैं तो क्या हुआ' कविता में सहज भाव से कहते हैं- दिल्ली वालों की खुशियाँ समुद्र जितनी दूर हैं/ मद्रास वालों की खुशियाँ हिमालय जितनी दूर हैं/ कलकत्ता वालों की खुशियाँ गंगोत्री जितनी दूर हैं।[5] इन पंक्तियों में कवि यह एहसास करते है कि जो चीजें उनके पास हैं उस में आनन्द न ढूँढकर वे उन्हें पा लेना चाहते हैं जो उनकी पहुँच से बाहर हैं। अर्थात् संतोष की प्रवृत्ति को विकसित करना प्रस्तुत कविता का उद्देश्य दिखाई पड़ता है।

'समय के संस्थान में' जगूड़ी जी की एक लम्बी कविता है। इस कविता के माध्यम से बदलते मौसम को प्रतीक मानकर मनुष्य की प्रवृत्ति से वे अवगत कराते हैं। आज का मनुष्य शीत, ग्रीष्म और वर्षा ऋतु के कुदरती एहसास को सहना नहीं चाहता और इससे बचने के लिये नित नये अनुसंधान और आविष्कार करता चला जा रहा है तथा इन आविष्कारों के चंगुल में स्वयं को फँसाता चला जा रहा है। मौसम ने बदल दी है हर तरह की भूख/ गर्मी ठंड बेचती है। हवा बेचती है।/ जाड़ा हीटर बेचता है। कम्बल बेचता है।/ बेचता है आग और आग के समान/ एक ओर मौसम सुलगता है भड़भुज्जे का भाड़/ दूसरी ओर बिकवाता है बड़े-बड़ों का माल।[6]

'पहले एक चाँद जरूरी है' कविता में कवि ने मनुष्य को लक्ष्य निधारित करके उसे प्राप्त करने के प्रयास की ओर प्रेरित किया है। जीवन रूपी आकाश में एक लक्ष्य रूपी चाँद का क्या महत्व है उसे वे इन शब्दों में व्यक्त करते हैं- कहीं एक चाँद जरूरी है/ चार चाँद लगाने के लिये/ क्योंकि जो छोटा हो और बड़ा हो जाये/ बड़ा हो जाने पर भी छोटा हो जाये/ जो होते हुए भी गायब हो सके/ और गायब रह कर भी चमक जाये।[7] चाँद की विविध कलाएँ कृष्ण व शुक्ल पक्ष में दिखाई देती है, चाँद अमावस्या में पूर्णतः अदृश्य हो जाता है तथा पूर्णिमा में अपने पूर्ण स्वरूप में दिखाई पड़ता है। चन्द्रमा की यह असमानता जीवन के पूर्ण लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये छोटी-छोटी कलाओं

Scanned with CamScanner

की ओर संकेत देते हैं पूर्ण लक्ष्य को हृदय में छिपाए हुए छोटे-छोटे प्रयास की ओर कवि ने इशारा किया है यही जीवन की सार्थकता है।

प्रकृति सौंदर्य की यादें प्रायः हर इन्सान की अमूल्य निधि होती हैं। बचपन की यादों में विशेषतः आस-पास का प्राकृतिक परिवेश और उस परिवेश में मौज-मस्ती के सुखद क्षण शामिल होते हैं यही यादें मनुष्य को प्रकृति से जोड़े रखती हैं। कवि अपने इस जुड़ाव को इन शब्दों में प्रकट करते हैं- देखे हुए दृश्यों और चखे हुए स्वादों को याद करते हुए/ घने अंधेरे में भी याद आते है पके हुए जामुनों के रंग...../ घने अंधेरे में भी स्वाद और दृश्य में से फूटता है एक पूरा पेड़/ जड़ तक जाती हैं जड़ें। जड़ तक जाती है हवा/ टहनियों में बदल जाता है पानी/ अंधेरे में खिलते हैं फूल। झरता है पराग/ बहती है नम खुशबू से लदी हुई है अंधेरी हवा।[8]

प्रस्तुत छंद 'यादों की याद' कविता की पंक्तियाँ हैं। इस छंद में कवि ने जामुन के रंग और स्वाद को हृदय से महसूस करते हुए फल के वृहदाकार वृक्ष तक पहुँचने की कल्पना करते हैं पेड़ की आधार तक पहुँचकर हवा और पानी के महत्व से परिचित कराते हैं। जीवन की शुरूआत को वे पेड़ से प्रारंभ करके हवा और पानी को स्वच्छ व सुरक्षित रखने का सन्देश देकर पर्यावरण के प्रति अपनी जागरूकता का मुहर लगाते हैं।

'अनुभव के आकाश में चाँद' नामक काव्य संकलन मनुष्य की अनेक प्रवृत्तियों को प्रकृति के माध्यम से प्रकट कर पाने की क्षमता रखता है। आज का मानव अपने क्षणिक भौतिक सुख के लिये होश खोकर भ्रष्टाचार और स्वार्थ के जंजाल फँसता चला जा रहा है। जगूड़ी की ये कवितायें मनुष्य के अन्दर की आवाज को उद्घाटित कर दिशा-निर्देश देती हैं जिससे वे अपना चारित्रिक बल मजबूत कर सकें।

संदर्भ:

1. अनुभव के आकाश में चाँद पृष्ठ क्रमांक-14
2. वही पृष्ठ क्रमांक-21
3. वही पृष्ठ क्रमांक-28
4. वही पृष्ठ क्रमांक-20
5. वही पृष्ठ क्रमांक-34
6. वही पृष्ठ क्रमांक-41-42
7. वही पृष्ठ क्रमांक-43-44
8. वही पृष्ठ क्रमांक-58

Scanned with CamScanner

रामकथा का वैश्विक परिदृश्य

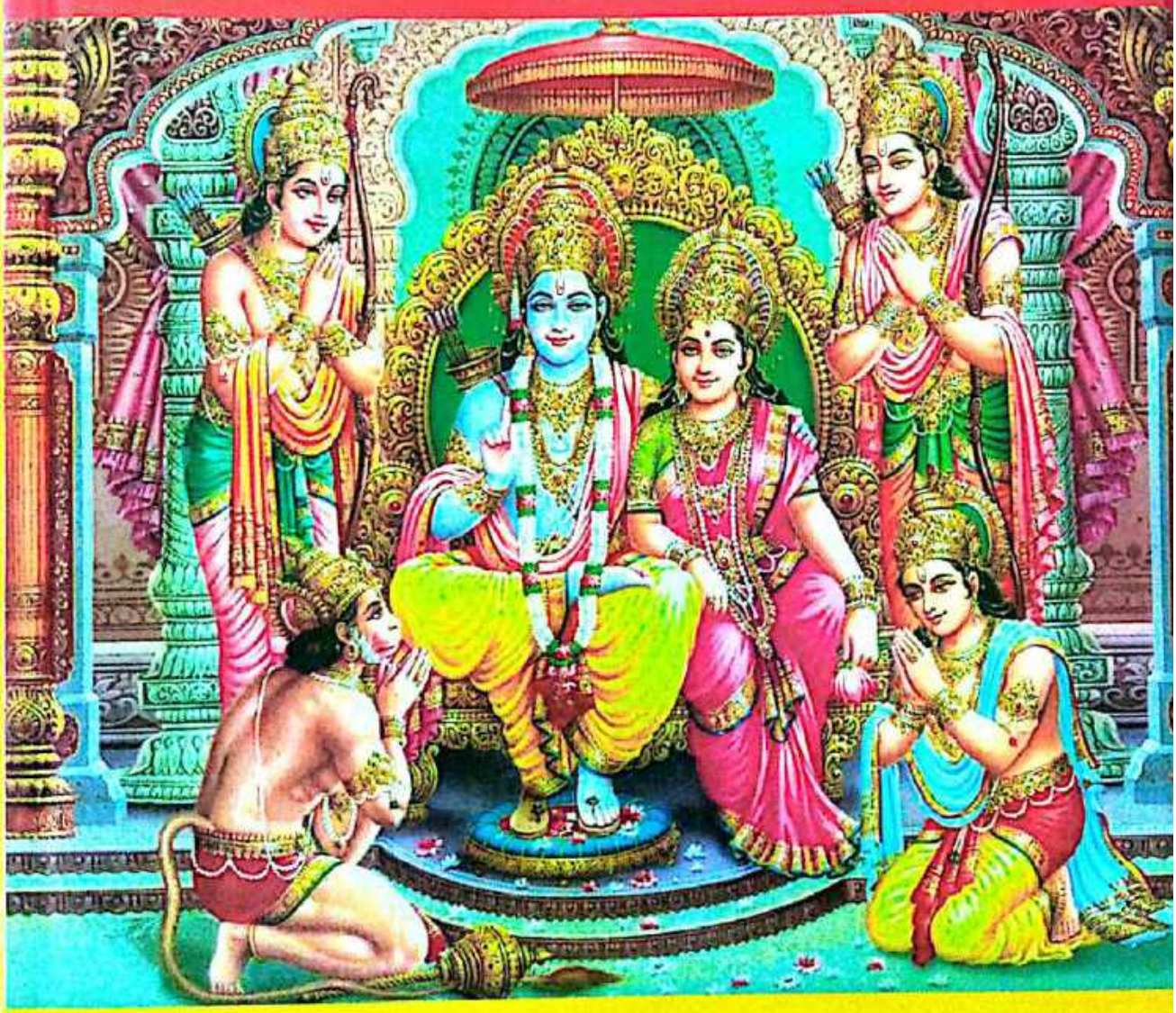

सम्पादक
डॉ. घनश्याम भारती

Scanned with CamScanner

रामकथा का वैश्विक परिदृश्य

मार्गदर्शक/संरक्षक
प्रो. श्याममनोहर पचौरी

सम्पादक
डॉ. घनश्याम भारती

जे.टी.एस. पब्लिकेशन्स
वी-508, गली नं.17, विजय पार्क,
दिल्ली-110053
मो. 08527460252, 011-22911223
ईमेल: jtspublications@gmail.com

Scanned with CamScanner

जे.टी.एस. पब्लिकेशन्स, दिल्ली
इन्टरनेशनल कॉन्फ्रेंस प्रोसीडिंग पीयर-रिव्यूड, रिफर्ड बुक
(पूर्व-समीक्षित, सान्दर्भिक पुस्तक)
हिन्दी-विभाग, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,गढ़ाकोटा सागर मध्यप्रदेश

पीयर रिव्यू टीम

डॉ. श्रीराम परिहार, पूर्व प्राचार्य, खण्डवा, मध्यप्रदेश
डॉ. सुरेन्द्र बिहारी गोस्वामी निदेशक, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल
डॉ० सुरेश आचार्य, पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग, डॉ० हरीसिंह गौर वि.वि., सागर
डॉ० पृथ्वीनाथ पाण्डेय, भाषाविद्-समीक्षक-मीडिया अध्ययन-विशेषज्ञ, इलाहाबाद
डॉ० नीलम जैन, विजिटिंग स्कॉलर, सेंट जोन्स स्टेट यूनिवर्सिटी, अमेरिका
डॉ० सरोज गुप्ता, अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, शासकीय कला/वाणिज्य महाविद्यालय, सागर

वैधानिक चेतावनी

पुस्तक के किसी भी अंश के प्रकाशन- फोटोकॉपी, इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों में उपयोग के लिए लेखक/ संपादक/ प्रकाशक की लिखित अनुमति आवश्यक है। पुस्तक में प्रकाशित शोध-पत्रों में निहित विचार तथा संदर्भों का संपूर्ण दायित्व स्वयं लेखकों का है। संपादक/ प्रकाशक इसके लिए उत्तरदायी नहीं है।

© सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रथम संस्करण : २०१८
ISBN 978-93-87580-31-2

प्रकाशक
जे०टी०एस० पब्लिकेशन्स
वी-५०८, गली नं०१७, विजय पार्क, दिल्ली-११००५३
दूरभाष : ०८५२७ ४६०२५२, ०११-२२६११२२३
E-Mail : jtspublications@gmail.com

मूल्य : ८७५.०० रूपये

ले-आउट डिजाइनः कविता मो.- ९२८६३६३२७८
आवरण : प्रतिभा शर्मा, दिल्ली

मुद्रक : तरूण ऑफसेट प्रिंटर्स, दिल्ली

RAMKATHA KA VAISHVIK PARIDRASHYA
Edited by Dr. Ghanshyam Bharti

Scanned with CamScanner

३७. सन्त काव्य परम्परा और जीवन मूल्य २१६
डॉ. श्रीमती बसुन्धरा गुप्ता
३८. श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण में आयुर्वेद २२४
डॉ. अवधेश प्रताप सिंह
३९. रामायण में राजनीतिक चिन्तन २३१
डॉ. गिरीश लाम्बा
४०. रामचरितमानस और पर्यावरण २३५
डॉ राम आशीष श्रीवास्तव
४१. लोक साहित्य की बुन्देली फाग में जीवन-मूल्य २४२
धनीराम अहिरवार
४२. रामायण में राजनीतिक संदर्भ २४८
अखिल शर्मा
४३. लोकसाहित्य में जीवन-मूल्य २५५
डॉ. संगीता सुहाने
४४. Moral-Values in Ram Katha २६०
Mrs. Shalini Tiwari
४५. Reflection of Rama Katha (The Ramayana) in Indian English Literature २६४
Mrs. Neomi Padma Kumar Mrs. Norah Ruth Kumar
४६. भ्रातृप्रेमी एवं बल पौरुष के उपासक : लक्ष्मण २६८
डॉ. गिरजाशंकर गौतम
४७. लोकहित में समर्पित श्रीरामः श्रीरामचरित मानस के सदंर्भ में २७४
डॉ. जयती बिस्वास
४८. श्रीरामचरितमानस में प्रकृति का रहस्य २७८
बृजलाल अहिरवार
४९. आधुनिक समाज में श्रीराम का आह्वान २८३
श्री पुष्पेन्द्र बर्मन
५०. रामकाव्य परंपरा और तुलसीदास २९०
श्रीमती सीमारानी प्रधान

Scanned with CamScanner

लोकहित में समर्पित श्रीरामः
श्रीरामचरित मानस के सदंर्भ में

डॉ. जयती बिस्वास

सहायक प्राध्यापक(हिन्दी), वीरांगना अवंती बाई शासकीय महाविद्यालय छुईखदान, (छ.ग.)

प्रकृति ने मानव समाज का निर्माण अद्भूत व विलक्षण रूप से किया है इस समाज में गुण व दोष दोनों ही विद्यामान होते हैं। श्रेष्ठ मनुष्य गुणों को ग्रहण कर दोषों का निरकरण करने की कोशिश करते हैं। श्रीराम विश्व साहित्य में विख्यात एक ऐसे व्यक्तित्व के परिचायक हैं जिनका सम्पूर्ण जीवन लोकहित के लिए समर्पित रहा। वे समाज की बुराइयों को दूर करने का सतत् प्रयास करते रहे। गोस्वामी तुलसी दास कृत रामचरित मानस का प्रत्येक काण्ड श्रीराम के लोकहित के उदाहरणों से भरा हुआ है। लोकहित ही धर्म के मार्ग की पहली सीढ़ी है अतः प्रस्तुत शोधपत्र के माध्यम से श्रीराम जीवन से जुड़े कुछ प्रसंगों का उल्लेख करने की कोशिश है जहाँ वे लोकहित में अपनी लाभ-हानि व सुख-दुख भूल जाते हैं।

बाल्यावस्था में ही वे सर्व प्रथम गुरू विश्वामित्र के साथ घने व भयंकर जंगल में राक्षसों के विनाश के लिए आगे आते हैं सर्व प्रथम वे ताड़का नामक राक्षसी का वध करते हैं-

"एक ही बाण प्राण हर लीन्हा। दीन जानी तेही निज पद दीन्हा।।"[१]

श्रीरामचन्द्र जी ने एक ही बाण से ताड़का के प्राण हर लिये और उसे दीनहीन जानकर अपना पद (दिव्यलोक) प्रदान किया।

श्रीराम-लक्ष्मण ताड़का वध के पश्चात् ऋषिमुनि को परेशान करने वाले अनेक राक्षसों का संहार करते हैं। राक्षस वध का वर्णन करते हुए गोस्वामी तुलसी दास लिखते हैं-

"सुनि मारीच निसाचर क्रोही। लै सहाय धावा मुनिद्रोही।।
बिनु फर बान राम तेहि मारा। सत जोजन गा सागर पारा।।
पावक सर सुबाहु पुनि मारा। अनुज निसाचर कटकु संघारा।।
मारि असुर द्विजनिर्भय कारी। अस्तुति करहिं देवमुनि झारी।।"[२]

श्रीराम मुनियों की परेशानी को दूर करने के लिए इस तरह राक्षसों का वध करते हैं जिससे न केवल ऋषि-मुनि ही निर्भय होते हैं बल्कि ब्राह्मण व सज्जन

Scanned with CamScanner

भी भयमुक्त होते हैं। श्रीराम इस वन यात्रा में जब आगे बढ़ते हैं तब वे गौतम मुनि की श्राप ग्रस्त पत्नी अहिल्या को मोक्ष प्रदान करते हैं। इस मार्मिक प्रसंग का वर्णन करते हुए गोस्वामी तुलसी दास जी कहते हैं-

"परसत पद पावन सोक नसावन प्रगट भई तप पुंजसही।
देखत रघुनायक जन सुखदायक सन मुखहोई कर जोरि रही।।
अति प्रेम अधीरा पुलक सरीरा मुख नहिं आवइ बचन कही।
अतिसय बड़भागी चरनन्हि लागी जुगलनयन जलधार बही।।"[3]

श्रीराम चन्द्र जी के पवित्र चरण स्पर्श मात्र से माता अहिल्या श्राप मुक्त होकर श्रीराम के चरणों में स्वयं को समर्पित करके अपना जीवन सार्थक करती है। इस तरह श्रीराम माता अहिल्या का उद्धार करके उन्हें मनवांछित फल प्रदान कर उनका कल्याण भी करते हैं।

श्रीराम मुनि विश्वामित्र के साथ जनकपुरी पहुँचकर शिव धनुष तोड़ कर राजा जनक को चिंता मुक्त करके माता सीता के साथ वैवाहिक संस्कार में अबद्ध भी होते हैं। विवाहोपरांत श्रीराम पत्नी सीता के साथ अयोध्या में रहते हुए दाम्पत्यजीवन में प्रवेश करते हैं तब उन्हें माता कैकेयी के वरदान स्वरूप पिता के वचनों का पालन करने के लिए चौदह वर्ष के वनवास के लिए पुनः वन की ओर गमन करना पड़ता है। इस वनवास को भी वे सहर्ष स्वीकार करते हैं। राजा दशरथ पुत्र श्रीराम को वनवास भेजने के लिए जब असमंजस में पड़ते हैं तो राम अपने पिता को कर्त्तव्य निर्वाह करने की प्रेरणा देते हुए कहते हैं-

"अति लघु बात लागि दुखु पावा। काहुँ न मोहि कहि प्रथम जनावा।।
देखि गोसाइँहि पूँछिउँ माता। सुनि प्रसंगु भए सीतल गाता।।
मंलग समय सनेह बस, सोच परिहरिअ तात।
आयसु देइअ हरषि हियँ, कहि पुलके प्रभु गात।।"[4]

अर्थात् अत्यन्त तुच्छ बात के लिए आपने इतना दुख पाया यह बात मुझे किसी ने नहीं बताई। हे! पिता जी मंगल के समय प्रेम के वश होकर उस सोच को छोड़कर हृदय से आज्ञा दीजिए। इस तरह श्रीराम पिता की आज्ञानुसार भाई लक्ष्मण और पत्नी सीता के साथ वन की ओर प्रस्थान करते हैं। वनवास के समय चित्रकूट नामक पवित्र स्थान पर वे निवास करते हैं। वहाँ वे ऋषि-मुनियों की सहायता करते हैं तथा दुष्ट राक्षसों का संहार करते हैं। भंयकर और दुष्ट राक्षसों के साथ श्रीराम का युद्ध वर्णन करते हुए गोस्वामी तुलसी दास जी कहते हैं-

"उर दहेउ कहेउ कि धरहु धाए बिकट भट रजनीचरा।
सर चाप तोमर सक्ति सूल कृपान परिघ परसु धरा।।

Scanned with CamScanner

प्रभु कीन्हि धनुष टकोर प्रथम कठोर घोर भयावहा।
भए बधिर ब्याकुल जातुधान न ग्यान तेहि अवसर रहा।।
सावधान होइ धाए, जानि सबल आराति।
लागे बरषन राम पर, अस्त्र सस्त्र बहु भाँति।।
तिन्ह के आयुध तिल सम, करि काटे रघुबीर।
तानि सरासन श्रवन लगि, पुनि छाँड़े निजतीर।।"[५]

इन छंदो में श्रीराम व राक्षसों के बीच चल रहे युद्ध की विकरालता का वर्णन प्रस्तुत है। जिसमें श्रीराम बलशाली मायावी राक्षसों से अपने जान की परवाह किये बिना युद्ध करते हैं। यह उनकी वीरता और पराक्रम को उद्घाटित करता है। इस युद्ध में वे राक्षसों का संहार करते हुए उनकी भुजाओं छाती और सिरों को ऐसे काट रहे हैं जैसे वे पंतग उड़ा रहे हों। ऐसे भंयकर राक्षस जब प्राण त्यागते हैं वे भी राम राम कहते हुए मोक्ष को प्राप्त होते हैं। श्रीराम के हृदय की विशालता को देखकर देवता भी प्रसन्नचित होकर उनके ऊपर फूलों की वर्षा करते हैं। इस दृश्य का वर्णन करते हुए कवि कहते हैं-

"राम राम कहि तनु तजहिं, पावहिं पद निर्बान ।
करि उपाय रिपु मारे, छनमहुँ कृपानिधान।।
हरषित बरषहिं सुमन सुर, बाजहिं गगन निसान।
अस्तुति करि करि सब चले, सोभित बिबिध बिमान।।"[६]

इन राक्षसों के संहार से न केवल ऋषि-मुनि व सज्जन भयमुक्त होते हैं बल्कि वनप्राणियों को भी उन राक्षसों के आंतक से मुक्ति मिलती है।

श्रीरामचरित मानस के अरण्यकांड में वर्णित सीता हरण का प्रसंग श्रीराम के लोकहित को उद्घाटित करने में मुख्य भूमिका का निर्वाह करता है। माता सीता जी के हरण के पश्चात् श्रीराम अनुज सहित वनों में भटकते हुए पत्नी को खोजने की कोशिश करते हैं। ऐसी विषम परिस्थिति में पत्नी वियोग को भूलकर व वानर राज सुग्रीव की सहायता करने के लिए सहज भाव से तैयार हो जाते हैं। सुग्रीव एक ओर जहाँ अपने भाई बालि के आंतक से परेशान हैं वहीं दूसरी ओर हिंसक राक्षस भी उन्हें परेशान करने में कोई कमी नही छोड़ते। श्रीराम वानर राज सुग्रीव से मित्रता करके सर्वप्रथम वे उन्हें इन परेशानियों से मुक्ति दिलाते हैं। और उन्हें किष्किंधा वन का राजा भी नियुक्त करते हैं। इस तरह भय और आंतक से पीड़ित मित्र को वे खुशहाल जीवन व्यापन करने की दिशा में अग्रसर करते हैं। उनकी खुशहाली का वर्णन करते हुए तुलसीदास जी कहते हैं-

"बालि त्रास ब्याकुल दिन राती। तन बहु ब्रन चिताँ जर छाती।।

Scanned with CamScanner

सोई सुग्रीव कीन्ह कपिराऊ। अति कृपाल रघुबीर सुभाऊ।।
जानतहूँ अस प्रभु परिहरहीं। काहे न बिपति जाल नर परहीं।।
पुनि सुग्रीवहि लीन्ह बोलाई। बहु प्रकार नृपनीति सिखाई।।"[७]

इन छंदों में श्रीराम न केवल मित्र को राजा बनाते हैं बल्कि एक योग्य राजा के लिए नीति की आवश्यकता से अवगत भी कराते हैं। राजा का मुख्य दायित्व प्रजा की खुशहाली के लिए सचेत रहना है। श्रीराम की यहाँ पर सुग्रीव को दी गई शिक्षा वास्तव में लोकहित है। श्रीराम के जीवन के अनेक ऐसे प्रसंग हैं जिनसे हमें उनके लोकहित की जानकारी प्राप्त होती है। इन प्रसंगों में बालि वध, विभीषण को लंका की राज गद्दी सौंपना एवं माता सबरी के जुठे बेर खाना आदि शामिल हैं। ये समस्त प्रसंग कही न कहीं उनके उदार हृदय को प्रकट करते हैं तथा समाज में व्याप्त ऊँच-नीच के भेद भाव को दूर करने में अहम भूमिका निभाते हैं। श्रीराम का सम्पूर्ण जीवन लोकहित के लिए समर्पित रहा। आज वर्तमान विश्व अनेक भौतिक आविष्कारों से समृद्ध होकर शक्तिशाली बनता जा रहा है किन्तु मानवीय गुणों को क्रमशः त्यागता चला जा रहा है जिससे कि मनुष्य भौतिक समृद्धि के बावजूद मन की शांति का अभाव महसूस करता है। मन की शांति के लिए श्रीराम के मार्ग पर चलकर जीवन को सार्थक करने की आवश्यकता है।

संदर्भ सूचीः-

१. रामचरित मानस- गोस्वामी तुलसी दास पृष्ठ- १८४
२. वही-१८४
३. वही-१८५
४. वही-३५४
५. वही-५६०
६. वही-५६२
७. वही-५६८

संदर्भ सूची -

रामचरित मानस, गोस्वामी तुलसीदास
प्रकाशन :- राजसन्स प्रिंटर्स नई देहली सन्- २००३, ३८वाँ संस्करण, टीकाकार- विद्यारत्न पं. ज्वाला प्रसाद जी पाराशर

***

Scanned with CamScanner

ISBN - 978-93-86810-04-5

।। विश्वभाषा साहित्य और रामकथा ।।

अन्तरराष्ट्रीय शोध-संगोष्ठी का कार्यवृत्त

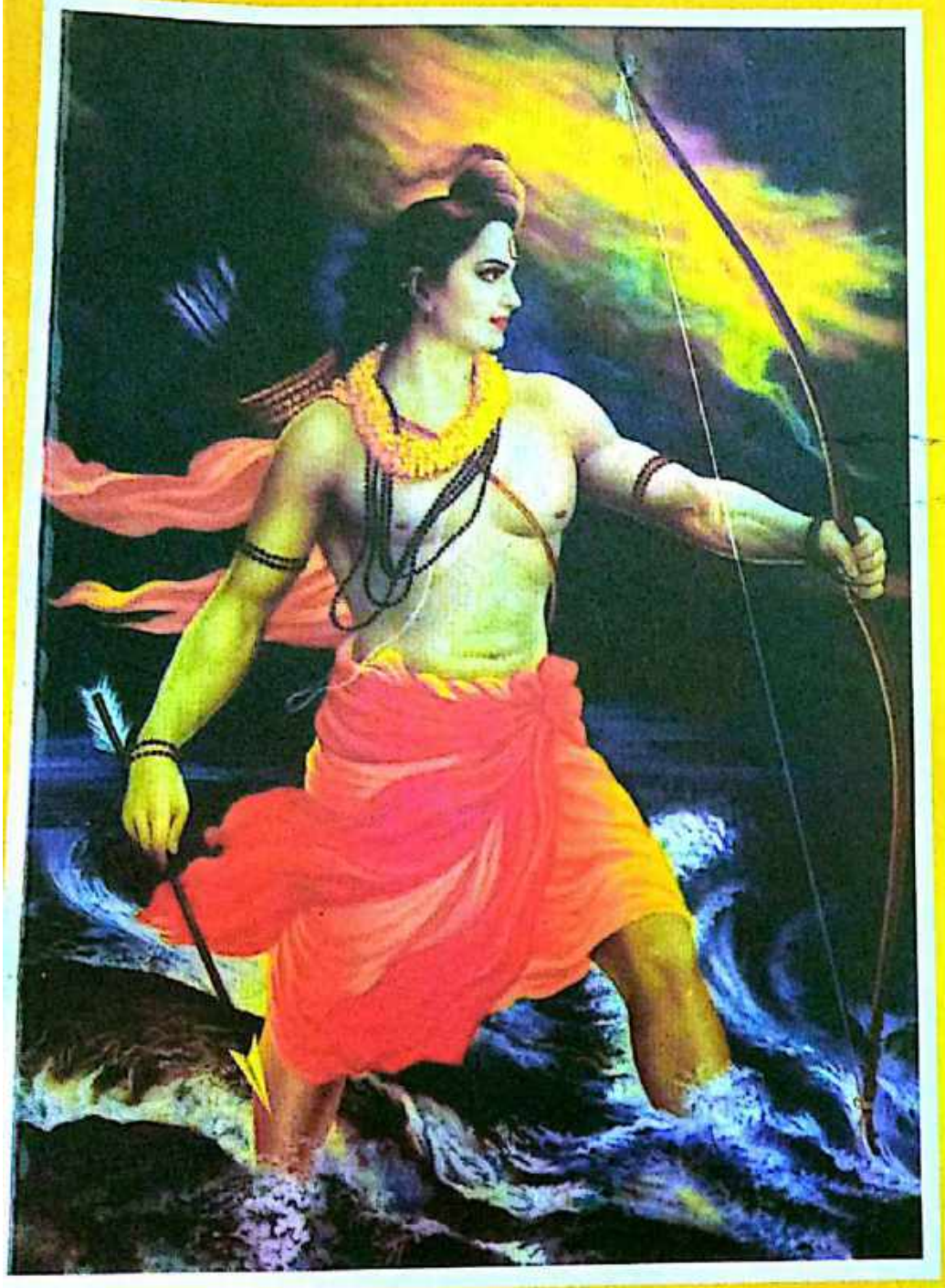

संपादक
डॉ. सरोज गुप्ता

Scanned with CamScanner

विश्वभाषा साहित्य और रामकथा

डॉ. सरोज गुप्ता

अध्यक्ष – हिन्दी विभाग

पं. दीनदयाल उपाध्याय शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर

अनुज्ञा बुक्स

1/10206, वेस्ट गोरख पार्क

शाहदरा, दिल्ली – 110 032

Scanned with CamScanner

अनुज्ञा

वैधानिक चेतावनी

पुस्तक के किसी भी अंश के प्रकाशन - फोटो कॉपी, इलेक्ट्रानिक माध्यमों में उपयोग के लिए लेखक / प्रकाशक की लिखित अनुमति आवश्यक है । किसी भी विवाद के लिए न्यायालय दिल्ली ही मान्य होगा ।

© संपादक अधीन

प्रथम संस्करण 2017

ISBN : 978-93-86810-04-5

पुस्तक में प्रकाशित शोध पत्रों में निहित विचार तथा संदभों का संपूर्ण दायित्व स्वयं लेखकों का है। संपादक इसके लिए उत्तरदायी नहीं है ।

मूल्य : 750/-

प्रकाशक : अनुज्ञा बुक्स, 1/10206, वेस्ट गोरख पार्क
शाहदरा, दिल्ली - 110 032 फोन : 011-22825424, 09350809192
Email : anuugyabooks@gmail.com

मुद्रक : स्वतंत्र कम्प्यूटर एण्ड प्रिंटर्स
पांडे जी के सामने, इतवारी वार्ड, सागर (म.प्र.)
फोन : 07582-243728, 9981466528
Email : swatantra.computer@gmail.com

Scanned with CamScanner

66. हिन्दी में रामकाव्य परंपरा का प्रारंभ एवं विकास 308
डॉ. युवराज सिंह
67. निराला और राम की शक्ति पूजा 313
डॉ. बी.एल. अहिरवार
68. हिन्दी में रामकाव्य परम्परा 317
श्रीमति राजकिशोरी मिंज
69. आधुनिक युग में रामकाव्य परंपरा (सातवे दशक तक) 321
डॉ. संतोष कुमार अहिरवार, डॉ. एच.एस. द्विवेदी
70. सूर्यकांत त्रिपाठी निराला एवं राम की शक्ति पूजा 327
डॉ. किरण खरादी
71. हिन्दी के ललित–निबंधों में राम और रामकथा का स्वरूप 331
डॉ. गजेन्द्र भारद्वाज
72. निराला और राम की शक्ति–पूजा 340
डॉ. अंशुबाला मिश्रा
73. रामचरित मानस : सामाजिक, नैतिक एवं शैक्षणिक उत्थान का सशक्त दस्तावेज 344
श्रीमति राशि गुप्ता
74. राम भक्ति और काव्य परम्परा एक चिन्तन 347
डॉ. नम्रता जैन
75. लोकगीतों में राम का स्वरूप 350
डॉ. आनन्दसिंह पटेल
76. रामकथा के माध्यम से संस्कारों का सृजन कर भारत में राम राज्य की स्थापना 357
डॉ. नीरज केशरवानी
77. श्री रामचरितमानस (अयोध्या काण्ड) में श्रीराम के आदर्शों का विश्लेषण 362
डॉ. (श्रीमती) जयती बिस्वास
78. वर्तमान की मूल्य चुनौतियां और रामकथा द्वारा समाधान 365
डॉ. बी.एन. जागृत
79. रामचरितमानस में पुरूषोत्तम राम का चरित्र 370
डॉ. उषा किरण गुप्ता
80. निराला और राम की शक्ति पूजा 374
डॉ. अवधेश जैन
81. भारतीय समाज और राम का आदर्श 378
आरती धुर्वे

Scanned with CamScanner

श्री रामचरितमानस (अयोध्या काण्ड) में श्रीराम के आदर्शों का विश्लेषण

*डॉ. (श्रीमती) जयती विश्वास

'राम' विश्व के एक ऐसे पुरुषोत्तम के प्रतीक हैं जिनके ऊपर किसी और व्यक्ति को आदर्श स्वरूप प्रस्तुत करना कठिन है। सनातन काल से इनके आदर्शों को ध्यान में रखकर अनेक भक्तों व साहित्यकारों ने अपना जीवन सफल व सार्थक किया तथा आने वाली पीढ़ी को उनके उदात्त चरित्र से परिचित कराया, जिससे कि मानवीय प्राणी मानव जीवन के प्रमुख उद्देश्यों से परिचित हो सकें। रामचन्द्रजी का बहुआयामी व्यक्तित्व उन्हें मानवता के सर्वोच्च स्थान पर स्थापित करता है। उनके आदर्शों पर आधारित अनेक ग्रंथों में गोस्वामी तुलसीदासकृत श्री रामचरितमानस का स्थान सर्वोपरि है। श्री रामचरितमानस साहित्य जगत में एक ऐसा आदर्श महाकाव्य है जिसके स्मरण मात्र से ही मनुष्य का मानस पटल शांत व निर्मल हो जाता है। गोस्वामी तुलसीदास कृत इस श्री रामचरितमानस में बालकाण्ड, अयोध्याकाण्ड, अरण्यकाण्ड, किष्किन्धा काण्ड, सुन्दरकाण्ड, लंकाकाण्ड, उत्तरकाण्ड तथा लवकुशकाण्ड कुल आठ काण्ड हैं। इन सभी आठों काण्डों में श्रीराम जी के आदर्शों के भिन्न-भिन्न स्वरूपों का विश्लेषण है। अयोध्याकाण्ड में उनके जिन आदर्शों को प्रस्तुत किया गया है उन्हीं को आलेख के माध्यम से रेखांकित करने का एक प्रयास है।

विवाह नामक महत्वपूर्ण संस्कार के पश्चात् एक नवयुवक व एक नवयुवती दाम्पत्य जीवन में बंधते है तथा पति-पत्नी के रूप में अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियों का निर्वाह करते हुए जीवन के प्रमुख पुरुषार्थों को धारण करते हैं ताकि जीवन का लक्ष्य पूर्ण हो सके। बालकाण्ड में श्रीराम व सीता भी वैवाहिक संस्कार के माध्यम से इन जिम्मेदारियों की शुरूआत करते हैं। चूँकि वे रघुकुल के ज्येष्ठ पुत्र हैं अतः उन पर पिता राजा दशरथ युवराज पद की भी जिम्मेदारी सौंपना चाहते हैं। इसलिए वे श्रीराम का राज्याभिषेक अतिशीघ्र कर देना चाहते हैं। इस उत्सव से अनजान मंगल सूचक अंग जब फड़कने लगे तब उन्हें ऐसा प्रतीत होता है कि

"पुलकि सप्रेम परस्पर कहहीं, भरत आगमनु सूचक अहहीं।
भए बहुत दिन अति अवसेरी, सगुन प्रतीति भेंट प्रिय केरी।
भर सरिस प्रिय को जग माहीं, इहइ सगुन फलु दूसर नाहीं।
रामहि बन्धु सोच दिन राती। अंडन्हि कमठ ह्रदय जेहि भाँति।।"1

चूँकि विवाहोपरांत श्रीराम के अनुज भरत और शत्रुघ्न अपने ननिहाल में है अतः उन्हीं की यादों में श्रीराम दिन-रात व्यतीत करते हैं। बड़े भाई के मन में अपने अनुजों के प्रति यह अनुराग मात्र श्रीराम के ह्रदय में उमड़ता हुआ क्षणिक आवेग नहीं है। जब वे अपने राज्याभिषेक की बात सुनते हैं तो उन्हें यह अनुभूति होती है-

*सहायक प्राध्यापक हिन्दी, वीरांगना अवंती बाई शास. महाविद्यालय, छुईखदान

Scanned with CamScanner

"जनमे एक संग सब भाई, भोजन शयन केलि लरिकाई।
करनबेध उपबीत बिआहा। संग-संग सब भए उछाहा।
बिमल बंस यहु अनुचित एकू, बंधू बिहाई बड़ेहि अभिषेकू।।"2

राज्याभिषेक का समाचार उन्हें स्वयं के लिए इसलिए अनुचित लगता है कि सभी भाईयों के समस्त संस्कार साथ-साथ हुए किन्तु राज्याभिषेक उनका अकेले का ही संपन्न होगा। वर्तमान समाज में व्यक्ति पद की चाहत में अपने परिवार को तबाह करने से नहीं घबराता वहाँ श्रीराम का अपने भाईयों के प्रति यह प्रेम प्रशंसनीय है। माता कैकेयी अपने वरदान स्वरूप धरोहर को याद करती हुई पति राजा दशरथ से भरत का राजयाभिषेक और श्रीराम को चौदह वर्ष का वनवास चाहती है तो राजा दशरथ मरणासन्न हो जाते हैं। श्रीराम अपने माता-पिता दोनों की इच्छा जानकर उनकी दुविधा का समाधान पल भर में कर देते हैं। उनके लिए राज्य की जिम्मेदारी जंजीर की तरह दुसह्य प्रतीत होती है तथा वनगमन बंधन मुक्त। अतः वे सहर्ष भरत को अयोध्या का उत्तराधिकार प्रदान करने के इच्छुक हैं। तुलसीदास जी श्रीराम की मनः स्थिति का वर्णन करते हुए कहते हैं-

"नाहि न रामु राज के भूखे, धरम धुरीन विषय रस रूखे।"3

वे न तो राज्य के भूखे हैं न ही सांसारिक सुख-दुःख से प्रभावित हैं। जिस माता ने उन्हें वनवास दिया उसी माता के साथ वे अत्यंत अनुकूल आचरण करते हैं-

"मातु वचन सुनि अति अनुकूला, जनु सनेह सुरतरू के फूला।
सुख मकरन्द भरे श्रियमूला, निरखि राम मनु भँवरू न भूला।
आयसु देहि मुदित मन माता, जेहिं मुद मंगल कानन जाता।
जनि सनेह बर डर पसि भोरें, आनंदु अम्ब अनुग्रह तोरे।।"4

श्रीराम का अपनी विमाता कैकेयी के प्रति ऐसा सम्मान पारिवारिक सद्भावना को सुदृढ़ करने का एक महत्वपूर्ण साधन है। वे माता कैकेयी को वचन पूरा कर लौटने की बात करते हुए उन्हें निश्चिंत करते हैं-

"बरस चारिदस बिपिन बसि, कर पितु बचन प्रमान,
आइ पाँय पुनि देखिहऊँ, मनु जनि करसि मलान।।"5

श्रीराम की यह उदारता प्रत्येक पुत्र के लिए अनुकरणीय है। वे अपने व्याकुल पिता को ढाढस बंधाते हुए कहते हैं-

"पितु असीस आयसु मोहि दीजै, हरष समय बिसमउ कत कीजै।
तात किएँ प्रिय प्रेम प्रभाइ, जसु जग जाइ होइ अपवादू।।"6

श्रीराम न केवल अपने माता-पिता के आदर्श पुत्र हैं बल्कि वे अपने पिता को भी एक आदर्श राजा के रूप में देखना चाहते हैं। श्रीराम का वनगमन एक आदर्श पुत्र के व्यक्तित्व की

Scanned with CamScanner

संपूर्ण झाँकी प्रस्तुत करता है। एक पुत्र व्यक्ति चूँकि परिवार के मुख्य सदस्य के साथ–साथ समाज का भी प्रमुख अंग होता है। श्रीराम परिवार नामक इकाई से निकलकर वनवास काल में जब वृहद् समाज में कदम रखते हैं वहाँ भी उन सबके प्रति उनके हृदय में समभाव विद्यमान है। वे वनवासियों के साथ–साथ पशु–पक्षी से भी सदैव प्रेमपूर्ण व्यवहार करते है। भूल से भी किसी अन्य प्राणी के प्रति उनके हृदय में क्षण भर के लिए अनुचित विचार के अंकुरण नहीं होते। एक ओर वे वनवास में सदैव ध्यान रखते हैं। कि–

सीय लखन जेहि विधि सुख लहहीं। सोई रघुनाथ करहिं सोइ कहहीं।।7

वहीं वे भरत के चित्रकूट आगमन पर समस्त अयोध्यावासी एवं वनवासियों को उचित स्थान प्रदान कर क्रमशः सबकी बात सुनते हैं तथा गंभीरता पूर्वक सबके प्रश्नों का उत्तर देते हुए उन्हें संतुष्ट करते हैं। श्रीराम के अनुज भरत अंततः श्रीराम को अयोध्या लौटा पाने में असफल हो उनकी चरण पादुका लेकर उन्हें सिंहासन पर स्थापित कर 14 वर्षो तक उत्तरदायित्व निर्वाह करना स्वीकार करते हैं। श्रीराम चाहते तो भरत के मनाने पर अयोध्या की राजगद्दी प्राप्त कर सकते थे किन्तु उन्होंने व्यक्ति और राजा दोनों के आदर्शों का पालन करते हुए अपने निर्मल व्यक्तित्व का परिचय दिया। क्षण भंगुर संसार में जहाँ लोग पद और पैसे के लालच में घर परिवार को नुकसान पहुँचाने के लिए तैयार रहते हैं वहाँ श्रीराम का यह असाधारण व्यक्तित्व अनुकरणीय है।

संदर्भ सूची

1. श्री रामचरितमानस, कवि–गोस्वामी तुलसीदास, पृ. 229
2. श्री रामचरितमानस, कवि–गोस्वामी तुलसीदास, पृ. 331
3. श्री रामचरितमानस, कवि–गोस्वामी तुलसीदास, पृ. 357
4. श्री रामचरितमानस, कवि–गोस्वामी तुलसीदास, पृ. 358
5. श्री रामचरितमानस, कवि–गोस्वामी तुलसीदास, पृ. 359
6. श्री रामचरितमानस, कवि–गोस्वामी तुलसीदास, पृ. 375
7. पं श्री रामचरितमानस, कवि–गोस्वामी तुलसीदास, पृ. 417

संदर्भ ग्रंथ

1. श्री रामचरित मानस, कवि–गोस्वामी तुलसीदास टीकाकार, विद्यारत्न पं. ज्वाला प्रसाद जी पराशर

   प्रकाशक–राजसंस प्रिंटर्स, नईदिल्ली, प्रकाशन वर्ष–2003, 38वाँ संस्करण

Scanned with CamScanner

एम.ए. हिन्दी

भाषा-विज्ञान

प्रथम सेमेस्टर (चतुर्थ प्रश्न-पत्र)

एवं

हिन्दी भाषा

द्वितीय सेमेस्टर (चतुर्थ प्रश्न-पत्र)

संपादक - डॉ. रमेश टण्डन

Scanned with CamScanner

एम. ए. हिन्दी –

भाषा विज्ञान

(प्रथम सेमेस्टर – चतुर्थ प्रश्न–पत्र)

एवं

हिन्दी भाषा

द्वितीय सेमेस्टर (चतुर्थ प्रश्न–पत्र)

(छत्तीसगढ़ स्थित अटल बिहारी वाजपेयी विश्वविद्यालय बिलासपुर के अन्तर्गत विभिन्न महाविद्यालयों में संचालित एम ए हिन्दी प्रथम सेमेस्टर चतुर्थ प्रश्न–पत्र (भाषा विज्ञान) एवं एम ए हिन्दी द्वितीय सेमेस्टर चतुर्थ प्रश्न–पत्र (हिन्दी भाषा) के नवीनतम सम्पूर्ण पाठ्यक्रम पर आधारित एवं अन्य विश्वविद्यालयों के लिए भी एम. ए. हिन्दी की पाठ्य–पुस्तक)

संपादक

डॉ0 रमेश टण्डन

विभागाध्यक्ष (सहायक प्राध्यापक– हिन्दी)

महात्मा गांधी शासकीय कला एवं विज्ञान स्नातकोत्तर महाविद्यालय

खरसिया, जिला– रायगढ़ (छ.ग.)

वैभव प्रकाशन

रायपुर (छ.ग.)

Scanned with CamScanner

भाषा विज्ञान एवं हिन्दी भाषा

ISBN- 978-93-89989-46-5

●

प्रकाशक

वैभव प्रकाशन

अमीनपारा चौक, पुरानी बस्ती रायपुर (छत्तीसगढ़)

दूरभाष : 0771-4038958, मो. 94253-58748

e-mail : sahityavaibhav@gmail.com

www.vaibhavprakashan.com

आवरण सज्जा : कन्हैया साहू

प्रथम संस्करण : May 2020

मूल्य : 500.00 रुपये

कॉपी राइट : लेखकाधीन

●

BHASHA VIGYAN EVAM HINDI BHASHA

BY : DR. RAMESH TANDAN

Published by

Vaibhav Prakashan

Amin Para, Purani basti

Raipur, Chhattisgarh (India)

First Edition : May 2020

Price : Rs. 500.00

(प्रस्तुत पुस्तक के विभिन्न अध्यायों में लिखित पाठ्य सामग्री उसके लेखक/संकलनकर्त्ता के द्वारा एम ए हिन्दी में अध्ययनरत छात्रों के हित के लिए विभिन्न किताबों अथवा नेट से संकलित की गई है। अपने पाठ की पूर्णता के लिए इस पुस्तक के अध्याय लेखकों ने मूल किताबों अथवा परवर्ती संदर्भ/ शोध ग्रंथों अथवा नेट से उद्धरण अथवा उदाहरण लिए हैं, अतः उन मूल किताबों अथवा परवर्ती संदर्भ/शोध ग्रंथों अथवा नेट के क्रमशः लेखकों अथवा संपादकों/शोध छात्रों अथवा अपलोडर्स का सर्वश्रेठ आभार जिनकी पाठ्य सामग्री को यहाँ उद्धृत किया जा सका है। मौलिक तथ्यों /परिभाषा आदि में फेरबदल के लिए इस पुस्तक के संपादक अथवा प्रकाशक जिम्मेदार नहीं होंगे अपितु अध्याय लेखक स्वयं जिम्मेदार होंगे तथा किसी विवाद की स्थिति में न्याय क्षेत्र खरसिया (छ.ग.) होगा।)

Scanned with CamScanner

अनुक्रम

क्र.	अध्याय	लेखक	पृष्ठ क्र.
1	भाषा की परिभाषा और अभिलक्षण	प्रो. चरणदास वर्मन	13
2	भाषा व्यवस्था और भाषा व्यवहार	डॉ. श्रीमती नीलम तिवारी	21
3	भाषा संरचना और भाषिक प्रकार्य	डॉ. जयती बिश्वास	25
4	भाषा विज्ञान स्वरूप एवं व्याप्ति	डॉ. बी नन्दा जागृत	43
5	अध्ययन की दिशाएँ– वर्णनात्मक, ऐतिहासिक, तुलनात्मक	डॉ. रमेश कुमार टण्डन	59
6	स्वन विज्ञान का स्वरूप और शाखाएँ	प्रो. एस कुमार गौर	65
7	वागवयव और उनके कार्य	डॉ. श्रीमती नीलम तिवारी	72
8	स्वन की अवधारणा और स्वनों का वर्गीकरण	प्रो. राजकुमार लहरे	80
9	स्वनगुण, स्वनिक परिवर्तन	डॉ. दिनेश श्रीवास	90
10	स्वनिम विज्ञान का स्वरूप, स्वनिम की अवधारणा	श्री आशीष राठौर	96
11	स्वनिम के भेद, स्वनिमिक विश्लेषण	डॉ. दिनेश श्रीवास	101
12	रूप प्रक्रिया का स्वरूप और शाखाएँ	श्रीमती आशा भारद्वाज	109
13	रूपिम की अवधारणा और भेद– मुक्त, आबध्य, अर्थदर्शी, संबंधदर्शी; रूपिम के प्रकार्य	प्रो. राजकुमार लहरे	120
14	वाक्य की अवधारणा, वाक्य के भेद	डॉ. धनेश्वरी दुबे	135
15	वाक्य विश्लेषण, निकटस्थ अवयव विश्लेषण; गहन संरचना, बाह्य संरचना	डॉ. दिनेश श्रीवास	145
16	अर्थ की अवधारणा, शब्द और अर्थ में सम्बन्ध	प्रो. करुणा गायकवाड़	152
17	पर्यायता, अनेकार्थता, विलोमता	प्रो. अमोला कोर्राम	158
18	अर्थ परिवर्तन	डॉ. डेजी कुजूर	168

Scanned with CamScanner

3

भाषा संरचना और भाषिक प्रकार्य

– डॉ. (श्रीमती) जयती बिस्वास*

सेमेस्टर – I प्रश्नपत्र– IV (भाषा विज्ञान), इकाई – 01 (भाषा और भाषा विज्ञान)

भाषा की परिभाषा और अभिलक्षण, भाषा व्यवस्था और भाषा व्यवहार, भाषा संरचना और भाषिक–प्रकार्य। भाषा विज्ञान स्वरूप और व्याप्ति, अध्ययन की दिशाएँ– वर्णनात्मक, ऐतिहासिक और तुलनात्मक।

मनुष्य की अस्मिता में भाषा की महत्वपूर्ण भूमिका है। भाषा ही मनुष्य को संसार के अन्य प्राणियों से पृथक करती है। भाषा के बिना मानव जाति की कल्पना अत्यंत दुष्कर है। भाषा के माध्यम से ही व्यक्ति अपनी अनुभूति को अभिव्यक्त करता है तथा दूसरों की अनुभूति से अवगत होता है। भाषा की संप्रेषणीयता के कारण ही मनुष्य सामाजिक प्राणी कहलाने का अधिकारी बन पाया है। समाज में ऐसे अनेक उदाहरण देखे, सुने और पढ़े जाते हैं, जब मानव शिशु किसी कारणवश मानव समाज से अलग हो गया हो और उसका पालन–पोषण मानव समाज से भिन्न अन्य प्राणियों के बीच हुआ हो, ऐसा बालक मानव जाति की किसी भी भाषा से परिचित नहीं हो पाता, उसका जीवन पूर्णतः असामाजिक व पशुतुल्य हो जाता है। अतः यह कहा जा सकता है कि आदि काल से मनुष्य भाषा के सहयोग से अन्य सांसारिक प्राणी से अलग स्वयं की अपनी पहचान बनाता आया है तथा सतत् परिवर्तन और विकास की दिशा में आगे बढ़ता रहा है।

---

*जन्म तिथि एवं स्थान : 25 अगस्त 1970, खैरागढ़, माता : श्रीमती ललिता श्रीवास्तव, पिता : श्री सियाराम श्रीवास्तव, पति : श्री उत्पल बिस्वास, कार्य क्षेत्र : उच्च शिक्षा विभाग, प्रकाशन कार्य : शोध लेखक, रूचि : अध्ययन, अध्यापन, संप्रति : सहायक प्रध्यापक (हिन्दी), वीरांगना अवंती बाई महाविद्यालय, छुईखदान, मोबाईल नं. : 9424130323, ई–मेल : jaytibiswas25@gmail.com

Scanned with CamScanner

भाषा की विधिवत संरचना और उसके प्रकार्य को जानने के लिए भाषा की अवधारणा से परिचित होना आवश्यक है। विश्व में विचार–विनिमय के लिए अलग–अलग मानव समुदाय व मानव समाज के पास अनेक भाषाएँ हैं। सामान्यतः ध्वनियों के व्यवस्थित संकेत को संक्षेप में भाषा कहा जा सकता है। ध्वनि–संकेत से तात्पर्य ध्वनि के उन समस्त रूपों से है जिनकी सहायता से स्वर, व्यंजन, शब्द, पद, वाक्यांश, वाक्य और प्रोक्ति की रचना होती है। व्यक्ति अपने विचारों को प्रकट करने के लिए विषय व प्रसंग से जुड़े अनेक वाक्यों की रचना करता है। इन वाक्यों के समूह को ही भाषा की संज्ञा दी जा सकती है क्योंकि वाक्यों के समूह के माध्यम से ही व्यक्ति अपने पूर्ण भावों और विचारों को प्रस्तुत कर पाने में सक्षम होता है। भाषा की ठीक–ठीक परिभाषा देना कठिन है फिर भी भारतीय व पाश्चात्य अनेक विद्वानों ने भाषा को इस प्रकार परिभाषित किया है– महर्षि पतंजलि ने अपने महाभाष्य में लिखा है– "जो वाणी वर्णों में व्यक्त होती है उसे भाषा कहते है।'

भाषा–विज्ञान

आ. कामता प्रसाद गुरु ने लिखा है– "भाषा वह साधन है जिसके द्वारा मनुष्य अपने विचार दूसरों पर भली–भाँति प्रकट कर सकता है और दूसरों के विचार आप स्पष्टतया समझ सकता है।"[2]

डॉ. श्याम सुन्दर दास ने अपने ग्रंथ भाषा–विज्ञान के दूसरे प्रकरण (षष्ठ संस्करण) में लिखा है– "मनुष्य और मनुष्य के बीच वस्तुओं के विषय में अपनी इच्छा और मति का आदान–प्रदान करने के लिए व्यक्त ध्वनि संकेतों का जो व्यवहार होता है उसे भाषा कहते है।"[3]

डॉ. मंगलदेव शास्त्री ने लिखा है– "भाषा मनुष्य की उस चेष्टा या व्यापार को कहते हैं, जिससे मनुष्य अपने उच्चारणोपयोगी शरीरावयवों से उच्चारण किए गए वर्णात्मक या व्यक्त शब्दों द्वारा अपने विचारों को प्रकट करते हैं।"[4]

पाश्चात्य विद्वान ए. एच. गार्डनर कहते हैं– The common defination of speech is the use of Aroticulate sound-symbols for the expressin of thought.[5]

"विचारों की अभिव्यक्ति के लिए उच्चरित ध्वनि प्रतीकों के प्रयोग

को भाषा कहते हैं।"

एडवर्ड सपीर महोदय कहते हैं– Language is a purely human and non instinctive method of communicating ideas, emototion and desires by means of a system of volunatarily produced symbols. these symols are in the first instance ouditory and they are produced by the so-called organs of speech. [6]

अर्थात विचारों, भावनाओं और इच्छाओं को स्वेच्छा से उत्पन्न प्रतीकों के माध्यम से सम्प्रेषित करने की विशुद्ध मानवीय और यत्नज पद्धति को भाषा कहते हैं। उच्चारण अवयवों से उत्पन्न माध्यम–प्रतीक प्राथमिकतः श्रावणिक होते हैं।

भाषा–विज्ञान कोश में भाषा की परिभाषा इस प्रकार दी गई है– "मानवों के वर्ग विशेष में पारस्परिक व्यवहार के लिए प्रयुक्त उन व्यक्त ध्वनि संकेतों को भाषा कहते हैं, जिनका अर्थ पूर्व–निर्धारित एवम् परंपरागत होता है तथा जिनका आदान–प्रदान जिह्वा और कान के माध्यम से होता है।"[7]

इन परिभाषाओं के आधार पर भाषा की सामान्य विशेषताएँ स्पष्ट होती हैं– भाषा विचार–विनियम का एक सशक्त माध्यम है जिनमें ध्वनियों के समूह से सार्थक शब्द रचना की जाती है, तत्पश्चात शब्दों के समूह का निश्चित विन्यास किया जाता है और एक वाक्य की रचना की जाती है। मनुष्य शरीर के दो प्रमुख अवयव जिह्वा और कर्ण दो भाषिक इन्द्रियाँ हैं। ये अवयव हमें वक्ता और श्रोता की ओर संकेत देते हैं, अर्थात एक व्यक्ति वक्ता और एक व्यक्ति श्रोता की भूमिका निभाता है। वक्ता अपने भाव व विचार जब प्रकट करता है तो श्रोता उसे उसी अर्थ में सुनता व समझता है। अतः यह स्पष्ट है कि विश्व में अनेक भाषाओं के बावजूद वक्ता और श्रोता को एक ही भाषा का ज्ञान होना आवश्यक है। इसके बिना भाषा की संप्रेषणीयता असंभव है। आपसी वार्तालाप के माध्यम से ही व्यक्ति अंतर्संबंध स्थापित करते हुए सामाजिक प्राणी बनता है। यही सामाजिकता मनुष्य को अन्य प्राणी से अलग करती है। भाषा मानव जीवन की ऐसी व्यवस्था है जो कि वक्ता और श्रोता की सक्रियता से अपना अस्तित्व बनाती है।

भाषिक–संरचना की बात करने से पहले, भाषा के स्वरूप के विषय

Scanned with CamScanner

में जानना आवश्यक है। वह है–

1.भाषा का मौखिक स्वरूप

2.भाषा का लिखित स्वरूप।

मनुष्य अपनी विचाराभिव्यक्ति के लिए जिन वाचिक ध्वनियों की सहायता से अर्थपूर्ण वाक्य–समूह (प्रोक्ति) की रचना करता है वही वास्तव में भाषा का वास्तविक या मौखिक स्वरूप है। भाषा के अस्तित्व के लिए भाषाविद तीन प्रमुख बातों की अपेक्षा करते हैं– उत्पादन, संवहन और ग्रहण, अर्थात भाषा का उत्पादन वागिन्द्रियों की सहायता से वक्ता द्वारा होता है, वायु के माध्यम से उसका संवहन होता है, श्रोता की श्रवणेन्द्रियों द्वारा उसे सुनकर उसी भाव या विचार के अर्थ में ग्रहण किया जाता है। इन तीन बातों के बिना भाषा की कल्पना नहीं की जा सकती।

मानव–जीवन जब से विकास के पथ पर अग्रसर हुआ है तब से मनुष्य अपने अनुभव, अपने विचार अपने भाव तथा अपने जीवन की घटनाओं को चिर–स्थायी बनाए रखने के लिए सतत् प्रयास करता रहा है, इसके लिए उसने रेखा, चित्र, संकेत व बिन्दुओं की मदद ली है, जिसे समझा जा सके। उसका यही प्रयास धीरे–धीरे लिपि के रूप में अस्तित्व में आया। आज लिपि किसी भी भाषा को संरक्षित रखने का श्रेष्ठ माध्यम है, विचारों व भावों की अभिव्यक्ति, ज्ञान, विज्ञान साहित्य आदि की सुदीर्घ व समृद्ध, परंपरा को लिपि के बिना संरक्षित रखना असंभव है। वर्तमान में ध्वनि व लिपि के संबंध से सभी परिचित हैं। लिपि के बिना हम न ही अपने पूर्वजों की भाषा से परिचित हो सकते हैं, न ही आने वाली पीढ़ी को अपनी विरासत सौंप सकते हैं। लिपि के आविष्कार के पहले हालाकि गुरु अपने शिष्य को ज्ञान–विज्ञान–साहित्य आदि की मौखिक ही शिक्षा दिया करते थे, जिसे शिष्य कंठस्थ करके ज्ञानवान होते थे व उसे अगली पीढ़ी को सौंपकर परंपरा का निर्वाह करते, किन्तु पूर्वजों के द्वारा लिपि के आविष्कार ने भाषा को सुरक्षित कर मानव जीवन में आमूलचूल परिवर्तन किया है, पूर्वजों के इस आविष्कार के लिए संपूर्ण मानव जाति उनकी ऋणी रहेगी।

लिपि ध्वनि संकेतों की ऐसी व्यवस्था है जिसकी सहायता से भाषा को मूर्त स्वरूप प्राप्त होता है। हिन्दी भाषा की संरचना के लिए ध्वनि संकेत की लिपि को जानना अत्यंत आवश्यक है। हिन्दी भाषा की लिपि को देवनागरी लिपि के नाम से जाना जाता है। यही भाषा का लिखित स्वरूप

है। हिन्दी भाषा के संदर्भ में बात करें तो हम पाएँगे कि इस भाषा में प्रत्येक ध्वनि के लिए एक लिपि की व्यवस्था है। इसी व्यवस्था के अंतर्गत हम हिन्दी भाषा की भाषिक संरचना की जानकारी के साथ साथ क्रमशः ध्वनि संकेत से अर्थ ग्राह्यता तक पहुँच सकेंगे। भाषाविद वासुदेव नन्दन प्रसाद ने अपने ग्रंथ 'आधुनिक हिन्दी व्याकरण और रचना' में ध्वनि के स्वरुपों पर प्रकाश डाला है– "वर्ण उस मूल ध्वनि को कहते है, जिसका खण्ड न हो; जैसे– अ, इ, उ, ऊ, इ, ई आदि.....। 'स्वर उन वर्णों को कहते हैं जिनका उच्चारण बिना अवरोध अथवा विघ्न बाधा के होता है।[8] ये ध्वनियाँ स्वर ध्वनियाँ हैं वर्णों में ध्वनि का एक समूह व्यंजन कहलाता है, ये वर्ण स्वरों की सहायता से उच्चरित होते है– जैसे क, ख, ग इनके उच्चारण को इस तरह खण्डित किये जाते हैं–

क् + अ = क

ख् + अ = ख

ग् + अ = ग

हिन्दी भाषा में स्वर और व्यंजन वर्णों की कुल संख्या 52 है जिसे वर्णमाला कहा जाता है। वासुदेव नंदन प्रसाद इन 52 वर्णों को इस तरह विभाजित करते हैं–

"स्वर – अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ए, ऐ, ओ, औ = 11

व्यंजन – क वर्ग – क, ख, ग, घ, ङ

च वर्ग – च, छ, ज, झ, ञ

ट वर्ग – ट, ठ, ड, ढ, ण

त वर्ग – त, थ, द, ध, न

प वर्ग – प, फ, ब, भ, म

अन्तःस्थ – य, र, ल, व

ऊष्म – स, श, ष, ह

संयुक्त व्यंजन – क्ष, त्र, ज्ञ, त्र

द्विगुण व्यंजन – ड़, ढ़ (ड ढ)

अनुस्वार – अनुनासिक

विसर्ग – : "[9]

Scanned with CamScanner

व्यंजनों के इस वर्गीकरण को क्रमशः कण्ठ्य, तालव्य, मूर्धन्य, दन्त्य और ओष्ठ्य वर्गों में बाँटा गया है। "य, र, ल, व अन्तःस्थ वर्ण हैं। अन्तःस्थ वर्णों का उच्चारण जीभ, तालु, दाँत और ओठों के परस्पर सहयोग से होता है, किन्तु कहीं भी पूर्ण स्पर्श नहीं होता। अतः ये चारों अन्तःस्थ व्यंजन अर्द्धस्वर कहलाते हैं। ऊष्म व्यंजनों का उच्चारण एक प्रकार की रगड़ या घर्षण से उत्पन्न ऊष्म वायु से होता है।"[10]

हिन्दी वर्णमाला में चार संयुक्त व्यंजन हैं जिनको इस प्रकार खण्डित किया जा सकता है।

क्ष = क् + ष् + अ

त्र = त् + र् + अ

ज्ञ = ज् + ञ् + अ

श्र = श् + र् + अ

"इन संयुक्ताक्षरों का उच्चारण साधारण तथा मूर्द्धा से होता है।"[11] हिन्दी वर्ण माला में ड़ और ढ़ द्विगुण व्यंजन कहलाते हैं, ये वर्ण ड, और ढ व्यंजन से विकसित हुए हैं। इन वर्णों के नीचे बिन्दी मात्र लगाने से इनके उच्चारण में परिवर्तन हो जाता है, इसीलिए ये वर्ण दो उच्चारण या दो गुण को धारण करते हैं और द्विगुण व्यंजन कहलाते हैं। इनके उच्चारण में जीभ झटके से ऊपर जाती है। ड़, ढ़ ये ध्वनियाँ प्रायः शब्द के प्रारंभ में नहीं आतीं, बल्कि ये शब्द के मध्य या अंत में लगकर शब्द निर्माण में सहायक होते हैं। इन वर्णों के दोनों गुणों को इस प्रकार देखा जा सकता है–

ड – डमरू, डंडा, मंडप ड़ – सड़क, कपड़ा

ढ – ढक्कन, ढाल, ढाका, ढ़ – पढ़, गढ़

हिन्दी वर्णमाला में अनुस्वार, अनुनासिक व विसर्ग के उच्चारण भी महत्वपूर्ण हैं– "अनुनासिक के उच्चारण में नाक से कम साँस निकलती है और मुँह से अधिक जैसे– आँसू, आँत, गाँव, चिड़ियाँ इत्यादि, परन्तु अनुस्वार के उच्चारण में नाक से अधिक साँस निकलती है और मुख से कम जैसे– अंक, अंश, पंच, अंग इत्यादि। अनुनासिक, स्वर की विशेषता है अर्थात अनुनासिक स्वरों पर चन्द्र बिन्दु लगता है, लेकिन अनुस्वार एक व्यंजन ध्वनि है। अनुस्वार की ध्वनि प्रकट करने के लिए वर्ण पर बिन्दु लगाया जाता है। तत्सम शब्दों में अनुस्वार लगता है और उनके तद्भव रूपों में चन्द्र बिन्दु

लगता है।

जैसे – अगुष्ठ से अँगूठा

दन्त से दाँत

अन्त्र से आँत।"[12]

विसर्ग (:) – हिन्दी वर्णमाला में विसर्ग (:) का चिह्न अर्द्ध ह के रूप में उच्चारित किया जाता है। यह चिह्न संस्कृत भाषा से हिन्दी में शामिल हुआ है। इसीलिए तत्सम शब्दों का प्रयोग जब हिन्दी में किया जाता है तब वहाँ विसर्ग का चिह्न लगाया जाता है जैसे–

प्रायः, पूर्णतः, स्वतः, क्रमशः, अतः आदि। हिन्दी वर्णमाला में विसर्ग शब्द के अंत में लगाए जाते हैं, किन्तु संस्कृत के शब्दों में विसर्ग शब्द बीच में भी लगाए जाने की परंपरा है जैसे–

संस्कृत	हिन्दी
दुःख	दुख
मनः कामना	मनोकामना
अंतः स्थ	अंतस्थ आदि।

आचार्य किशोरी दास कहते हैं– "अनुस्वार और विसर्ग न तो स्वर हैं न ही व्यंजन हैं किन्तु ये स्वरों के सहारे चलते हैं। स्वर और व्यंजन दोनों में इनका उपयोग होता है ......। ये स्वर नहीं है और व्यंजनों की तरह ये स्वरों के पूर्व नहीं पश्चात् आते हैं इसीलिए व्यंजन नहीं। इन दोनों ध्वनियों को 'अयोगवाह' कहते हैं। अयोगवाह का अर्थ है– योग न होने पर भी जो साथ रहे।"[13]

हिन्दी में वर्णों के सहयोग से जब शब्द बनाए जाते हैं तब व्यंजन वर्णों में स्वरों को जोड़ा जाता है, यही प्रक्रिया मात्रा कहलाती है। पं. कामता प्रसाद गुरु के अनुसार– "व्यंजनों के अनेक प्रकार के उच्चारणों को स्पष्ट करने के लिए जब उनके साथ स्वर का योग होता है, तब स्वर का वास्तविक रूप जिस रूप में बदलता है उसे मात्रा कहते हैं।"[14]

डॉ. वासुदेव नंदन प्रसाद कहते हैं– "मात्राएँ स्वरों की ही होती हैं व्यंजन की नहीं, क्योंकि व्यंजन तो स्वरों के ही सहारे बोले जाते हैं। जब स्वर व्यंजन में लगते हैं तब उनके दस प्रकार के रूप होते हैं।

Scanned with CamScanner

अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ए, ऐ, ओ, औ,

ा, ि, ी, ु, ू, ृ, े, ै, ो, ौ

क, का, कि, की, कु, कू, कृ, के, कै, को, कौ।"[15]

इन मात्राओं को ह्रस्व और दीर्घ स्वर कहा जाता है। अ, इ, उ, ऋ ह्रस्व स्वर हैं शेष दीर्घ स्वर कहे जाते हैं। ह्रस्व स्वर को छंद शास्त्र में एकमात्रिक तथा दीर्घ स्वर को द्विमात्रिक स्वर कहते हैं।

भाषा–विज्ञान की दृष्टि से मानव द्वारा उच्चरित वर्ण ही ध्वनि कहलाते हैं, मानव मुख से निःसृत अलग–अलग अनेक ध्वनियाँ हैं, जो कि मुख–विवर के अनेक अवयवों की सहायता से उच्चरित होते हैं, मुखविवर के साथ–साथ नासिका विवर भी ध्वनि निर्माण में मुख्य भूमिका निभाते हैं। ये अवयव ही स्वर यंत्र कहलाते हैं। इन अवयवों की संक्षिप्त जानकारी अपेक्षित है–

1. फेफड़े :– मानव शरीर में फेफड़ों की संख्या दो है। जिससे श्वास–प्रश्वास की क्रिया निरंतर चलती रहती है। ध्वनि उत्पादन वायु के बिना असंभव है। श्वास लेने के पश्चात श्वास छोड़ने की प्रक्रिया में ही ध्वनि का उच्चारण होता है अतः फेफड़े भाषिक प्रक्रिया के प्रमुख अवयव हैं।

2. श्वास नलिका :– नासिका विवर के माध्यम से क्षण–प्रतिक्षण श्वास लेने व छोड़ने की प्रक्रिया चलती है। नासिका विवर से फेफड़े तक वायु को पहुँचाने में श्वास नलिका ही सहायक है। यह नलिका भोजन नलिका के सामान्तर स्थित है तथा एक मजबूत झिल्ली द्वारा भोजन नलिका से अलग है। मुख विवर के पश्चात गले में यह भोजन नलिका के सामने अवस्थित है, जो फेफड़ों तक जाती है। भोजन नलिका श्वास नलिका के पीछे अवस्थित है तथा यह नलिका अमाशय तक पहुँचती है।

3. भोजन नलिका :– इसके माध्यम से मनुष्य का भोजन अमाशय तक पहुँचता है, किसी कारणवश श्वांस–नलिका और भोजन नलिका के बीच के आवरण में गड़बड़ी आ जाती है और भोजन श्वास नलिका में पहुँच जाता है तो मनुष्य की मृत्यु तक हो जाती है। अतः प्रकृति द्वारा यह व्यवस्था है कि श्वांसों के लेन–देन के समय एक आवरण भोजन नलिका को ढँके रखता है तथा भोजन ग्रहण करते समय श्वांस नलिका को ढँके रखता है।

4. स्वर यंत्र :– श्वास नली के ऊपरी भाग में अत्यंत महीन–महीन

तंत्रियों के समूह को स्वर यंत्र कहते हैं। श्री बाबूराम सक्सेना स्वर यंत्र की बनावट के बारे में कहते हैं– "मनुष्य निर्मित बढ़िया से बढ़िया और सूक्ष्म से सूक्ष्म बाजे के तारों से भी कई गुना महीन ये स्वर तंत्रियाँ श्वास नलिका के ऊपरी हिस्से के दो कोनों में आमने–सामने हिस्सों में बँटी हुई रहती हैं। अपेक्षिक दृष्टि से ये तार बच्चों के छोटे होते हैं। तब भी पुरुष के स्वर यंत्रों के तार, स्त्री के स्वर यंत्रों के तारों से बड़े होते हैं।"[16]

5. काकल :– स्वर यंत्र में स्थित पतली झिल्ली के पर्दों के बीच जो भाग खुला रहता है, उसे काकल या स्वर यंत्र मुख कहते हैं इसी काकल में से होकर हवा अंदर–बाहर आती–जाती रहती है।

6. अनि काकल :– श्वासनली के ऊपर एक आवरण रूपी छोटी–सी जिह्वा होती है, जो भोजन को श्वास नली में जाने से रोकती है, इसे ही अनिकाकल कहते हैं। खाते या पीते समय यह आवरण नीचे की ओर स्वतः झुक जाता है और खाद्य पदार्थ भोजन नली में चला जाता है।

7. कंठ–पिटक :– कण्ठ पिटक न केवल ध्वनि अवयवों में महत्वपूर्ण है बल्कि यह अंग मानव शरीर के लिए भी अत्यंत आवश्यक है। गले के उठे हुए भाग में जहाँ अन्न नली व श्वांस नली अवस्थित होती है वही स्थान कण्ठ पिटक कहलाता है। इस पर दबाव डालने से श्वास नली के दबने से वायु का आना जाना रुक जाता है।

8. कंठ मार्ग :– विद्वान इस अवयव को गल–बिल, कण्ठ बिल और ग्रसनिका आदि नाम भी देते हैं।

9. कंठ :– कोमल तालू के नीचे काकल के ऊपर के अवयवों को कंठ कहते हैं। यहाँ क, ख, ग आदि कण्ठ्य ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं।

10. अलिजिह्व :– कोमल तालू में एक छोटा मांस पिण्ड जो नीचे की ओर लटका होता है उसे अलिजिह्व या कौवा कहते हैं।

11. नासिका विवर :– मुख और नासिका के बीच रिक्त स्थान नासिका विवर है। नासिका विवर को कम या ज्यादा खोलने में कोमल तालू और कौवा की सहायता ली जाती है। अनुनासिक वर्णों के लिए नासिका विवर महत्वपूर्ण अवयव है।

12. मुख विवर :– मुखविवर मानव शरीर का महत्वपूर्ण अवयव है। इसी विवर में दंत पंक्तियाँ, जीभ, कोमल तालु, मूर्धा, कठोर तालू, वर्त्स आदि

Scanned with CamScanner

महत्वपूर्ण अंग अवस्थित हैं। कौवा के ऊपर नासिका विवर और नीचे मुख विवर है। इसमें अवस्थित सभी अंग ध्वनि निर्माण के आवश्यक अंग हैं।

13. कोमल तालू व कठोर तालू :– मुख विवर के ऊपरी भाग को कोमल तालू और इसी तालू के अग्र भाग को कठोर तालू कहते है। इसके अतिरिक्त दंतमूल, दंत, वर्त्स, (दन्तमूल से लगे हुए मसूढ़े जिसे स्पर्श करने पर थोड़े खुरदुरेपन की अनुभूति होती है।) मूर्द्धा, जिह्वा, ओष्ठ आदि ध्वनि निर्माण के महत्वपूर्ण अवयव हैं।

शब्द एवं रूप :– भाषिक संरचना की सबसे छोटी ईकाई ध्वनि है, ध्वनियों के मेल से शब्दों की रचना होती है। जिस तरह ध्वनि निर्मित वर्ण स्वतंत्र होते हुए भी भाव व विचार प्रकट करने में असमर्थ होते हैं, उसी प्रकार वर्णों के मेल से बने, प्रत्येक शब्द अर्थ की अभिव्यक्ति में सहायक नहीं होते। अतः यह कहा जा सकता है कि शब्द को सार्थक और निरर्थक दो श्रेणी में विभाजित कर सकते हैं जैसे –

सार्थक शब्द– खग, कमल, चल।

निरर्थक शब्द– गख, लमक, लच आदि।

इन शब्दों में वर्णों के क्रम को सुनियोजित करके सार्थक शब्द बनाए गए हैं, भाषा विज्ञान में इन्हीं रचना को शामिल किया जाता है। रचना की दृष्टि से शब्द के प्रमुख तीन प्रकार हैं–

1.रूढ़ शब्द

2.यौगिक शब्द

3.योगरूढ़ शब्द

रूढ़ शब्द :– *"जो शब्द परंपरा से किसी विशेष अर्थ में प्रयुक्त होते आए है और जिनके खंडित रूप निरर्थक होते हैं उन्हें रूढ़ शब्द कहते है।"*[17]

उदाहरण :– पानी, पुस्तक, अनाज, आदि।

यौगिक शब्द :– *"किसी रूढ़ शब्द में प्रत्यय या उपसर्ग या अन्य शब्द जोड़कर यौगिक शब्द बनाए जाते हैं। चूँकि ऐसे शब्द दो रूढ़ों के योग से बने होते हैं इसलिए इनके खंड सार्थक हुआ करते है।"*[18]

रसोईघर = रसोई + घर

पाठशाला = पाठ + शाला

पनघट = पानी + घाट

योगरूढ़ शब्द :– "ऐसे शब्द जो यौगिक तो होते हैं, परन्तु अर्थ के विचार से अपने सामान्य अर्थ को छोड़कर किसी परंपरा से विशेष अर्थ के परिचायक हो जाते हैं, योगरूढ़ शब्द कहलाते है।"[19]

पंकज, लंबोदर, चक्रपाणि आदि।

हिन्दी भाषा में शब्दों के उपर्युक्त प्रकार रचना अथवा बनावट के आधार पर किए गए हैं। इसके अतिरिक्त हिन्दी भाषा को समृद्ध करने में देशी–विदेशी अनेक शब्द शामिल हैं जिन्हें तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशी आदि नामों से जाना जाता है।

शब्दों की स्वतंत्र सत्ता होने के बावजूद शब्दों के समूह भाव अभिव्यक्ति में असमर्थ होते हैं। भावाभिव्यक्ति के लिए शब्दों के समूह को व्याकरणिक नियमों में आबद्ध होना आवश्यक होता है। ये शब्द समूह आपस में कर्त्ता, क्रिया, सहायक क्रिया, विभक्ति (परसर्ग), काल, उपसर्ग, प्रत्यय आदि नियमों से बँधे होते हैं। तब एक वाक्य की रचना होती है और यह वाक्य एक अनुभूति की अभिव्यक्ति में सक्षम होता है।

भाषा विज्ञान (एमचडी 07) के अनुसार – "हर भाषा के अपने व्याकरणिक नियम होते हैं और वाक्य में प्रयुक्त होने के लिए इन्हें व्याकरणिक नियमों के अनुरूप परिवर्तन करना होता है, यथा – 'श्याम पुस्तक पढ़', इसमें तीनों कोशीय शब्द हैं, इनका कोई अर्थ अभिप्रेत नहीं, इसी प्रकार 'रावण राम मारा'। यहाँ भी यदि हम ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में न जाएँ तो स्पष्ट नहीं हो पाता कि किसने किसको मारा। इन दोनों शब्द युग्मों को यदि लिखा या बोला जाया तो 'श्याम ने पुस्तक पढ़ी' और 'रावण को राम ने मारा' तो अर्थ स्पष्ट हो जाता है, शब्दों की परस्पर संबद्धता भी स्पष्ट हो उठती है।"[20]

उपर्युक्त उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि शब्द जब वाक्य में व्याकरणिक नियमों में जुड़ते हैं, तब हिन्दी वाक्य की संरचना पूर्ण होती है। ये शब्द वाक्य में कर्त्ता, कर्म और क्रिया का स्थान ग्रहण करते हैं। वाक्य के यही कर्त्ता, कर्म और क्रिया भाषा विज्ञान में 'रूपिम' कहलाते हैं। रूप को ही 'पद' के नाम से जाना जाता है। शब्द, वाक्य के निर्माण में जब क्रमबद्ध रूप से व्याकरणिक नियमों में बंधते हैं तब यही शब्द रूपिम कहलाते है। अर्थात् शब्द और रूपिम दोनों का अलग–अलग अस्तित्व है, फिर भी शब्द

Scanned with CamScanner

ही व्याकरणात्मक स्वरूप की इकाई बनकर वाक्य बनाते हैं।

वाक्य :– भाषा–विशेष के व्याकरण के आधार पर व्यवस्थित वे शब्द समूह वाक्य कहलाते हैं, जिनकी सहायता से मनुष्य अपने भावों या विचारों को अभिव्यक्त करता है। महर्षि पतंजलि वाक्य को परिभाषित करते हुए कहते हैं– "पूर्ण अर्थ की प्रतीति कराने वाले शब्द समूह को वाक्य कहते हैं।"[21]

कविराज विश्वनाथ कहते हैं– "योग्यता, आकांक्षा, निकटता से युक्त पद समूह वाक्य है।"[22]

योग्यता, 'आकांक्षा' निकटता का आशय स्पष्ट करते हुए वे कहते है – आकांक्षा से आशय शब्दों की परस्पर पूरकता से है, जैसे– 'नवीन खाना खाता है।' इस वाक्य में तीन पद हैं– 'नवीन', 'खाना' और 'खाता है'। व्याकरणिक दृष्टि से तीनों परस्पर एक–दूसरे की आकांक्षा रखते हैं– 'नवीन' कर्त्ता है जिसे 'खाना' क्रिया की आकांक्षा है। 'खाता है' क्रिया को एक कर्म की आकांक्षा है। 'खाना' कर्म है को एक कर्त्ता और एक क्रिया की आकांक्षा है।"[23]

योग्यता :– "योग्यता का आशय अभिव्यक्ति है, वाक्य में आए शब्द यदि असंगत अर्थ अभिव्यक्त करें तो व्याकरणिक दृष्टि से परस्पर संबद्ध होते हुए भी वाक्य नहीं कहलाएँगे। जैसे– 'वह खाना खाता है' वाक्य है, लेकिन 'वह आग खाता है' वाक्य नहीं है।"[24]

आसक्ति :– "आसक्ति का अर्थ समीप होना है। यदि कोई व्यक्ति 'सुवह पुस्तक और शाम को पढ़ो' कहे तो वह वाक्य नहीं कहलाएगा। वक्ता के द्वारा उच्चरित पदों में सातत्व का होना आवश्यक है।"[25]

इस प्रकार हम देखते हैं कि भाषिक संरचना में भावाभिव्यक्ति का माध्यम एक पूर्ण वाक्य होता है। वाक्य निर्माण में व्याकरणिक नियमों की भूमिका होती है, इसके बिना शुद्ध वाक्य की परिकल्पना असंभव है।

प्रोक्ति :– प्रोक्ति वास्तव में वाक्यों का श्रृंखलाबद्ध एक समूह है, जिसमें वक्ता और लेखक अपने विचार, भाव या अपनी किसी बात को व्यवस्थित शैली में प्रस्तुत करता है।

ध्वनि, शब्द, पद, वाक्य, प्रोक्ति ये सभी भाषिक संरचना के भौतिक अवयव हैं। इन समस्त अवयवों के स्वतंत्र अस्तित्व के बावजूद इनके समग्र

अर्थों की ग्राह्यता भाषिक संरचना के प्राण हैं। शब्द, वाक्य और प्रोक्ति इसी संदर्भ में अस्तित्व में आते हैं कि वक्ता जिस अर्थ में बोले उसे वक्ता उसी अर्थ में ग्रहण करे। ऐसा न होने पर विचार विनिमय की प्रक्रिया क्षीण हो जाती है।

अर्थ संरचना – भाषिक संरचना की अत्यंत जटिल प्रक्रिया है। शब्द और अर्थ का घनिष्ठ संबंध है। डॉ. वासुदेव नंदन प्रसाद कहते हैं– "अर्थ के अभाव में भाषा का कोई महत्व नहीं है। पर दोनों की अपनी–अपनी महत्ता है। शब्द अमूर्त अर्थ का मूर्त रूप है; यदि शब्द शरीर है तो अर्थ उसकी आत्मा। जिस प्रकार शरीर की सहायता से ही आत्मा की अभिव्यक्ति होती है, उसी प्रकार शब्द के द्वारा ही अर्थ प्रकट होता है।"[26]

भाषा की प्रकृति संसार की परिवर्तनशील प्रकृति की भाँति है। या यह कह सकते हैं कि संसार की परिवर्तनशीलता का प्रभाव भाषा पर पडता है। अतः शब्दों के अर्थ में भी बदलाव आना स्वाभाविक है–

उदाहरण :– "तेल शब्द संस्कृत के तैल से विकसित है, जिसका मूलार्थ है– 'तिल का सार'। आरंभ में तिल के रस को तैल कहते रहे होंगे पर आज तो इसका अर्थ इतना परिवर्तित हो गया है कि सरसों, नारियल, अलसी, मूंगफली, सूरजमुखी के फूल के तेल को ही नहीं मिट्टी, साँप और मछली के तेल को भी तेल कहते हैं।"[27]

भाषा की परिवर्तनशील प्रकृति के अनेक उदाहरण हैं, जब शब्द समय के परिवर्तन में अपना अर्थ भी बदलते रहते है। अर्थ परिवर्तन की दिशाओं में अर्थ विस्तार, अर्थ संकोच एवं अर्थादेश जैसी संभावनाएँ हैं।

भाषिक प्रकार्य

भाषा की संरचना अतिसूक्ष्म व जटिल प्रक्रिया है। भाषा रूपी मानव के लिए ध्वनि और ध्वनि निर्मित संरचनाएँ उसका शरीर है तो अर्थ उसकी आत्मा। जिस प्रकार एक बीज भूमि पर बोए जाने के पश्चात अंकुरित व पल्लवित होकर एक वृक्ष का स्वरूप ग्रहण करता है तथा फूलों व फलों से प्राणियों को संतुष्ट करता है, उसी प्रकार भाषिक संरचना में भी सूक्ष्म और जटिल प्रक्रिया कार्य करती है। ध्वनि से अर्थ–विस्तार तक की प्रक्रिया में अनेक संरचनाएँ जुड़ी हैं तथा इन सभी संरचनाओं का अपना–अपना महत्व है। ये सभी संरचनाएँ अपनी–अपनी भूमिका का निर्वाह करके भाषा संरचना की प्रक्रिया को पूर्ण करती हैं। यही भाषा मनुष्य के विचार–विनिमय का

Scanned with CamScanner

भाषिक–प्रकार्य पर बातें करने से पहले 'प्रकार्य' का शाब्दिक अर्थ जानना आवश्यक है– किसी संरचना या संगठन के अंदर व्यवस्था व संतुलन बनाए रखने के लिए उस संरचना या संगठन की प्रत्येक इकाई अपनी भूमिका निभाती है, जिससे संगठन सुचारु रूप से कार्य कर सके। यही कार्य उस संरचना का प्रकार्य कहलाता है।

भारतीय समाज की संरचना को प्रस्तुत करते हुए भाषिक–प्रकार्य को समझा जा सकता है। भारतीय समाज अत्यंत वृहद और महीन तानों–बानों से बना हुआ है, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति का स्थान निर्धारित है और उसकी अपनी भूमिका का महत्व है। व्यक्ति जब किसी रिश्ते या पद को धारण करता है तब उस रिश्ते या पद के कार्यों का निर्वाह करते हुए जीवन यापन करता है, और उसे ऐसा ही करना चाहिए। समाज में व्यक्ति इस तरह परस्पर एक–दूसरे का सहयोग करता है, जिससे सामाजिक संतुलन बने रहने के साथ–साथ सामाजिक संरचना मजबूत बनती है। समाज के अंदर व्यक्ति के कार्यों के परिणाम सामाजिक–प्रकार्य के अंतर्गत आते हैं।

भाषिक संरचना भी इसी तरह एक जटिल और वृहद प्रक्रिया है। इस संरचना के प्रकार्य को भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों ने स्पष्ट करने की कोशिश की हैं जिसे निम्नलिखित बिन्दुओं के माध्यम से स्पष्ट किया जा सकता है।

1. अभिव्यक्ति में सहायक :– भाषा का सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रकार्य विचारों व भावों की अभिव्यक्ति है। विश्व में अनेक भाषाओं के बावजूद प्रत्येक व्यक्ति की अपनी भाषा होती है, और अपनी इसी भाषिक विशेषता की सहायता से वह अपने विचारों को प्रकट करता है। जिससे वह स्वयं आत्मिक संतुष्टि की अनुभूति करता है। ईश्वर से प्रार्थना करना, किसी पठित अंश पर अपनी अभिव्यक्ति देना या अबोध शिशु से बातें करना इसी तरह की अभिव्यक्ति है।

2. संप्रेषणीयता में सहायक :– जब दो वक्ता आपस में कहते और सुनते हुए विचारों का आदान–प्रदान करते हैं तब इसे ही वार्तालाप कहा जाता है। वार्तालाप की इस प्रक्रिया में संप्रेषणीयता का होना आवश्यक है अर्थात् वक्ता जिस भाव या विचार को प्रकट करने के लिए जिस भाषा का प्रयोग करता है, वह भाव या विचार उसी अर्थ में श्रोता को ग्रहण करना

आवश्यक है, यही भाषिक संप्रेषणीयता है। परिवार के सदस्यों व मित्रों के आपसी वार्तालाप संप्रेषणीयता के उदाहरण हैं।

3. प्रभावोत्पादकता :– जहाँ एक वक्ता के पास अनेक श्रोता हों वहाँ वक्ता की भाषा की प्रभावोत्पादकता का महत्वपूर्ण स्थान है। वक्ता अपने संभाषण से समस्त श्रोताओं तक अपने विचार प्रस्तुत कर उन्हें अपने विचारों से अवगत कराते हैं और उन्हें इन विचारों को स्वीकार करने के लिए प्रेरित भी करते हैं। अतः वक्ता को अपने विचारों के प्रस्तुतिकरण हेतु सटीक व सशक्त भाषा की आवश्यकता होती है। कक्षा में शिक्षकों का व्याख्यान, जन प्रतिनिधियों की आम सभाओं के भाषण इसी तरह के उदाहरण हैं।

4. सामाजिक प्रकार्य :– मनुष्य अपने परिवार व समाज के अंदर बाल्यावस्था से ही संस्कार एवं संस्कृति से सतत् परिचित होता रहता है। हालांकि अनेक भाव–भंगिमाओं और चेष्टाओं से मनुष्य अनेक बातों को सीखता व समझता है, किन्तु सफल जीवन जीने और सामाजिक प्राणी बनने की दिशा में भाषा की महत्वपूर्ण भूमिका है। माता–पिता की भाषा सीखकर बच्चा रहन–सहन और रीति–रिवाज को आत्मसात कर संस्कृति के संवहन में अपना योगदान देता है।

5. समष्टि–प्रकार्य :– सामाजिक प्रकार्य की तरह ही भाषा का समष्टि प्रकार्य है। व्यक्ति अपना वैयक्तिक जीवन–निर्वाह तो समाज के अंदर रहकर करता ही है, साथ–ही–साथ वह वृहत्तर समाज के उत्तरदायित्वों का भी पालन करता है, जिससे समाज, राष्ट्र व संपूर्ण विश्व एकता व समता के सूत्र में बँध सके। हमारा राष्ट्र अपनी इस सांस्कृतिक भावना को 'वसुधैव–कुटुम्बम' की संज्ञा से विभूषित करता है।

स्वामी विवेकानंद जी द्वारा शिकागो महासभा में प्रस्तुत किया गया भावनात्मक संदेश, भाषा के इसी समष्टि प्रकार्य का श्रेष्ठ उदाहरण है। स्वामी विवेकानंद जी की ओजस्वी भाषा ने उपस्थित सभा–सद को भाव–विभोर कर दिया, जिससे संपूर्ण श्रोतागण ने संजीदगी के साथ न केवल उनके व्याख्यान को सुना बल्कि बड़ी संख्या में उनके अनुयायी भी हुए। उनके अनुयायी स्वामी जी के संदेश को सुनकर विश्व कल्याण में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका भी निभाए।

भाषा के समष्टि प्रकार्य को भारतीय संस्कृति की अनेकता में एकता के माध्यम से देखा जा सकता है, हमारे राष्ट्र में अनेक धर्मावलंबी निवास

Scanned with CamScanner

करते हैं। प्रत्येक प्रांत की अपनी सांस्कृतिक विरासत है। तब भी सभी देशवासी एक साथ भारतीय कहलाते हैं। एक प्रांत के निवासी दूसरे प्रांत के खान–पान, रीति–रिवाज, तीज–त्यौहार को न केवल जानने की कोशिश करते हैं बल्कि उसे आत्मसात भी करते हैं। दक्षिण भारतीय व्यंजन इडली–दोसा संपूर्ण भारतीय समाज के द्वारा पसंद किया जाता है। भगवान के चारों धामों के दर्शन के साथ अनेक क्षेत्रों के ऐतिहासिक और प्राकृतिक सौन्दर्य को देखने की महती आकांक्षा सभी भारतीय के मन में बनी रहती है। इनके मूल्य में भाषा का प्रकार्य ही कार्य करता है।

6. काव्यात्मक प्रकार्य :– सामान्यतः काव्य रचना के मूल कारणों की बात करें तो यह बात सामने आती है कि साहित्यकार अपने काव्य का सृजन धन–अर्जन, यश प्राप्ति, लोक–मंगल, दुख या पीड़ा से मुक्ति तथा स्वांतः सुखाय आदि अनेक कारणों में से किसी एक की आकांक्षा की पूर्ति के लिए करते हैं। इसकी पूर्ति के लिए भाषा अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। साहित्यकार अपनी रचनात्मक भाषा को जितना अधिक प्रभावोत्पादक बनाएँगे वे अपने उद्देश्य में उतने अधिक सफल होंगे।

सूरदास, कबीरदास, तुलसीदास जैसे महान कवियों की भाषा स्थानीय भाषा है, किन्तु इनके काव्य को वैश्विक स्तर पर ख्याति प्राप्त है। यही काव्यात्मक भाषा की सफलता है और यही काव्य का सौन्दर्य भी है। इन कवियों की भाषा देश–काल से परे उनके साहित्य को कालजयी बनाती है।

7. आर्थिक प्रकार्य :– माता–पिता अपनी संतान के जन्म से ही उनके अच्छे भविष्य निर्माण के लिए चिंतनशील होते हैं तथा इस दिशा में वे सदैव प्रयास होते हैं। वर्तमान युग वैश्वीकरण का युग है। बालक को अपनी मातृभाषा और राष्ट्रभाषा के साथ एक अंतर्राष्ट्रीय भाषा की जानकारी होना आवश्यक है। मानव जीवन के अनेक क्षेत्र हैं, जहाँ व्यक्ति अपनी सेवा प्रदान कर अर्थोपार्जन करता है। यहाँ आकाशवाणी, दूरदर्शन, इंटरनेट, समाचार पत्र की भाषाओं का उल्लेख किया जा सकता है, जहाँ संवाददाता देश–विदेश की नयी–नयी जानकारी को उपयुक्त भाषा प्रदान कर उन्हें जन–साधारण तक प्रस्तुत करते हैं। इस तरह वे अपने सामाजिक कर्त्तव्यों के अलावा आर्थिक आत्मनिर्भरता की दिशा में सफल होते हैं।

आधुनिकीकरण के मशीनीयुग में मानव द्वारा जीवनोपयोगी नित

नए आविष्कार होते रहते हैं, जिन्हें जनसाधारण तक पहुँचाने के लिए विज्ञापन की आवश्यकता होती है। जिस उत्पाद के विज्ञापन की भाषा जितनी सहज व तर्क संगत होती है वह वस्तु उतनी शीघ्रता से ग्राहकों द्वारा स्वीकार कर ली जाती है।

निश्चित रूप से भाषिक प्रकार्य का वर्णन अनंत है। मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में भाषा की भूमिका सर्वविदित है। कला, विज्ञान, वाणिज्य जैसे बुनियादी विषयों के साथ–ही–साथ संगीत, अध्यात्मिक, मनोरंजन, यातायात, चिकित्सा, खेल, राजनीति, न्यायालय आदि क्षेत्रों की अपनी–अपनी भाषाएँ होती हैं, जिनका प्रयोग संपूर्ण मानव जाति करती है और अपने जीवन को सरल, सुगम और सफल बनाती है।

संदर्भ सूची

1. भाषा विज्ञान पृ. 03
2. भाषा विज्ञान पृ. 19
3. आधुनिक हिन्दी व्याकरण रचना पृ. 02
4. भाषा विज्ञान पृ. 21
5. भाषा विज्ञान पृ. 17
6. भाषा विज्ञान पृ. 17
7. सामान्य भाषा विज्ञान पृ. 07
8. आधुनिक हिन्दी व्याकरण रचना पृ. 17
9. आधुनिक हिन्दी व्याकरण रचना पृ. 18
10. आधुनिक हिन्दी व्याकरण रचना पृ. 20
11. आधुनिक हिन्दी व्याकरण रचना पृ. 21
12. आधुनिक हिन्दी व्याकरण रचना पृ. 21
13. आधुनिक हिन्दी व्याकरण रचना पृ. 19
14. आधुनिक हिन्दी व्याकरण रचना पृ. 18
15. आधुनिक हिन्दी व्याकरण रचना पृ. 18
16. सामान्य भाषा विज्ञान पृ. 63

Scanned with CamScanner

17. सामान्य भाषा विज्ञान पृ. 63
18. संपूर्ण व्याकरण एवं रचना पृ. 79
19. संपूर्ण व्याकरण एवं रचना पृ. 79
20. आधुनिक हिन्दी व्याकरण रचना पृ. 151
21. भाषा विज्ञान एमजी 07 पृ. 23
22. भाषा विज्ञान पृ. 206
23. भाषा विज्ञान पृ. 206
24. भाषा विज्ञान पृ. 206
25. भाषा विज्ञान पृ. 206
26. भाषा विज्ञान पृ. 207
27. आधुनिक हिन्दी व्याकरण रचना पृ. 225

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. सामान्य भाषा विज्ञान – बाबूराम सक्सेना हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयोग आठवां संस्करण– सन् 1971
2. आधुनिक हिन्दी व्याकरण और रचना डॉ. वासुदेवनंदन प्रसाद भारत–भारती पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स पटना 23वां संस्करण
3. भाषा विज्ञान – डॉ. राजेश श्रीवास्तव 'शम्बर' कैलाश पुस्तक सदन भोपाल नवीन संस्करण
4. भाषा–विज्ञान – एम ए एच डी 07 वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय कोटा संपादक– प्रो. (डॉ.) चन्द्रकला पाण्डेय हिन्दी विभाग कलकत्ता विश्वविद्यालय कलकत्ता जून–2016

♦●♦

"सबसे विश्वसनीय व्यक्ति से भी अपने दिल की हर बात साझा न करें, उनसे कभी अन–बन हुई, तो मुसीबत में आ सकते हैं।"

–डॉ रमेश टण्डन फूलबंधिया

Scanned with CamScanner

शोध - संक्षेपिका

दो दिवसीय राष्ट्रीय शोध संगोष्ठी

(05-06 फरवरी 2016)

चुटकुले का वैश्विक इतिहास :
सैद्धांतिकी और प्रासंगिकता

आयोजक :- हिन्दी-विभाग

शासकीय दिग्विजय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजनांदगाँव (छ.ग.)

प्रायोजक :- विश्वविद्यालय अनुदान आयोग क्षेत्रीय कार्यालय, भोपाल

Scanned with CamScanner

संक्षेपिका

दो दिवसीय यूजीसी राष्ट्रीय शोध संगोष्ठी

(05-06 फरवरी 2016)

ज्ञान - विज्ञानं विमुक्तये

चुटकुले का वैश्विक इतिहास : सैद्धांतिकी और प्रासंगिकता

संरक्षक एवं प्राचार्य

डॉ. आर.एन.सिंह

संपादक एवं संयोजक

डॉ. शंकर मुनि राय

आयोजक : हिन्दी-विभाग

शासकीय दिग्विजय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय,राजनांदगाँव (छ.ग.)

प्रायोजक :- विश्वविद्यालय अनुदान आयोग क्षेत्रीय कार्यालय,भोपाल

(rajacomputer_rjn@9827498850)

Scanned with CamScanner

अनुक्रमणिका

क्रमांक	शीर्षक का नाम	लेखक का नाम	पृष्ठ
1	हिन्दी का चुटकुला साहित्य	डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी,	1
2	चुटकुला का सामाजिक मनोविज्ञान	डॉ. शंकर मुनि राय एवं चन्द्र ज्योति श्रीवास्तव	5
3	चुटकुले की वैश्विक प्रकृति	डॉ. शंकर मुनि राय	7
4	चुटकुले की उपयोगिता एवं प्रासंगिकता	डॉ. के. एस. गुरुपंच एवं नागेश्वर प्रसाद साहू	8
5	साहित्य की नयी सरणि के अधिकारी हैं चुटकुले	डॉ.चन्द्रकुमार जैन,	10
6	चुटकुले का सामाजिक, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक महत्व	डॉ. कृष्ण कुमार साहू एवं पीयूष कुमार टाण्डेय	12
7	चुटकुले का प्रारंभ, व्यवहार और विकास	डॉ. अनसूया अग्रवाल	15
8	चुटकुलों का हास्य–मनोविज्ञान	हिमाद्रि राय	16
9	चुटकुला में अभिव्यक्त साहित्य समाज और संस्कृति	डॉ. श्रीमती बेबी नन्दा जागृत	18
10	भाषा एवं साहित्य शिक्षण में चुटकुले का उपयोग	डॉ. सुषमा तिवारी	19
11	संस्कृत नाटकों की विदूषकीय परम्परा और चुटकुले	निरंजन ठाकुर	21
12	चुटकुले की सामाजिक, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि	उमेंद कुमार चंदेल	21-24
13	सामाजिक मीडिया के चुटकुलेः एक अध्ययन	डॉ. विजय लक्ष्मी शास्त्री	25
14	चुटकुले की उपयोगिता एवं प्रासंगिकता	डॉ. जयती बिस्वास	26
15	चुटकुलों का महत्व	श्रीमति मेधाविनी तुरे	27-28
16	चुटकुला : एक सर्वव्यापी लोकप्रिय विधा	प्रणीण कुमार साहू	28-30
17	चुटकुलों की प्रासंगिकता	डॉ. मंजुला पाण्डेय	30-32
18	चुटकुला : स्वरूप और सीमाएं	श्रीमति नीतू चौहान	32-33
19	चुटकुले की उपयोगिता एवं प्रासंगिकता	बंसत कुमार दास	33-34
20	सोशल मीडिया के चुटकुले	डॉ. श्रीमति हंसा शुक्लाःप्राचार्या	34-38
21	चुटकुले का अर्थ एवं रचना प्रक्रिया	डॉ. नीलम तिवारी	38-39
22	चुटकुले की उपयोगिता	श्रीमति ज्योति भरणे	39-40
23	चुटकलाःमानव समाज का अभिन्न अंग	देवे श्री चावड़ा एवं गितेन्द्र सिंह चौहान	40-41

Scanned with CamScanner

चुटकुले की उपयोगिता एवं प्रासंगिता

(डॉ. जयती बिस्वास, हिन्दी विभाग, वीरांगना अवंतीबाई शासकीय महाविद्यालय छुईखदान)

मानव जीवन सुख–दुख , हँसी–खुशी तथा आशा–निराशा जैसे अनेक सुखद एवं दुखद मनःस्थितियों का समुच्चय है। इसीलिए प्रत्येक मनुष्य के मन में अनेकानेक भाव व विकार पल–पल बनते व मिटते रहते हैं। प्रकृति ने मनष्य को जब से वाणी का वरदान प्रदान किया तब से वह अपने इन भावों को अभिव्यक्ति करता चला आ रहा है। विचारों व भावों की अनुभूति व अभिव्यक्ति ने ही मनुष्य को एकता, समता व घनिश्ठता के अंर्तसंबंधों में पिरोया है। इस अंतर्संबंध की सहायता से ही उत्कष्ट साहित्य का सृजन होता है। साहित्य की अनेकानेक विधाएँ मानव समाज को न केवल एक सूत्र में बांधने का कार्य करती है बल्कि समस्त प्राणी–जगत के प्रति सद्भावना व प्रेम का नाता जोड़ने की प्रेरणा देती है। साहित्य अपने इसी उद्देष्य के कारण देश–काल व वातावरण से ऊपर उठकर हर युग व हर काल में प्रासंगिक होता है। कहानी, उपन्यास, नाटक, एकांकी आदि गद्य की विधाएँ जितना अपना साहित्यिक महत्व व उपयोगिता रखती है उतना ही महत्व चुटकुलों का भी हो सकता है। गद्य की अन्य विधाओं की तरह ही यह भी साहित्य की अत्यंत प्राचीन विद्या कही जा सकती है। चुटकुलों के स्वरुप में समयानुसार थोड़ा–बहुत परिवर्तन भले ही हुआ हो किन्तु यह उपयोगिता एवं प्रासंगिता के साथ अन्य साहित्यिक विधाओं की तरह अपनी गरिमामय महत्ता साहित्य जगत में रखता है।

चुटकुलों को रचना प्रकिया की दृष्टि निम्नलिखित प्रकारों में बाँट सकते है–

1 पारिवारिक चुटकुले 2 सामाजिक चुटकुले 3 राजनैतिक चुटकुले 4 ऐतिहासिक चुटकुले आदि।

चुटकुलों के इन प्रकारों के माध्यम से मानव जीवन के इन क्षेत्रों के गुण–दोषों की जानकारी हल्के–फुल्के मनोभाव के साथ समझा जा सकता है। चुटकुले मानव मन को तरो ताजा करके मनुष्य को ऊर्जावान व स्फूर्तवान बनाने में मदद करते हैं चुटकुलों के श्रवण व पाचन से स्वस्थ मनोरंजन के साथ–साथ जीवन के अनेक कटु सत्य से भी पाठकों व श्रोताओं का साक्षात्कार होता है। चुटकुले साहित्य की एक ऐसी लघु विधा है जो कम समय लेकर भी अपने उद्देश्य को पूरा करने में सक्षम होता है।

Scanned with CamScanner

राष्ट्रीय संगोष्ठी

मानव संसाधन : भारत में समग्र विकास की संभावनाएँ

18 एवं 19 जनवरी 2016

संक्षेपिका

प्रायोजक

विश्व विद्यालय अनुदान आयोग
मध्य क्षेत्रिय कार्यालय, भोपाल

आयोजक

अर्थशास्त्र विभाग
शासकीय डॉ. बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर महाविद्यालय, डोंगरगाँव
जिला : राजनांदगांव (छ.ग.)

Scanned with CamScanner

UGC SPONSORED NATIONAL SEMINAR

On

Human Resource : Prospects of All Round Development in India

ORGANISED BY

DEPARTMENT OF ECONOMICS

Govt. Dr. B.S.B.A. College, Dongargaon (C.G)

18 & 19 January 2016

Convenor & Head

Dr. Mahesh Shrivastava

Department of Economics

Govt. Dr. B.S.B.A. College, Dongargaon (C.G.)

Patron

Dr. K.L. Tandekar

Principal

Govt. Dr. B.S.B.A. College, Dongargaon (C.G.)

Scanned with CamScanner

बढ़ती जनसंख्या के कारण सामाजिक परिवर्तन

डॉ. जयति बिस्वास (सहा. प्राध्यापक हिन्दी) वीरांगना अवंतीबाई शास.महाविद्यालय, छुईखदान
डॉ. पुष्पा मिंज (सहा. प्राध्यापक समाजशास्त्र) वीरांगना अवंतीबाई शास.महाविद्यालय, छुईखदान

सार–संक्षेप

किसी भी राष्ट्र के अस्तित्व के लिए विद्वानों ने 'भूमि', 'जन' और 'संस्कृति' की संकल्पना की है। इन तीनों तत्वों का अपना–अपना महत्व व उपयोगिताएँ हैं। एक के बिना दूसरे तत्वों की कल्पना संभव नहीं है। इन तीनों के संतुलित समन्वय से ही कोई राष्ट्र अपना अस्तित्व बना पाता है और अपने विकास की दिशा निश्चित करता है।

भारतवर्ष अपनी सांस्कृतिक एकता एवं विश्वबंधुत्व की भावना से विश्व में विशेष ख्याति प्राप्त है। भारत का प्रत्येक नागरिक अपनी इस सांस्कृतिक विरासत पर गर्व की अनुभूति करता है। भारत में 'जन' का संतुलन पिछले कुछ वर्षों में बिगड़ता–सा प्रतीत हो रहा है, जो भारतीय समाज के लिए चिन्ता का बहुत बड़ा कारण है। भारत की बढ़ती आबादी को जनसंख्या–विस्फोट के नाम से जाना जाता है। सीमित संसाधनों पर बढ़ती आबादी के लगातार दबाव से पर्यावरण भी लगातार प्रदूषित होता चला जा रहा है। अतः बढ़ती आबादी से सामाजिक परिवर्तन को प्राकृतिक और सामाजिक दो दृष्टिकोणों के माध्यम से देख सकते हैं जिसका अंतिम दुष्प्रभाव मानव समाज के साथ–साथ अन्य प्राणियों पर भी दिखाई पड़ रहा है।

Scanned with CamScanner

पर्यावरण के प्रदूषण से होने वाली परेशानियों ने आज असाध्य रोगों का रूप धारण करना प्रारंभ कर दिया है। इन बीमारियों से जूझने की क्षमता अमीरों के पास धन–बल के अधिक होने और सामान्य व निम्न आय वर्गों के पास यह क्षमता आवश्यकता से कम होने के कारण या वे पारिस्थिति का शिकार होकर जीवन से हाथ धो बैठते हैं या आधा–अधूरा इलाज करा पाते हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि अधिक जनसंख्या वृद्धि का दुष्परिणाम स्वास्थ्य की दृष्टि से निम्न व मध्यम आय के व्यक्तियों को अधिक झेलना पड़ता है।

अमीर–गरीब की खाई का जनसंख्या वृद्धि ने कम करने की अपेक्षा और बढ़ावा दिया है। अमीर व्यक्ति उचित व अनुचित दोनों तरीके से धन–संग्रह करके अपने जीवन को तो सुरक्षित करता है, साथ ही अपनी आने वाली पीढ़ी के लिए भी धन अर्जित कर लेना चाहता है। जबकि साधारण व्यक्ति को रोटी–कपड़ा व मकान जैसी अनिवार्य आवश्यकताओं के लिए जीवन भर संघर्ष करना पड़ता है। इन्हीं परिस्थितियों ने लोगों को अवसरवादी बना दिया है, लोग अब सहज भाव से किसी पर विश्वास नही कर सकते, एकाएक लोग जरूरतमंद को आर्थिक व सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने से डरने लगे हैं। राजनीति में इसी जनसंख्या–वृद्धि के कारण परिवारवाद, जातिवाद तथा क्षेत्रीयतावाद हावी होता चला जा रहा है जो न केवल दूषित राजनीति को बढ़ावा देता है बल्कि समाज के प्रायः सभी वर्ग इससे स्वयं को बचा पाने में असमर्थ सा महसूस कर रहे हैं।

...0...

Scanned with CamScanner

शोध पत्रिका

PROCEEDINGS

ISBN 978-81-8135-111-8

ज्ञान - विज्ञानं विमुक्तये

समकालीन छत्तीसगढ़ी साहित्य की प्रासंगिकता

02 एवं 03 दिसंबर, 2016

राज्य स्तरीय शोध संगोष्ठी

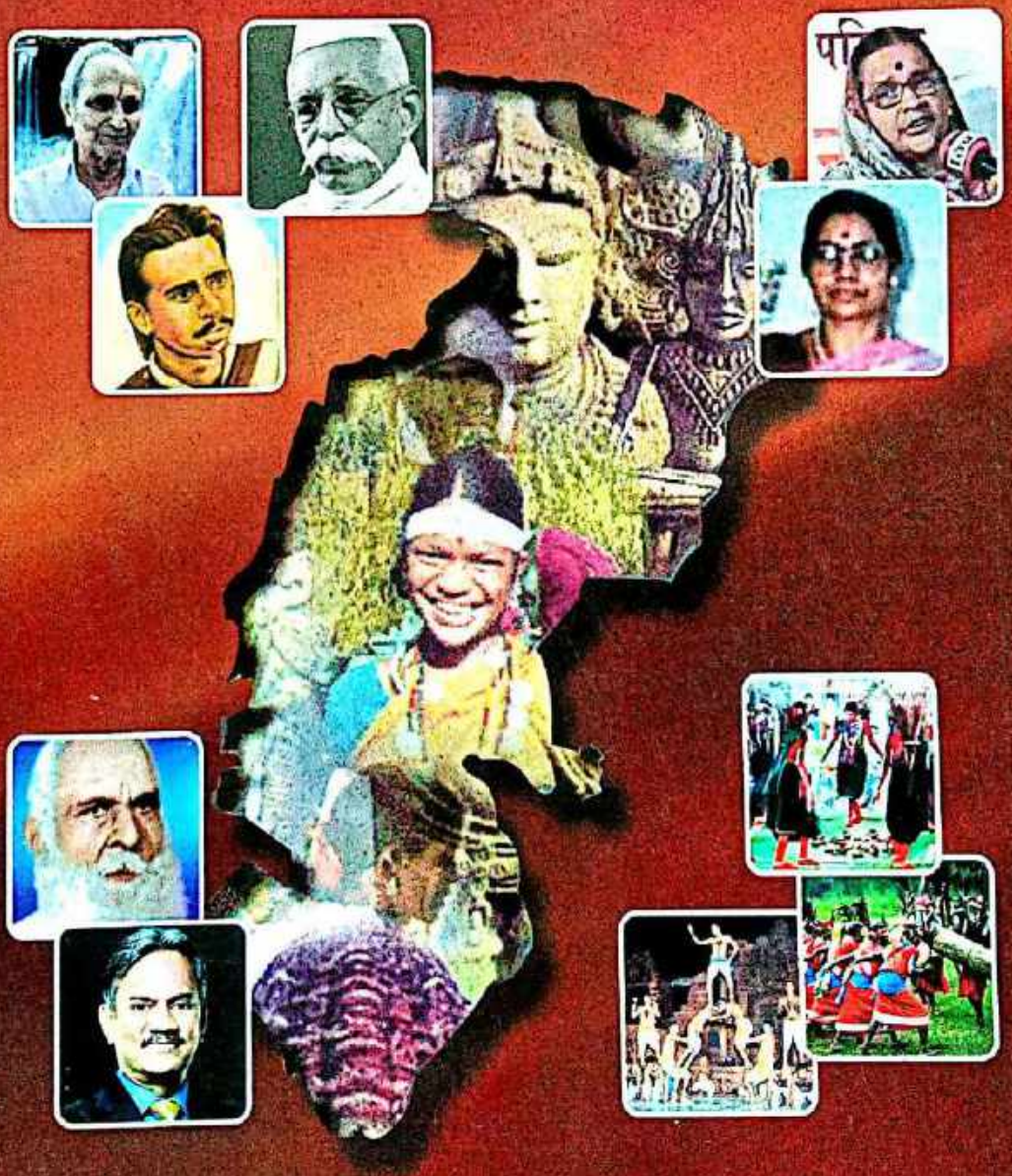

- आयोजक -

राजीव गांधी शासकीय महाविद्यालय, सिमगा

जिला- बलौदाबाजार - भाटापारा (छ.ग.)

- प्रायोजक -

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग

मध्यक्षेत्रीय शाखा

भोपाल (म.प्र.)

Scanned with CamScanner

ISBN 978-81-8135-111-8

ज्ञान - विज्ञानं विमुक्तये

समकालीन छत्तीसगढ़ी साहित्य की प्रासंगिकता

02 एवं 03 दिसंबर, 2016

राज्य स्तरीय शोध संगोष्ठी

शोध पुस्तिका

प्राचार्य एवं संरक्षक

डॉ. एम.पी. गुप्ता

संपादक

श्रीमती रोसमीना कुजूर

डॉ. मीता अग्रवाल

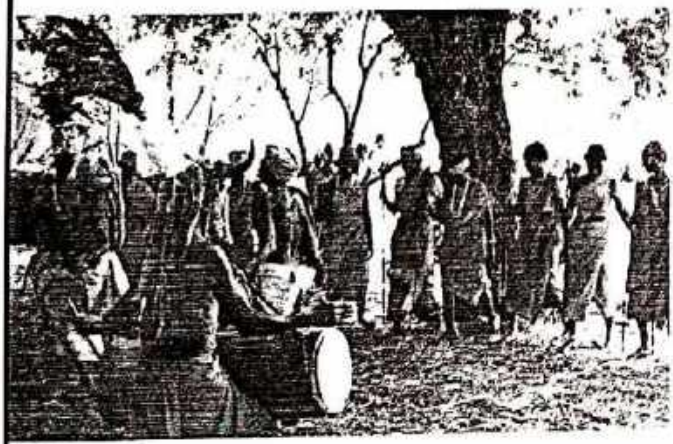

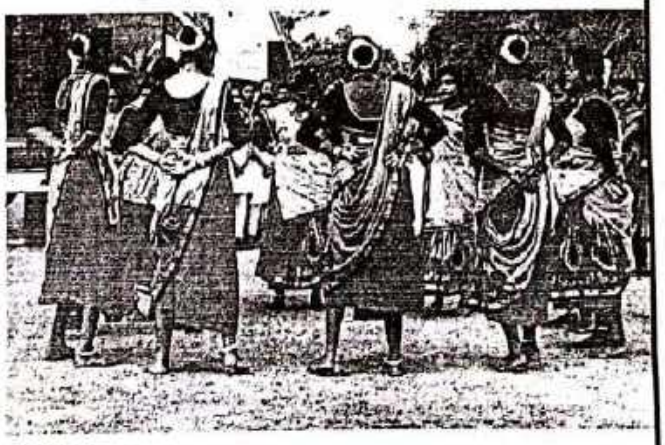

आयोजक

राजीव गांधी शासकीय महाविद्यालय, सिमगा

जिला– बलौदाबाजार – भाटापारा (छ.ग.)

प्रायोजक

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग,

मध्यक्षेत्रीय शाखा

भोपाल (म.प्र.)

Scanned with CamScanner

क्र.	शीर्षक	लेखक	पृष्ठ क्र.
25.	छत्तीसगढ़ी लोकगीतों में नारी भावना	डॉ. जी.पी. जायसवाल	103
26.	चंदैनी गोंदा की समसामयिकता एवं प्रासंगिकता	श्रीमती हेमलता देशमुख	105
27.	छत्तीसगढ़ी भाषा और साहित्य का विकास	धरमपाल साहू, सुशील कुमार तिवारी	108
28.	समकालीन छत्तीसगढ़ी कथा साहित्य मे स्त्री विमर्श	तुलसी देवी तिवारी	111
29.	छत्तीसगढी लोक–साहित्य की प्रचलित लोक–विधा–गोदना प्रथा	कु विधा सिंह राठौर	116
30.	छ.ग. काव्य का सामाजिक–राष्ट्रीय–वैश्विक सरोकार	स्वराज तिवारी	120
31.	लोक साहित्य	डॉ. शास्वती शर्मा	122
32.	आधुनिक लोकनाट्यों में छत्तीसगढ़ी "नाचा" का बदलता स्वरूप	डॉ. राजेश श्रीवास	124
33.	पंडित लोचन प्रसाद पांडेय की कविता में शराब व्यसन का दुष्प्रभाव एवं उससे मुक्ति का उपाय	डॉ. (श्रीमती) जयती बिस्वास	127
34.	लोकभाषा छत्तीसगढ़ी की 'अनुरूप' शब्द गठन एवं ध्वनन क्षमता	डॉ. द्वारिका प्रसाद चंद्रवंशी	130
35.	परदेशी राम वर्मा के कथा साहित्य का चित्रण	डॉ. रेणु सक्सेना, श्रीमती उर्मिला टण्डन	135
36.	छत्तीसगढ़ में छत्तीसगढ़ी भाषा की दशा एवं दिशायें	चुम्मन प्रसाद वर्मा	138
37.	छत्तीसगढ़ में काव्य लेखन एवं समकालीन प्रवृत्तियाँ	डॉ. (श्रीमती) मीना कुर्रे	143
38.	छत्तीसगढ़ी लोकनाट्य रहस–एक परिचय	डॉ. प्रदीप कुमार निर्णेजक	146
39.	छत्तीसगढ़ी भाषा : दशा और दिशा	श्री चंद्रकुमार चंद्राकर	149
40.	छत्तीसगढ़ी लोक कथाएँ : एक विश्लेषण	डॉ. गणेश शंकर पाण्डेय	154
41.	छत्तीसगढ़ी भाषा – दिशा और दशा	राजेन्द्र कुमार पाटले	161
42.	समकालीन छत्तीसगढ़ी नाटकों का परिदृश्य	आरती पाण्डेय	166
43.	समकालीन छत्तीसगढ़ी साहित्य की प्रासंगिकता (साहित्य, संस्कृति एवं शिक्षा के परिपेक्ष्य में)	डॉ. आर.पी. टण्डन	168
44.	समकालीन कविताओं में आज का सामाजिक परिदृश्य	डॉ. राजेश कुमार मानस	171
45.	छत्तीसगढ़ी भाषा : दशा एवं दिशा	ओमप्रकाश शहारे	174
46.	प्रतिवेदन : एक दृष्टि	–	177
47.	प्रतिभागियों की सूची	–	180
48.	समितियों की सूची	–	184

Scanned with CamScanner

ISBN 978-81-8135-111-8

शोध पुस्तिका

पंडित लोचन प्रसाद पांडेय की कविता में शराब व्यसन का दुष्प्रभाव एवं उससे मुक्ति का उपाय (भुतहा मंडल कविता के सन्दर्भ में)

डॉ. (श्रीमती) जयती बिस्वास
सहायक प्राध्यापक हिन्दी
वीरांगना अवंती बाई शासकीय महाविद्यालय, छुईखदान

ईश्वर ने इस संसार को जड़–चेतन व गुण–दोष से मिश्रित बनाया है। सचेतन प्राणियों में मनुष्य अपनी मानसिक व बौद्धिक क्षमता के कारण सर्वोच्च स्थान पर है। जब वह अपने आस–पास के वातावरण से गुणों को ग्रहण, दोषों को अनदेखा कर जीवन–यापन करता है तब वह अपने साथ–साथ परिवार, समाज व राष्ट्र को भी अपने सत्कर्मों से खुशहाली के मार्ग पर अग्रसर करता है। मानव समाज में अनेक ऐसे दोश हैं जिसे व्यक्ति न चाहते हुए उसमें लिप्त होकर अपने साथ–साथ परिवार व समाज को परेशानी में डालता है। वरन् स्वयं अपने जीवन की मुख्य धारा से अलग होकर कलंकित व अपमानित जीवन यापन करता है।

छत्तीसगढ़ के साहित्य–आकाश में पांडेय बंधु वे जगमगाते नक्षत्र हैं जिनकी उज्ज्वल कीर्ति की रोशनी कभी धूमिल नहीं पड़ सकती। पंडित लोचन प्रसाद पांडेय ने एक और 'छत्तीसगढ़' नामक कविता में छत्तीसगढ़ की प्राकृतिक संपदा तथा राजा प्रजा के हृदय में संचित मातृभूमि के प्रेम की अभिव्यक्ति करते हैं वहाँ वे (भूतहा मंडल में) दूसरी ओर समाज में व्याप्त शराबखोरी के दुष्परिणाम को देखकर चिंतित भी होते हैं। छत्तीसगढ़ भारत वर्ष के अन्य प्रांतों की तरह ही कृषि प्रधान राज्य है। यहाँ का आर्थिक विकास यहाँ की कृषि पर निर्भर है। ग्रामीण संस्कृति में एक किसान ही घर का मुखिया होता है। यदि मुखिया अपने कर्त्तव्यों से विमुख होकर शराब के नशे में स्वयं को भुला दे तो, उस परिवार के समस्या को शब्दों में, कह पाना मुश्किल है। शराबी' कामचोर किसान और उसकी औरत शीर्षक में ऐसे ही दुष्परिणाम को कवि ने अभिव्यक्ति प्रदान की है–

"लागा दिन–दिन बाड़त जाथै,
साव पियादा ला पंठवाथै।
इज्जत घर मा आके लेथे,
फूहर पातर गारी देथे।" 1

यहाँ यह बात स्पष्ट है कि शराबी जब नशे में धुत्त कामचोर व अकर्मण्य हो जाता है तब घर की यही दुर्दशा होती है, घर की अनिवार्य आवश्यकताओं के लिए गृहिणी कर्ज लेती हैं। और जब वह कर्ज नहीं चुका पाती, तब साहूकार अपने नुमाइन्दे भेजकर उन्हें डाँट–फटकार करता है। गृहिणी के रूप में एक नारी की सहनशक्ति जब सीमा पार कर जाती है तब वह अपनी पीड़ा अपने पति से कहती है–

"लइका पिचका घर मा रो थे,
भूख–भूख कहि व्याकुल होथे
मैं डौकी काकर घर जैहों
काला अपन लाज ला कैहों
दू काठा कोदो हर भोला,
नोहर हो गै छी, छी तोला।" 2

उपर्युक्त छंद में पति की निर्ममता एवं पारिवारिक क्लेश को कवि ने अत्यंत संजीदगी से प्रस्तुत किया है। यहाँ पति शराब पीकर पारिवारिक जिम्मेदारियों को भूल जाता है व पत्नी दो काठा कोदो के लिए भटकती है । इतना ही नहीं एक माँ अपनी संतान को जैसे–तैसे भोजन कराती है, किन्तु घर की संपत्ति भी शराब की लत में बिकने लगी है–

"दारू पी–पी के घर ला फूँके
कुकुर कस नरिआये भूँकै।
पूरिस नहीं मंद बर पैसा

Scanned with CamScanner

ISBN 978-81-8135-111-8

हाय बेचागे गाड़ी–भैंसा।।
तैहर कह तो का हरा पाँचै,
धोवे चाउर घलुक नि बाँचे ।" 3

संपत्ति के बिकने से घर में विपत्तियों का आना स्वाभाविक है। कृषक परिवार में गाड़ी और पशु–संपत्ति का बिकना उस परिवार के ऊपर पहाड़ टूटने जैसी आपदा को आमंत्रण देने से कम नहीं है। जहाँ संपत्ति बिगड़ने लगे, वहाँ शांति की कल्पना असंभव है। पति–पत्नी के आपसी सामंजस्य में कमी भी शराब की इसे लत के कारण है। पत्नी अपने व पड़ोसी परिवार की तुलना करती है–

"धान लान मइके ले मोरे,
लइका मन ला पोसौ तोरे
जे अब्बो जो दारू पीबे,
तब से कैसे करके जी बै
देख परोसी ला तै हमरे
सुख है ओला कैसन सबरे
ओकरो तो है ओतकिच भुइयाँ
दुख के ओला नइये छइयाँ।" 4

शराबी व्यक्ति के कारण परिवार अनेक विसंगतियों का सामना करता है वहीं निर्व्यसनीय मुखिया अपनी जिम्मेदारियों का खुशी–खुशी निर्वाह करता हैं। उनके घर की संपत्ति भी क्रमशः बढ़ने लगती है, मुखिया के सम्मान में वृद्धि होती है और गृहलक्ष्मी संतुश्ट होती है।

अर्थात समग्र परिवार प्रगति के पथ पर अग्रसर होता है।

"नहीं साब के करे बिगाड़ी,
बना लिहिस ना बैला गाड़ी।
दे थे दू झन ला ओ बाढ़ी
खाथै भैंइस दूध के साढ़ी ।।
लक्ष्मी ए ओकर मेहरारू,
ओला पियन न देवे दारू ।।
कंठा ढार नत्थ है ओकर,
रूपहा पैरी बढ़ियन सुन्दर ।।"5

पड़ोसी की खुशहाली की अभिव्यक्ति के साथ शराबी पति की पत्नी उनके आपसी तालमेल को हृदय से सराहना करती है, उनके कर्मठ जुझारू और समझदार व्यक्तित्व को पति के सम्मुख प्रस्तुत करती हुई कहती है–

"कुकरा बस्ती ले ओ उठथे।
घर के काम धाम सब करथे।।
मनखे ला झाठ खेत पठोथे।
ठौका समै नींदथे बोथे।
खातू पालय माँ देथे मन
रोपा घलुक जगाथें ओमन।।
अर्रा खरचा कभू नि करै।
नहीं गौंतरी जा जा किंदरै।।6

जिस परिवार में मुखिया मेहनती और काम के प्रति समर्पित है उस परिवार में खुशियों का आगमन सहज है। शराबी पति की पत्नी अपने दुर्भाग्य पर आँसू बहाती हुई पति से शिकायत करती है–

"का जानी का होगै तोला
बिहा करै तैं कावर मोला
दाना–दाना बर दुख पाबो
की हम कभू कमा के खाबौ।।" 7

वह नारी शिकायत के साथ कर्मप्रधान जीवन की लालसा भी अभिव्यक्त करती है। पति को शपथ देकर मानव जीवन की सार्थकता स्पश्ट करती है–

"मोर बड़े किरिया है तोला
दुरलभ ऐ ए मनखे चोला
तैं दारू झन पी मोर जांवर
परै तोर संग मां है भांवर
मोर कहे ला मान ले अबो
लइका लोग न अस दुख पाहीं
गोरस भात रोज फेर खाहीं।।" 8

कवि ने मानव जीवन को दुर्लभ माना है इसे दारू पीकर व्यर्थ न करने की समझाइश दी है। जो व्यक्ति वैवाहिक संस्कार में आबद्ध होकर मनमानी करता है वह अपने परिवार के भविष्य को भी अंधेरे में ढकेल देता है। इसलिए ऐसी बुरी लत से जो व्यक्ति स्वयं को उबार लेता है वह किस प्रकार खुशहाल होकर सार्थक जीवन यापन करता है उसको कवि इन शब्दों में स्पष्ट करते हैं–

"सुन के ऐसे बात ला डौकी के फरफन्द।
भुतहा मण्डल के तुरत उतर गइस सब नन्द

Scanned with CamScanner

ISBN 978-81-8135-111-8

ओ दिन ओकर पेट मां ये सब गइस समाय।
दारू पीअब छाँड़ के जी दै लगिस कमाय।
खूब कमाइस खेत 'रोपा' बोइस, बलुक ओ।
चढ़ गइस वोकर चेत, अजाइस 'कुसियार' ला।
मूँगफली अऊ धान, ओकर उपजिस जोत के।
पाइस अत्तर पान, लमनी डीह के सभी मां ।।" 9

कवि ने उपर्युक्त पंक्ति में पत्नी का कहना मानने वाले समझदार पति की किस्मत को उज्जवल करने का दृश्य उपस्थित किया है। जो व्यक्ति अपने जीवन के प्रति जागरूक होकर अपने कार्य मे मन लगाता है वहाँ परिवार की विपत्तियाँ स्वयं समाप्त हो जाती है तथा चारों ओर खुशियाँ व्याप्त होने लगती है समाज में ऐसे मुखिया का लोग आदर व सम्मान करते हैं।

वर्तमान समाज में पुरूषों की लगभग आधी आबादी शराब की इसी लत का शिकार है। शराबी पिता, भाई व पति से नारियाँ त्रस्त होकर बदहाल हैं। ऐसे परिवार में नारी की कर्मठता और योग्यता से ही परिवार का भरण पोषण समाज को सही दिशा में लाने हेतु मार्गदर्शक शराबी की भूमिका निभाता प्रतीत होता है। शराब से मुक्ति का एकमात्र उपाय कर्मप्रधान जीवन है।

वर्तमान जीवन में जीने की सार्थकता समझदारी और सकारात्मक विचार में निहित है। यह तभी संभव है जब पति–पत्नी आपसी तालमेल से जीवन यापन करें।

संदर्भ सूची –

1. पं. लोचन प्रसाद पाण्डेय चयनिका से उद्धृत भूतहा मंडल कविता से उद्धृत–पृ. 109
2. पं. लोचन प्रसाद पाण्डेय चयनिका से उद्धृत भूतहा मंडल कविता से उद्धृत–पृ. 109
3. पं. लोचन प्रसाद पाण्डेय चयनिका से उद्धृत भूतहा मंडल कविता से उद्धृत–पृ. 110
4. पं. लोचन प्रसाद पाण्डेय चयनिका से उद्धृत भूतहा मंडल कविता से उद्धृत–पृ. 110
5. पं. लोचन प्रसाद पाण्डेय चयनिका से उद्धृत भूतहा मंडल कविता से उद्धृत–पृ. 111
6. पं. लोचन प्रसाद पाण्डेय चयनिका से उद्धृत भूतहा मंडल कविता से उद्धृत–पृ. 111
7. पं. लोचन प्रसाद पाण्डेय चयनिका से उद्धृत भूतहा मंडल कविता से उद्धृत–पृ. 111
8. पं. लोचन प्रसाद पाण्डेय चयनिका से उद्धृत भूतहा मंडल कविता से उद्धृत–पृ. 111
9. पं. लोचन प्रसाद पाण्डेय चयनिका से उद्धृत भूतहा मंडल कविता से उद्धृत–पृ. 111

संदर्भ ग्रंथ –

1. पं. लोचन प्रसाद पाण्डेय चयनिका लेखक–ईश्वर शरण पाण्डेय
प्रकाशक, छत्तीसगढ़ राज्य हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पी–3, पं. रविशंकर शुक्ल
विश्वविद्यालय परिसर रायपुर, प्रथम संस्करण, सन्–2009, प्रथम संस्करण–सन् 2009

Scanned with CamScanner

शासकीय रानी अवंतीबाई लोधी महाविद्यालय

घुमका, जिला - राजनांदगाँव (छ.ग.)

एक दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी

लोक साहित्य का जन चेतना पर प्रभाव

05 मार्च 2020

संक्षेपिका

शास. रानी अवंतीबाई लोधी महाविद्यालय • घुमका (छ.ग.) • विद्या विनय विवेक

- आयोजक -

हिंदी विभाग

शासकीय रानी अवंती बाई लोधी महाविद्यालय, घुमका

शासकीय रानी अवन्तीबाई लोधी महाविद्यालय घुमका

जिला-राजनांदगांव (छ.ग.)

Scanned with CamScanner

शोध स्मारिका

" लोक साहित्य का जन चेतना पर प्रभाव "

5 मार्च 2020

आयोजक

हिंदी विभाग

शासकीय रानी अवंती बाई लोधी महाविद्यालय, घुमका,

जिला–राजनांदगांव (छ.ग.)

Scanned with CamScanner

अनुक्रमणिका

संक्षेपिका (हिंदी)

क्रमांक	विवरण	पृष्ठ क्रमांक
1.	शुभकामना संदेश – डॉ. अरूणा पल्टा, कुलपति हेमचंद यादव विश्वविद्यालय, दुर्ग	4
2.	शुभकामना संदेश – श्री भुनेश्वर शोभाराम बघेल, विधायक, डोंगरगढ़	5
3.	प्राचार्य की कलम से..... डॉ. आई. आर. सोनवानी	6
4.	हिंदी विभाग – डॉ. के. डी. देशलहरा, सहायक प्राध्यपक–हिंदी	7
5.	लोक साहित्य एवं विविध पक्ष – डॉ. बी. के. देवांगन, डॉ. के. डी. देशलहरा	8
6.	लोक साहित्य की अवधारणा – डॉ. सत्यदेव त्रिपाठी, डॉ. रोहन प्रसाद	9
7.	लोक साहित्य एवं लोक संस्कृति – अर्पणा श्रीवास्तव	10–12
8.	लोक साहित्य एवं विविध परम्पराएं – डॉ. जयती बिस्वास, डॉ. उत्पल बिस्वास	13–15
9.	छत्तीसगढ़ी लोकगीतों में नारी जीवन सुवा गीत के संदर्भ में – श्रीमती मेधाविनी तुरे	16–19
10	लोकगीतों का सांस्कृतिक पक्ष : छत्तीसगढ़ी लोकगीतों का विशेष संदर्भ – श्रीमती ममता दुबे	20–23
11	लोक साहित्य और लोक जीवन का स्वरूप – डॉ. प्रवीण कुमार साहू	24
12	भारतीय लोक संस्कृति का प्रतिबिम्ब : भारतीय लोक साहित्य – श्रीमती स्मृति कन्नौजे	25–26
13	छत्तीसगढ़ी लोकगीतों में जनचेतना – डॉ. लालचंद सिन्हा	27–28
14	लोकसाहित्य की प्रिय विधा : छत्तीसगढ़ी लोकगीत – डॉ. नीता ठाकुर	29
15	लोक संस्कृति एवं मूल संवेदना – एस कुमार गौर, **डॉ0 श्रीमति बी0 एन0 जागृत**	30
16	लोक साहित्य में लोकगीत के विभिन्न लक्षण – मनीश कुमार कुर्रे, **डॉ0 चन्द्रकुमार जैन**	31
17	लोक साहित्य में लोक गीत – डॉ. ज्योति केरकेट्टा, डॉ. एस. गायकवाड	32–33
18	लोक साहित्य का परिचय – प्रो. एस. एन. कामड़ी, कु. गंगेश्वरी	34
19	लोक साहित्य में सामाजिक एवं सांस्कृतिक चेतना – श्रीमती प्रीति खुरसैल, श्रीमती वर्षा साहू	35
20	लोक साहित्य में पर्यावरण चेतना – श्री रितेश कुमार बंजारे, कु योगिता	36
21	लोक साहित्य की विशेषताएँ – श्री विनोद वर्मा, श्री देवानंद बांधे	37
22	लोक साहित्य एवं लोक जीवन का स्वरूप – श्री रंजीत कुमार निर्मलकर, श्री देवशरण वर्मा	38
23	लोक साहित्य एवं जनजीवन – श्री जयप्रकाश वर्मा, श्री रविप्रकाश चतुर्वेदी	39
24	लोक साहित्य एवं लोक नाटक – श्री दुर्गा प्रसाद चौधरी, श्री उकेश कुमार साहू	40
25	लोक साहित्य परम्परा : एक ऐतिहासिक अनुशीलन – श्री विजेन्द्र सिंह राठौर, श्री विमल कुमार तिवारी	41–43

Scanned with CamScanner

लोक साहित्य एवं विविध परम्पराएं

लोक का सामान्य अर्थ ऐसे सामान्य जन से लगाया जाता है जो सहज, सरल, व परिशुद्ध जीवनयापन करते हुए प्रकृति से जुड़े हैं। इनके जीवन में किसी तरह का न तो बनावटीपन होता है, न ही ये भोग–विलास में डुबे होते हैं। प्रकृति से जुड़े होने के कारण इनके जीवन के प्रमुख संस्कार, तीज–त्यौहार, पूजा–पर्व, तथा विभिन्न अनुष्ठानों में प्रकृति प्रेम की मनोरम झांकियां परिलक्षित होती है। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी– लोक के संबंध में अपना विचार प्रकट करते हुए कहते है– "लोक शब्द का अर्थ जनपद या ग्राम में नही है, बल्कि नगरों व गांवों में फैली हुई वह समूची जनता है जिनके व्यावहारिक ज्ञान का आधार पोथियां नही है ये लोग नगर में परिष्कृत रूचि सम्पन्न तथा सुसंस्कृत समझे जाने वालें लोगों की अपेक्षा अधिक सरल और अकृत्रिम जीवन के अभयस्थ होते है और परिष्कृत रूचि वालें लोगो की समूची विलासिता और सुकुमारता को जीवित रखने के लिए जो भी वस्तुएं आवश्यक होती है उनको उत्पन्न करते हैं।" 1. अतः यह स्पष्ट है कि लोक वह जनसमुदाय है जिनका जीवन अनादि काल से अद्यतन आंशिक परिवर्तन के बावजूद अपने मूल स्वरूप में विद्यमान हैं।

डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल लोग का महत्व स्पष्ट करते हुए कहते है– "लोक हमारे जीवन का महासमुंद्र है उसमें भूत भविष्य, वर्तमान सभी कुछ संचित रहता हैं, लोक राष्ट्र का अमर स्वरूप हैं। लोक–कृत्स्न ज्ञान और सम्पूर्ण अध्ययन में सब शास्त्रों का पर्यवसान हैं। अर्वाचीन मानव के लिए लोक सर्वोच्च प्रजापति हैं। लोक की धात्री सर्वभूत माता पृथ्वी और और लोक का व्यक्त रूप मानव यहीं हमारे नये जीवन का आध्यात्म शास्त्र हैं।" 2. डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल ने लोक की महत्ता प्रतिपादित करते हुए यह स्पष्ट किया है कि लोक अपने वृहद् अर्थ में समूचि जनमानव को धारण करती हैं, जो अपनी व्यावहारिक ज्ञान द्वारा अपने समाज व राष्ट्र को सम्पन्न व खुशहाल बनाता है। राष्ट्र के स्वरूप निर्माण में लोक की भूमिका अतुलनीय हैं।

लोक के अर्थ की तरह ही साहित्य का अर्थ भी व्यापक हैं। सामान्यतः जिस कृति या कार्य को सब के हित के लिए किया जाए वह साहित्य हैं। जिस तरह मनुष्य को लोकजन व शिष्टजन के रूप में देखते हैं उसी तरह साहित्य को भी लोक साहित्य व शिष्ट साहित्य के रुप में देखा जाता हैं। लोक साहित्य की सीमा निर्धारित करते हुए डॉ. सत्येन्द्र लिखते है– "लोक साहित्य के अंतर्गत वह समस्त बोली व भाषागत अभिव्यक्ति आती हैं जिसमें, आदिम मानव के अवशेष हों, परम्परागत मौखिक क्रम से उपलब्ध बोली व भाषागत अभिव्यक्ति हों, जिसे किसी की कृति न कहा जा सके, जिसे श्रुति ही माना जाता हो, और जो लोक मानस की प्रवृत्ति में समाई हुई हो, किन्तु का कृतित्व लोक मानस के सामान्य तत्वों से युक्त हो, उसके किसी व्यक्तित्व के साथ संबंद्ध रखते हुए भी उसे अपने ही व्यक्तित्व की कृति स्वीकार करें।" 3. लोक साहित्य की उपर्युक्त सीमा के आधार पर यह कहा जा सकता है कि लोक साहित्य सामान्यजन की वह अभिव्यक्ति है जो मौखिक रूप में पीढ़ी–दर–पीढ़ी हस्तांतरित होती है, इनमें जीवन के सुख–दुःख की अनुभूतियां, परम्पराएं, रीति–रिवाज, संस्कार, आदि शामिल होते हैं। ये साहित्य किसी व्यक्ति की प्रयासपूर्वक रचना न होकर जीवन की मौलिकता, स्वच्छंदता, तथा ह्रदय की विशालता के द्योतक होते हैं।

लोक साहित्य के अंतर्गत लोक नृत्य, लोक गीत, लोक नाट्य, लोक गाथा, लोक कथा, लोकोक्तियां, मुहावरें जनउल मृथक आदि अनेक विधाऐं शामिल हैं। लोक साहित्य के इन विधाओं का संक्षिप्त परिचय एवं उनके महत्व को संक्षिप्त में इस प्रकार देखा जा सकता है–

1. लोक नृत्य :– गीत वाद्य व नृत्य के समन्वय से संगीत की उत्पत्ति होती हैं। लोक जीवन में नित्य प्रति भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिए संगीत को सबसे अच्छा साधन माना गया है। नृत्य के माध्यम से सामान्यजन मनोरजन के साथ–साथ खेल–खेल में अपने श्रम को भूल कर आनंद मग्न होकर जीवन पथ पर अग्रसर होते हैं। लोक नृत्य छत्तीसगढ़ में तीज, त्यौहार, तथा संस्कारों के अवसर पर किये जाते हैं। छेरछेरा, सुआ, करमा, आदि इसी तरह के लोक नृत्य हैं।
2. लोक नाट्य :– नाट्य विधा विश्व की प्राचीनतम साहित्यिक विधाओं में से एक हैं। शिष्ट नाट्य विधा लोक नाट्य का ही परिष्कृत व परिवर्तित रूप हैं। इस विधा में कल्पना, संवाद व संगीत का मणिकांचन संयोग होता हैं। लोक नाट्य का मंचन अति सामान्य होने बावजूद जन सामान्य के लिए प्रभावशाली होता हैं। आवश्यकतानुसार इसका मंचन खुले स्थान में चटाई व दरी बिछाकर खेला जाता हैं। लोक नाट्य में एक ही कलाकार एक से अधिक पात्रों को अभिनय करता हैं। छत्तीसगढ़ी लोक नाट्य में गम्मत का विशिष्ट स्थान हैं।
3. लोक गाथा :– लोक गाथा साहित्य की ऐसी विधा है जिसमें कहानी को गेय शैली में प्रस्तुत किया जाता है। लोक गाथा प्रायः व्यक्ति विशेष की जीवन पर आधारित होता है। प्राचीन काल में राजा द्वारा किये गये लोक कल्याण कार्य को जन साधारण के बीच प्रस्तुत जनसाधारण के बीच प्रस्तुत करते हुए चारण कवि राजाओं का गुणगान किया करते थे। राजा भरथरी, आल्हा, ढोला–मारू छत्तीसगढ़ की प्रसिद्ध लोक गाथाएं हैं। इनमें कविता व गीत की रसात्मकता के साथ–साथ कहानियों की भांति पात्रों के जीवन

Scanned with CamScanner

उतार–चढ़ाव, संघर्ष, वीरता, प्रेम, भक्ति, आदि उदात्त भावनाओं की अभिव्यक्ति, जीवन की समस्याओं से जुझने की क्षमता तथा जीवन के शाश्वत मूल्यों से परिचय होती हैं।

4. लोक कथाएं :– लोक कथाएं सम्पूर्ण विश्व में विख्यात हैं। लोक कथाएं उस राष्ट्र व समाज के अमूल्य धरोहर है जहां ये कही व सुनी जाती हैं। लोक कथाओं में पशु–पक्षी पेड–पौधे, नदी–पहाड़, भूत–प्रेत, देवी–देवता, यैक्ष–परी, राजा–महाराजा, आदि प्रमुख पात्रो की भूमिका निभाते हैं। लोगों के मन मन लोक कथाओं के प्रति दृढ़ विश्वास मान्यता एवं आस्था का संगम दृष्टि गोचर होता हैं। लोक कथाएं मनुष्य के मन में सामाजिकता को जागृत करने के साथ–साथ देश–प्रेम की भावना को भी विकसित करती है। छत्तीसगढ़ ही नहीं सम्पूर्ण भारत वर्ष में त्यौहारों व संस्कारों के अवसर पर लोक कथाओं के माध्यम से लोग अपने हृदय के हर्षोल्लास की अभिव्यक्ति करते हैं। इस अवसर पर कही जानी वाली कहानियां ईश्वर के प्रति आस्था को प्रकट करते ही साथ ही जनमानस की संकल्प शक्ति व ज्ञान शक्ति को विकसित करके मन को पवित्र करने में मुख्य भूमिका निभाते है। भाई–दूज, राम–नवमी, शिवरात्री, धनतेरस, देवउठनी एकादशी, अगहन गुरूवार, कार्तिक पूर्णिमा होली, आदि पर्वो पर कहानियां कहने व सुनने की परम्परा है। इन कहानियों के माध्यम से आपसी प्रेम व भाई–चारा जैसे मानवीय गुण परिवार व समाज में विकसित होते है।

5. लोक गीत :– लोक गीत लोक साहित्य की अत्यन्त महत्वपूर्ण विधा है, लोक गीत के माध्यम से मानव मन के सूक्ष्म भावो की अभिव्यक्ति होती हैं। गीतो के भावों में प्रकृति से घनिष्ठ संबंध, रिस्तो की मधुरता, देवी–देवताओं की स्तुति, अपनी रंजकता और रसात्मकता के साथ शामिल होते है। तीज–त्यौहार व संस्कारों में हृदय के उद्‌गार की मार्मिक अभिव्यक्ति लोक गीतो में अभिव्यक्त होते है। छत्तीसगढ़ में भोजली गीत, अत्यन्त लोकप्रिय गीत हैं। हरेली के दिन से सामान्य जन अपने घरों में टोकरी में मिट्‌टी डाल के गेहूं व धान बोकर कृषि कार्य की शुरूआत करते हैं। आठ–दस दिन पश्चात् उगे हुये गेहूं व धान के पौधे को भोजली देवी मानकर पूर्ण भक्ति भावना के साथ उसे नदी या तालाब में विसर्जित करते हैं। प्रस्तुत भोजली गीत, में भोजली माता का श्रृंगारिक सौन्दर्य दृष्टव्य हैं।

देवी गंगा देवी गंगा लहर तुरंगा।
हमरे नहर मा भोजली के भिजे आठो अंगा।।
अहो देवी गंगा ।
पियर पियर रूप रंग आंखी काजर रेखना हो
हमरो भोजली दायी के हरू हरू अंगना।।
अहो देवी गंगा।
झिलमिल झिलमिल दियना नाहकत जले देवी के डोलियां।।
हमरो देवी भोजली के मीठे–मीठे बुलियां।
अहो देवी गंगा।

6. जनउला :– लोक साहित्य की अतिविशिष्ट व अभिन्न विधा हैं। हिन्दी में इस विधा को पहेली के नाम से जाना जाता हैं। इस विधा के माध्यम से सामान्यजन ज्ञान के भंडार में वृद्धि करते है तथा अपनी तार्किक क्षमता विकसित करते हैं। छत्तीसगढ़ी बोली में ऐसे असंख्य जनउले हैं जो मनोरंजन के साथ–साथ मन को आनंदित करते हैं। उदाहरण स्वरूप निम्न जनउले को देखा जा सकता है।

सब झन चल दीन मोला लटका दीन ।
यह जनउला दरवाजे पर लगाया जाने वाला ताला हैं।

मनोरंजन के अत्याधुनिक साधनों के प्रभाव से जनउला रूपी मनोरंजन का यह मौलिक विधा लुप्त प्रायः प्रतित हो रहा है।

7. लोकोक्ति व मुहावरें :– जनउला की तरह लोकोक्ति व मुहावरें साहित्य की महत्वपूर्ण विधाएं हैं। ये लोकोक्ति व मुहावरें मनुष्य के अनुभव व गहन निरीक्षण क्षमता के फलस्वरूप स्वतः सृजित होते हैं। जिससे इन्हें गागर में सागर भरने की प्रवृत्ति स्वतः विकसित हो जाती हैं। जैसे –

खाये गेहूं के गादा तो भुलाये दायी ददा।

लोकोक्ति का भाव यह है कि सम्पन्नता आने पर लोग अपने ही माता पिता को भूल जाते हैं।

Scanned with CamScanner

अतः यह स्पष्ट हैं कि लोक साहित्य के अंतर्गत विविध विधाएं सम्मिलित है सब का अपना अपना स्वरूप व महत्व हैं। ये समस्त साहित्य जनमानस को नैतिक शिक्षा प्रदान करते हैं। अदृश्य शक्ति के प्रति दैवत्य का भाव विकसित होता है तथा प्रकृति को सहजने की प्रेरणा मिलती है। पूर्वजो के अनुभव व उनकी बौद्धिक क्षमता से जनसामान्य अपने जीवन को सुखमय व सहज बनाने की दिशा में आगे बढ़ते है। ये साहित्य अपनी वृहत्तर भूमिका निभाते हुये राष्ट्रीयता के भावनाओं को विकसित करते हैं। इनका संरक्षण समस्त मानव जाति का अनिवार्य कर्त्तव्य हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

1. लोक साहित्य की भूमिका
   लेखक–डॉ. कृष्ण देव उपाध्याय, पृष्ठ–11, साहित्य भवन, प्राईवेट लिमिटेड, इलाहाबाद, विद्यार्थी संस्करण 2004
2. छत्तीसगढ़ी लोक जीवन और लोक साहित्य का अध्ययन
   डॉ. शकुन्तला वर्मा, पृष्ठ–83, रचना प्रकाशन इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1971

डॉ. जयती बिस्वास
सहायक प्राध्यापक हिन्दी
वी.अ.बा.शासकीय महाविद्यालय
छुईखदान

डॉ. उत्पल बिस्वास
सहायक प्राध्यापक
त्रिपुरा केन्द्रीय विश्वविद्यालय त्रिपुरा

Scanned with CamScanner

राज्य स्तरीय शोध संगोष्ठी

नवगठित छत्तीसगढ़ राज्य का विकास: समस्याएँ एवं संभावनाएँ

26 फरवरी 2014

प्रायोजक
उच्च शिक्षा संचालनालय
छत्तीसगढ़ शासन

आयोजक
इंदिरा गांधी शासकीय महाविद्यालय
पण्डरिया, जिला-कबीरधाम

Scanned with CamScanner

:: राज्य स्तरीय शोध संगोष्ठी ::

नवगठित छत्तीसगढ़ राज्य का विकास

समस्याएं एवं संभावनाएं

दिनांक : 26 फरवरी 2014

प्रायोजक

उच्च शिक्षा संचालनालय
छत्तीसगढ़ शासन

आयोजक

इंदिरा गांधी शासकीय महाविद्यालय

पण्डरिया, जिला - कबीरधाम (छ.ग.)

Scanned with CamScanner

1. नवगठित छत्तीसगढ़ के विकास का मूल्यांकन एवं संभावनाएं - मदनलाल कश्यप 1
2. नवगठित छत्तीसगढ़ में विकास की संभावनाये एवं चुनौतियॉ : विशेष सन्दर्भ-छत्तीसगढ़ी भाषा - डॉ. मंजुला पाण्डेय 5
3. Evaluation of Development in Chhattisgarh Dr. Ajay kumar Rai 7
4. छत्तीसगढ़ के जनजातीय बाहुल्य क्षेत्रों में पर्यावरणीय : प्रदूषण एवं प्रभाव - उमेन्द्र चतुर्वेदी 9
5. छत्तीसगढ़ राज्य में विकास की धाराएं... - डॉ. श्रीमती अर्चना शुक्ला 11
6. जनजाति महिलाओं में शिक्षा का विकास एवं समस्याऐं- (कबीरधाम जिले के विशेष संदर्भ में) - श्रीमती के.एस.परिहार, श्रीमती कांति अंचल 12
7. जनजातीय जीवन में औषधीय वनस्पतियों की उपयोगिता एवं महत्व - डॉ. निर्मल चक्रधर 13
8. छत्तीसगढ़ में औद्योगीकरण एवं नगरीकरण - गजानंद बुड़ेक 14
9. छत्तीसगढ़ का ऐतिहासिक विकास - श्रीमती जयंती बिस्वास, डॉ.उत्पल बिस्वास 15
10. ECOTOURISM DEVELOPMENT IN CHHATTISGARH - Dr. Ajay Kumar Rai, Shri Madan Lal Kashyap 16
11. आदिवासियों के बदलते वनीय आर्थिक संसाधन आधार : छ.ग. के विशेष संदर्भ में - श्री मुकेश चक्रधर 17
12. छत्तीसगढ़ में जनजाति विकास - डॉ. मंजुला दुबे 20
13. छत्तीसगढ़ राज्य का सांस्कृतिक स्वरूप - डॉ.रजनी सोनवानी 21
14. पर्यटन विकास विविधता से भरपूर छत्तीसगढ़ - बालेन्दु मणि त्रिपाठी 23
15. नवगठित छत्तीसगढ़ राज्य का विकास समस्याऐं एवं सम्भावनाएं प्रादेशिक नियोजन एवं आर्थिक विकास के विशेष संदर्भ में - पुष्पेन्द्र कुमार देवांगन 25
16. छत्तीसगढ़ का विकास एवं योजनाएँ - ओ. पी. जायसवाल 27
17. छत्तीसगढ़ में लोकगीत - डॉ.श्रीमती हरिणी रानी आगर 29
18. विकासखण्ड बोड़ला, जिला कबीरधाम के ग्राम गांगचुआ के बैगाओं के जीवन में मुख्यमंत्री खाद्यान्न योजना का प्रभाव - डॉ. द्वारिका प्रसाद चन्द्रवंशी 31
19. Tribal Development Policy and Programmes of C.G. State - M. R. Banjare 33
20. The Growth, Possibles and Problems of New Created Chhattisgarh - Sandeep Kumar Sonkar 37
21. छत्तीसगढ़ में जनजाति विकास - डोशन कुमार साहू 38
22. कृषि पद्धतियाँ एवं जैव विविधता : छत्तीसगढ़ एक अध्ययन - डॉ. सरोज चक्रधर 39
23. छत्तीसगढ़ विकास एवं संभावनाएं - हितेन्द्र त्रिपाठी, श्रीमति सरिता त्रिपाठी
24. छत्तीसगढ में औद्योगीकरण एवं नगरीकरण - प्रो. एच. एस. राज, डी. एल. जायसवाल
25. छत्तीसगढ़ में जनजाति विकास –प्रो.एन.के. सलूजा, प्रों.आर.एस. साहू, प्रों.ए. के.
26. छत्तीसगढ़ में कृषि का विकास – मधुबाला कश्यप
27. उरॉव जनजाति की महिलाओं का आर्थिक-सामाजिक विकास जशपुर जिले के विशेष संदर्भ में - ए.पी. तिग्गा, के. कि
28. छत्तीसगढ़ की विकासकारी योजनायें - मीनाक्षी ठाकुर
29. छ.ग. राज्य के नवगठित कबीरधाम जिले के पुरातात्विक, धार्मिक, दर्शनीय व पर्यटन स्थलों का अध्ययन- कु.संतोषी
30. जनजाति क्षेत्रों में कृषि के बदलते आयाम : छ.ग. के विशेष संदर्भ में - शंकर युवनाती, रघुवीर उइ
31. छत्तीसगढ़ में शिक्षा का विकास – तृप्ती नायक
32. किसानों के सामाजिक जीवन पर औद्योगीकरण का प्रभाव ग्राम डोंगरिया कला, पण्डरिया के विषेश संदर्भ में - डॉ. जी.आर. भारती, डॉ.डी.पी. चंद्रवंशी, श्री कौशल
33. छत्तीसगढ़ में पर्यटन की संभावनाएं – डॉ. संजू पाण्डेय, डॉ. प्रवीण कुमार पाण्डेय
34. छत्तीसगढ़ में नगरीयकरण की वृद्धि से उत्पन्न समस्याएँ – रामप्रकाश डेहरिया
35. The Development, Probability, Difficulty of Neo Visualized Chhattisgarh - Lalita Chandravanshi
36. छत्तीसगढ़ के विकास में : छ.ग. लोक साहित्य का योगदान - आयशा कुरैशी
37. नवगठित छ.ग. राज्य में समावेशी विकास : समय की मांग - डॉ. (श्रीमती) अनुराधा सिंह
38. नवगठित छत्तीसगढ़, पुरातात्विक सामग्रियों से समृद्ध होता प्रदे - वर्षा सूर्यवंशी
39. छत्तीसगढ़ में जनजातीय विकास – डॉ.सीमा द्विवेदी, राकेश गुप्ता
40. C.G. In tribal development - Prof. Seema Jaysi
41. जशपुर जिले के पर्यटन 'कल आज और कल' – डॉ. ज्योतिरानी सिंह, डॉ. श्रीमती शशिकला सिन
42. जैव विविधता एवं पर्यटन विकास : संदर्भ छत्तीसगढ़ – डॉ. कृष्ण कुमार साहू, श्री पीयुष कुमार टान्डेय
43. छत्तीसगढ़ राज्य में ऊर्जा संसाधन : नियोजन एवं प्रबंधन : – कु. पूजा शर्मा, कु. सौम्या शर्मा, अतुल कुमार दु
44. Eco-tourism Development in Guru Ghasidas (Sanjay) National Park, Chhattisgarh. Dr. Ajay Kumar Rai, Shri Mukesh Chakradhar
45. छत्तीसगढ में जनजाति विकास – एस. के. जांगडे, पी.पी. लाठिया

Scanned with CamScanner

छत्तीसगढ़ का ऐतिहासिक विकास

श्रीमती जयंती बिस्वास
सहा. प्राध्या. (हिन्दी)
शास.महाविद्यालय छुईखदान (छ.ग.)

डॉ. उत्पल बिस्वास
सहा. प्राध्या. (संगीत)
त्रिपुरा केन्द्रीय विष्वविद्यालय (त्रिपुरा)

'धान का कटोरा', 'दण्डकारण्य', 'दक्षिण कोसल', 'रत्नगर्भा' आदि विविध नाम छत्तीसगढ़ की प्राकृतिक और ऐतिहासिक विशेषताओं से सबका ध्यान अपनी ओर सहज ही आकर्षित करते हैं। किसी भी अंचल प्रांत या राष्ट्र की ऐतिहासिकता उस अंचल, प्रान्त या राष्ट्र की सांस्कृतिक विरासत के साथ–साथ उसके गौरवशाली राजवंशों की परम्परा की ओर संकेत करते हैं। छत्तीसगढ़ के इतिहास का अध्ययन करने से यह बात स्पष्ट होती है कि शिवनाथ नदी के उत्तर और दक्षिण में 18–18 गढ़ (किले) बसे हुए थे। इन छत्तीसगढ़ों की स्थिति सन् 1973 में रायपुर के गजेटियर में उल्लेखित है ।

समय–समय पर यहाँ अनेक राजाओं ने शासन किया। इनके प्रयास से छत्तीसगढ़ की गरिमा अक्षुण्ण बनी रही। छत्तीसगढ़ के प्रमुख राजवंशों में मौर्य, सातवाहन, वाकाटक, गुप्त आदि उल्लेखित है। इनके अतिरिक्त क्षेत्रीय राजवंशों में राज्यर्षितुल्य कुलवंश, शरभपुरीय, पाण्डु, नल–नाग, छिन्दक नागवंश, फणि नागवंश, सोमवंश, कल्चुरी तथा मराठा शासकों का उल्लेख मिलता है। इन शासकों ने परिस्थितिवश निर्णय लेकर कभी तो स्वतंत्र शासक के पद पर अंचल की श्रीवृद्धि की और कभी अपने से अधिक शक्तिशाली शासक की अधीनता स्वीकार कर अंचल और राष्ट्र के चहुँमुखी विकास में अपना अमूल्य योगदान प्रदान किया।

ब्रिटिश कालीन भारतवर्ष में संपूर्ण छत्तीसगढ़ भी अंग्रेजी शासकों के प्रभाव से अछूता नहीं रहा। इनके खिलाफ यहाँ के शासकों के साथ–साथ देशप्रेमी युवक–युवतियों ने भी अपनी आवाज बुलंद की। यहाँ के निवासियों ने भी आजादी की लड़ाई में बढ़–चढ़ कर हिस्सा लिया तथा अपने प्राणों की आहुतियाँ भी दी। स्वातंत्र्योत्तर भारत में छत्तीसगढ़ की स्थिति म.प्र. के पश्चिम में उत्तर से दक्षिण तक विस्तारित प्राकृतिक संसाधन से संपन्न अविभाजित भूखण्ड था।

स्वतंत्रता प्राप्ति के 50 वर्ष बाद भी अपरिहार्य कारणों से इस अंचल का विकास शेष भारत की तुलना में नगण्य–सा दिखाई पड़ता था। अतः यहाँ की जनता और जनप्रतिनिधियों ने पृथक छत्तीसगढ़ राज्य की संकल्पना की और इसके लिए एकजुट होकर प्रयास किया। जिससे कि इस अंचल का भी सर्वांगीण विकास हो सके। भारत सरकार द्वारा 1 नवम्बर सन् 2000 को छत्तीसगढ़ की जनता को पृथक राज्य का सौगात प्राप्त हुआ।

तब से शासन प्रशासन और सामान्य जन मानव जीवन के विविध क्षेत्र को और अधिक उन्नत तथा शक्तिशाली बनाने के दिशा में अग्रसर हैं। जिससे कि यह नवोदित राज्य अपने विकास के साथ–साथ राष्ट्र के विकास में भी अहं भूमिका निभा रहा है।

–:–:–000–:–:–

Scanned with CamScanner